70 वां अंक – 2021

पर्यावरण

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
नई दिल्ली

प्रकृतिः रक्षति रक्षिता
Nature Protects if She is Protected

GREEN GOOD DEEDS

आर पी गुप्ता
R P Gupta

सत्यमेव जयते

सचिव
भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE

संदेश

मुझे प्रसन्नता है कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय अपनी हिंदी पत्रिका 'पर्यावरण' का 70वां अंक प्रकाशित करने जा रहा है। इस अंक में पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण, वन एवं वन्य जीव संरक्षण, जैव विविधता, ईको लेवलिंग आदि से संबंधित सारगर्भित लेखों एवं पर्यावरण से जुड़ी कुछ कविताओं को शामिल किया गया है। पत्रिका का उद्देश्य जन-सामान्य को पर्यावरण के लगभग सभी पहलुओं पर एक-साथ नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराना है।

आशा है यह पत्रिका आम जनता के लिए रोचक, ज्ञानवर्धक और प्रेरणादायक होगी। मैं इस पत्रिका के सफल प्रकाशन एवं इसमें अंतर्निहित उद्देश्यों की सफलता की कामना करता हूं।

(रामेश्वर प्रसाद गुप्ता)

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110 003 फोन: (011) 24695262, 24695265, फैक्स: (011) 24695270
INDIRA PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD, NEW DELHI-110 003 Ph.: (011) 24695262, 24695265, Fax: 011-24695270
E-mail: secy-moef@nic.in, Website: moef.gov.in

ऋचा शर्मा
RICHA SHARMA

सत्यमेव जयते

अपर सचिव
भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
Additional Secretary
Government of India
Ministry of Environment, Forest
and Climate Change

संदेश

यह हर्ष का विषय है कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय अपनी हिंदी पत्रिका 'पर्यावरण' का 70वां अंक प्रकाशित करने जा रहा है। पर्यावरण के इस अंक में अनेक उपयोगी और शोधपरक लेखों को संकलित किया गया है जो पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण, वन एवं वन्य जीव संरक्षण, जैव विविधता आदि के प्रति हमारी सोच एवं कर्तव्यों को प्रतिबिम्बित करते हैं। पत्रिका का उद्देश्य जन-सामान्य को पर्यावरण के लगभग सभी पहलुओं पर एक-साथ नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराना है।

पत्रिका के प्रकाशन के लिए मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं। आशा है इसमें प्रकाशित लेख देश के जन-मानस में पर्यावरण के प्रति जागरूकता पैदा करने में उपयोगी होंगे।

ऋचा

(ऋचा शर्मा)

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड़, नई दिल्ली-110 003, फोनः 011-24695242, ई–मेलः sricha@ias.nic.in
Indira Paryavaran Bhawan, Jor Bagh Road, New Delhi-110 003, Ph.: 011-24695242, E-mail: sricha@ias.nic.in

डॉ. सतीश चन्द्र गढ़कोटी
Dr. Satish Chandra Garkoti
वैज्ञानिक 'जी', सलाहकार एवं प्रभारी (राजभाषा)

भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE
इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड,
नई दिल्ली-110 003
INDIRA PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD,
NEW DELHI-110 003
Website : moef.nic.in

संदेश

'पर्यावरण' बड़ा व्यापक शब्द है, जिसका तात्पर्य उस समूची भौतिक एवं जैविक व्यवस्था से है, जिसमें कोई भी जीवन पुष्पित एवं पल्लवित होता है और अपनी स्वाभाविक प्रवृतियों का विकास करता है। तथापि, हम यह भी कह सकते हैं कि धरती पर जीवन के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए पर्यावरण, प्रकृति के लिए एक महत्वपूर्ण वरदान है और उसके संरक्षण की नितांत आवश्यकता है। वह प्रत्येक तत्व जिसका उपयोग जीवत रहने के लिए अत्यंत आवश्यक है, जैसे कि हवा, पानी, प्रकाश, भूमि, पेड़ एवं जंगल सभी पर्यावरण के अंतर्गत आते हैं। आदिकाल से ही पर्यावरण को सहेज कर रखना और उसका संरक्षण मानव के जीवन का अभिन्न अंग रहा है। इससे जहां एक ओर पर्यावरण संरक्षण के प्रति मानव की आस्था बढी है, वहीं दूसरी ओर स्वच्छ एवं सुदृढ पर्यावरण ने सम्पूर्ण मानव जाति को बनाए रखा है और विकास के पायदान पर पहुंचाया है। धीरे-धीरे समय के साथ मानव जीवन में परिवर्तन आया और बेहतर जीवन यापन के लिए मानव नये-नये आविष्कार करता गया और साथ ही बड़े-बड़े उद्योगों व इमारतों का निर्माण करते हुए जाने-अनजाने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता गया, नतीजन पर्यावरणीय समस्याएं जैसे प्रदूषण (वायु एवं जल), पारिस्थितिक तंत्र में परिवर्तन, जैव विविधता का संकटापन्न होना आदि का प्रत्यक्ष या परोक्ष में दिखना शुरू हो गया। यही नहीं उद्योगों से निकलने वाला हानिकारक धुआं, प्रकृति में व्याप्त वायु को दूषित करने के साथ-साथ मानव जीवन के स्वास्थ्य में भी प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है, क्योंकि सांस के माध्यम से जीव इसे ग्रहण कर रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए मानव को स्वार्थपरकता का परित्याग करना होगा और सामूहिक प्रयासों के द्वारा पर्यावरण को स्वस्थ और सुरक्षित रखने की दिशा में तत्काल प्रभाव से कार्य शुरू करना होगा। जन-मानस को प्रकृति के साथ जोड़ने तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति उन्हें जागरूक करने के उद्देश्य से मंत्रालय पर्यावरण पत्रिका का 70वां अंक प्रकाशित करने जा रहा है।

मुझे यह बताते हुए खुशी हो रही है कि पत्रिका के इस अंक में पर्यावरण से संबंधित उत्कृष्ट लेखों को शामिल किया गया है। ये लेख मंत्रालय, इसके क्षेत्रीय एवं अधीनस्थ कार्यालयों के अधिकारियों के साथ-साथ पर्यावरण से जुड़े अनेक विद्वजनों द्वारा लिखे गए हैं। लेखों के सम्पादन में हमें स्वर्गीय डॉ. आर. एस. रावल, निदेशक, पं. गोविंद वल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान, अल्मोड़ा, श्री राजपाल सिंह, निदेशक

भारतीय वन शिक्षा निदेशालय, देहरादून और डॉ. शेर सिंह सामंत, निदेशक, हिमालयी वन अनुसंधान संस्थान, शिमला का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ है जिसके लिए हम उनके आभारी हैं। पत्रिका के प्रकाशन को अंतिम रूप देने से पूर्व पत्रिका के प्रधान संपादक और निदेशक (राजभाषा) श्री सत्य प्रकाश जी के आकस्मिक निधन की अत्यंत दु:खद सूचना मिली। मैं पत्रिका परिवार की ओर से उनके दु:खद एवं असामयिक निधन पर अपनी गहरी संवेदना व्यक्त करता हूं। पत्रिका के लिए उनके महत्वपूर्ण योगदान एवं अथक प्रयासों को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा।

आशा है पत्रिका का यह अंक पर्यावरण के प्रति व्यावहारिक एवं उचित दृष्टिकोण बनाने में अपना योगदान देगा। मैं पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

सतीश चन्द्र गढ़कोटी

(डा. सतीश चन्द्र गढ़कोटी)

पर्यावरण

(पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की पत्रिका)(अंक 70, 2021)

प्रधान संरक्षक

श्री रामेश्वर प्रसाद गुप्ता

सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

संरक्षक

श्रीमती ऋचा शर्मा

अपर सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

सतत मार्गदर्शन

डॉ. सतीश चंद्र गढ़कोटी

वैज्ञानिक 'जी', सलाहकार एवं प्रभारी (राजभाषा)

प्रधान संपादक

स्वर्गीय श्री सत्य प्रकाश

निदेशक (राजभाषा)

संपादक

डॉ. शेर सिंह सामंत

निदेशक, हिमालयी वन अनुसंधान संस्थान, शिमला

श्री राजपाल सिंह

निदेशक, भारतीय वन शिक्षा निदेशालय, देहरादून

स्व. डॉ. आर.एस.रावल

निदेशक

गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान, अल्मोड़ा

शब्द शोधन एवं व्याकरण परिमार्जन

श्रीमती प्रतिमा शर्मा, निजी सचिव

श्री प्रवीण कुमार, वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी

सुश्री नमिता कौशिक, कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी

टंकण सहयोग

श्री किरण पाल, कार्यालय सहायक

श्री दिनेश चन्द, कार्यालय सहायक

श्री संजय निगम, कार्यालय सहायक

आवरण पृष्ठ पर छाया चित्र श्री रितेश जोशी, वैज्ञानिक 'ई' के सौजन्य से

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल उनके विचारों से सहमत हो। लेख/कविताओं की मौलिकता एवं प्रमाणिकता के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, अलीगंज, नई दिल्ली

पर्यावरण पत्रिका 70वां अंक–2021

अनुक्रम

क्र.सं.	विषय	लेखक	लेख / कविता	पृष्ठ
1.	वन्यजीव अपराध एवं वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो	एस. वी. शेषाद्रि	लेख	1
2.	सागर क्षेपण : कारण, प्रभाव और समाधान	डॉ. अनूप चतुर्वेदी	लेख	3
3.	प्लास्टिक प्रदूषण : समस्या एवं निवारण	अर्जुन प्रसाद तिवारी, शक्ति कुमार सिंह एवं नाज रिज़्वी	लेख	5
4.	स्वच्छ पर्यावरण हेतु हमारी उदासीनता एवं पुनः जागृति	रामेश्वर	लेख	10
5.	जल संरक्षण में आपसे अपेक्षा	डॉ. दिलीप कुमार मार्कण्डेय	लेख	12
6.	पर्यावरण संबंधी सामान्य जानकारी	डॉ. दिलीप कुमार मार्कण्डेय	लेख	16
7.	पर्यावरण एवं उसकी आवश्यकता	शिवदान सिंह राजपूत एवं सचिव तंवर	लेख	18
8.	उत्तराखंड में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव	डॉ. गिरीश चंद्र सिंह नेगी	लेख	20
9.	पर्यावरणीय पर्यटन	डॉ. दीपक कोहली	लेख	24
10.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण संरक्षण	डॉ. दीपक कोहली	लेख	28
11.	ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार जड़ी–बूटियों की खेती	डॉ. बिनीता देवी, डॉ. आशुतोष कुमार और डॉ. के.आर. मौर्य	लेख	34
12.	मिनी गौरैया	मेहता नगेन्द्र सिंह	लेख	37
13.	गजल	मेहता नगेन्द्र सिंह	कविता	39
14.	पानी	प्रो. चित्र भूषण श्रीवास्तव	कविता	39
15.	नदी की मनोव्यथा	प्रो. चित्र भूषण श्रीवास्तव	कविता	40
16.	पर्यावरण संरक्षण के लिए सौर ऊर्जा	विवेक रंजन श्रीवास्तव	लेख	41
17.	पर्यावरण, वन एवं प्रदूषण	डॉ. राजेश कुमार ठाकुर	लेख	45
18.	कालिया का मदमर्दन..... नदियों में जल प्रदूषण के विरुद्ध पौराणिक संदेश नांदी पाठ ... नेपथ्य से	विवेक रंजन श्रीवास्तव	लेख	51
19.	पर्यावरण की प्राणहिता–'मानवीय सोच...!'	अखिलेश सिंह श्रीवास्तव 'दादूभाई'	लेख	53
20.	लोक परंपराओं में पर्यावरण	शशि खरे	लेख	57
21.	पर्यावरण और विकास	प्रवीर दुबे	कविता	60
22.	पर्यावरण का आवरण	विकास शर्मा	कविता	60
23.	पर्यावरण में प्लास्टिक प्रदूषण : कारण एवं निदान	डॉ. राजेश कुमार मिश्रा	लेख	61
24.	परागण सेवाएं एवं जलवायु परिवर्तन	अखिल कुमार शर्मा	लेख	65
25.	पश्चिमी हिमालय में बंजर भूमि सुधार हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रजातियां	डॉ. गिरीश चंद्र सिंह नेगी	लेख	67

क्र.सं.	विषय	लेखक	लेख / कविता	पृष्ठ
26.	कैर के प्रसंस्करण, संरक्षण और पैकेजिंग के नवीनतम तरीके एवं उनका पोषक तत्वों पर प्रभाव	माला राठौड़	लेख	71
27.	कोविड–19 लॉकडाउन की स्थिति में पर्वतीय क्षेत्र में वायु प्रदूषण का स्तर : एक आकलन	जगदीश चन्द्र कुनियाल, शीतल चौधरी एवं प्रशांत कुमार चौहान	लेख	73
28.	जैविक कीट नियंत्रण में परभक्षी कीट क्राईसोपरला, कार्निया (लेसविंग) की भूमिका	सुभाष चंद्र, नेहा शर्मा एवं भूमिका कंवर	लेख	75
29.	सारस जैवविविधता केंद्र स्थानीय समुदाय द्वारा पक्षी संरक्षण में सार्थक प्रयास	डॉ. मनोज कुमार शर्मा, डॉ. संगीता राजगीर एवं मो. खालिक	लेख	77
30.	जंगल की फरियाद	सुशील कुमार चौरे	कविता	79
31.	इको लेबलिंग प्रमाणन–भारत में ''ईकोमार्क''	स्माइली	लेख	80
32.	राष्ट्रीय प्राणी उद्यान की पक्षी विविधता	रमेश कुमार पांडेय, विभव श्रीवास्तव एवं प्रियंका चौधरी,	लेख	83
33.	सूखी ही बहने को मजबूर नदियां	डॉ. अनूप चतुर्वेदी	लेख	89
34.	वन्यजीवों और जानवरों की तस्करी : कैसे लगे लगाम????	डॉ. पूर्णिमा शर्मा	लेख	91
35.	'स्वच्छ भारत अभियान': पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास की ओर बढ़ते कदम	कंचन पुरी, मीनाक्षी रावत, रितेश जोशी एवं सतीश चंद्र गढ़कोटी	लेख	93
36.	पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) और भारत में पर्यावरण मंजूरी प्रक्रिया	डॉ. आर. बी. लाल और डॉ. सुजीत कुमार बाजपेयी	लेख	98

वन्यजीव अपराध एवं वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो

एस.वी. शेषाद्रि
वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो

वन्यजीव अपराध वह अपराध है जो किसी भी वन्यजीव के संरक्षण के लिये बनाये गये क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय कानून अथवा कानूनों के उल्लंघन का कृत्य है जिसके तहत वन्यजीव को बिना अनुमति के अपने कब्जे में लेना, उनको मारना या शिकार करना, व्युत्पन्नों को निकालना तथा परिवहन करना, व्यापार करना या उपभोग करना इत्यादि शामिल है।

वन्यजीव का तात्पर्य है कि किसी भी क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले वन्य जीव, जंतु तथा वनस्पति। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 की धारा 2(37) के अनुसार वन्यजीव के अंतर्गत कोई पशु, जलीय अथवा स्थलीय वनस्पति जो कि किसी आवास का हिस्सा है, शामिल है।

वन्यजीव के महत्त्व को संवैधानिक अधिवेश के प्रकाश में भी देखा जाना चाहिए। पर्यावरण का संरक्षण, सुधार तथा वनों और वन्यजीवों की सुरक्षा करना भारत के संविधान के राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों (अनुच्छेद 48 क) में शामिल हैं।

संविधान का अनुच्छेद 51 क (छ) कहता है कि वनों, झीलों, नदियों, और वन्यजीवों सहित प्रकृति पर्यावरण का संरक्षण और सुधार करना तथा जीवित प्राणियों के प्रति दया करना, प्रत्येक नागरिक का मौलिक कर्त्तव्य है। पशुओं, वनों और जंगली पशुओं और प्राणियों के (संरक्षण) प्रति क्रूरता की रोकथाम, भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 के अधीन–समवर्ती सूची III अनुसूची सात में दी गयी है।

वन्यजीव अपराध में वन, पशु एवं पादप क्रूरता एवं पीड़ा के शिकार होते हैं, जिसकी वजह से किसी भी क्षेत्र एवं देश के पारिस्थितिक तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वन्यजीव सम्पदा एक राष्ट्रीय धरोहर है। इस प्रकार इस वन्यजीव अपराध से राष्ट्र के प्राकृतिक सम्पदा की हानि होती है, चूंकि इस अपराध से वन्यजीव व्यापार तक विशाल राशि शामिल होती है, इसे एक गंभीर आर्थिक अपराध के रूप में समझा जाना चाहिए।

वन्य प्राणियों का शिकार तथा अवैध व्यापार एक प्रमुख वन्यजीव अपराध हैं। इसे अंजाम देने के लिए तैयारी, सहायता, कब्ज़ा, परिवहन, संसाधन आदि सहायक अपराध के रूप में देखे जा सकते हैं। अतः वन्यजीव अपराधियों को उसके कृत्य के आधार पर दो भागों में बाँट सकते हैं।

(क) आखेटक अथवा शिकारी जो जंगली पशुओं को मारते हैं अथवा पकड़ते हैं, बंदी बनाते हैं या फिर जंगली पादपों को एकत्र करते हैं जो कि अपने स्वयं के लिए उपयोग करते हैं तथा व्युत्पन्नो को धन अर्जन करने के लिए विक्रय करते हैं, वन्यजीव को बंदी बनाते हैं।

(ख) दूसरे समूह में ऐसे अपराधी हैं जो शिकार करवाते हैं तथा उत्पाद को एकत्र कर राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय व्यापार समूह तक पहुंचा कर आर्थिक लाभ हासिल करते हैं। जो कि प्रभावशाली समूह का निर्माण करते हैं एवं अत्याधिक संगठित तरीकों से अपने अपराध को अंजाम देते हैं एवं अधिकतम वाणिज्यिक लाभ कमाते हैं।

प्रथम समूह यह एक ऐसा अपराधिक समूह है जो कि कमजोर आर्थिक परिस्थितियों के कारण अथवा अपने रूढ़िवादी एवं सामाजिक व्यवहार की वजह से इस अपराध में लिप्त है। ऐसे समूह को शिक्षित कर समाज के मुख्यधारा में लाया जा सकता है। परन्तु द्वितीय समूह एक ऐसा समूह है जिसकी ऐसी कोई भी मजबूरी नहीं है तथा वह सिर्फ अधिकाधिक वाणिज्यिक लाभ हेतु लालच में कार्य करते हैं तथा काफी संगठित हैं जिसके विरूद्ध विधि संगत कठोर कार्यवाही की आवश्यकता है।

वन्यजीव अपराध मुख्यधारा में घटित होने वाले अपराधों से भिन्न है जिसकी रोकथाम के लिए सामाजिक चेतना एवं सहानुभूति की अति आवश्यकता है। सामान्य जनता बहुधा वन्यजीव अपराधों द्वारा प्रभावित अथवा बाधित नहीं होती है एवं अपराध स्थल भी स्थान विशेष से जुड़े रहते हैं जो कि वन्यजीव के उपलब्ध क्षेत्र जैसे कि वन, राष्ट्रीय उद्यान या अभयारण्य होता है। इसमें पीड़ित जीव अपनी कुंठा को व्यक्त नहीं कर पाता है ना ही उसके परिवारजन किसी भी सक्षम अधिकारी के समक्ष अपनी फरियाद कर सकता है, ताकि कानूनावश्यक कार्यवाही की जा सके और अपराधी दण्डित किया जा सके। वन्यजीव अपराध को सामाजिक दृष्टि से अपराध माना ही

नहीं जाता है जिसका कारण हमारे व्यवहार में प्राणियों को बंदी बनाकर अपने घरों में शौकिया तौर पर रखने की प्रवृत्ति है। जो कि पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। पारंपरिक अपराधों एवं उससे सम्बंधित घटना आम लोगों के मस्तिष्क में भय का भाव भर देती है कि कोई भी व्यक्ति इस तरह के अपराध का शिकार हो सकता है इसलिए इससे सरोकार रखते हैं तथा इसकी जानकारी भी देते हैं तथा रोकथाम में सहयोग भी करते हैं। अतः विषय की जानकारी को सही तरह से परिभाषित कर समाज को अपराध बोध कराना भी जरुरी है ताकि जंगली पशुओं के प्रति हो रहे कृत्य का अपराध बोध समाज के हर व्यक्ति को हो, ऐसे में अगर कोई व्यक्ति इस प्रकार के वन्यजीव अपराध में लिप्त हो तो उसे मुख्यधारा के अपराध के अपराधी की तरह ही समाज उसे अपराधी समझे ताकि इस तरह की पुनरावृति से बचा जा सके।

वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 वन्यजीव अपराध प्रवर्तन के लिए देश का एकमात्र संरक्षण कानून है। वन्यजीव अपराधों के संबध में राज्य के वन और पुलिस विभाग प्रमुख प्रवर्तन एजेंसिया हैं। इन वन्यजीव अपराधों को प्रभावी तरीके से रोकने तथा पकड़ने हेतु भारत सरकार द्वारा वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो का गठन वर्ष 2008 में एक बहुआयामी संस्था के रूप में किया है जिसमें वन्यजीव अपराध की जाँच वैधानिक एवं विधि पूर्ण हो इस नाते सक्षम अधिकारी को पुलिस सेवा, वनसेवा एवं सीमाशुल्क से भी लिये जाने का प्रावधान है। संबधित राज्य सरकार द्वारा वन अपराधिक जाँच में मदद मांगने पर या उचित कार्यवाही समझने पर वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो (WCCB) द्वारा भी वन्यजीव अपराधों की जाँच की जाती है।

वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो द्वारा ना सिर्फ अंतर्राज्यीय अपराधों की जाँच की जाती है अपितु अंतरराष्ट्रीय सीमा पार व्यापार एवं तस्करी की भी जाँच की जाती है जिसमें अन्य देशों के प्रवर्तन कार्यालय एवं अंतरराष्ट्रीय पुलिस (INTERPOL) की भी मदद ली जाती है। अंतरराष्ट्रीय होने वाले वन्यजीव से संबधित व्यापार भारत के व्यापार नीति के तहत या तो सीमित हैं या प्रतिबंधित हैं भारत द्वारा लुप्तप्राय प्रजातियों को बचाने हेतु अंतरराष्ट्रीय मंच पर लुप्तप्राय जंगली जीवो और वनस्पतियों की प्रजातियों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार समझौते (CITES) पर भी हस्ताक्षर किये गये हैं, जिसमें 183 से अधिक देश शामिल हैं। अतः इस कार्य हेतु WCCB के सभी क्षेत्रीय कार्यालय चोरी छुपे तस्करी किये जाने वाले वन्यजीव पदार्थों को पता लगाने तथा अपराध दर्ज करने हेतु सीमाशुल्क तथा राजस्व सूचना निदेशालय के साथ मिलकर विकास बिन्दुओं पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये सतत अग्रसर है तथा समाज के सभी घटकों से अपने राष्ट्रीय वन सम्पदा को संरक्षित करने के लिये सहयोग की अपेक्षा करती है।

''जय हिन्द''

सागर क्षेपण : कारण, प्रभाव और समाधान

डॉ. अनूप चतुर्वेदी,
केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोड, भोपाल

प्रस्तावना

महासागर पृथ्वी का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसमें कई सारे महत्वपूर्ण और मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध है। महासागर पृथ्वी पर मौजूद असंख्य जीव जंतुओं का निवास स्थान है जैसे कि शैवाल, आक्टोपस, स्टार फिश, अनगिनत प्रजाति की मछलियाँ, कछुए आदि। इनमें से कई सारे ऐसे जीव हैं जो पृथ्वी के सबसे बड़े स्तनधारियों के रुप में भी जाने जाते हैं। पृथ्वी पर बहने वाली सभी नदियों का अंतिम गंतव्य स्थान महासागर ही होता है और सभी नदियाँ अपने अथाह जल व उसमें घुलित प्रदूषकों के साथ अनवरत इसमें समाहित होती रहती हैं।

नदियों के किनारे बसे शहरों से अत्यधिक मात्रा में अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न होता है जो कि अमूमन नदियों में प्रवाहित कर दिया जाता है, अंततः महासागर की जैव विविधता इस प्रदूषण के कारण प्रभावित होती है। यही कारण है कि दिन–प्रतिदिन महासागरों में प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, जिससे समुद्र में रहने वाले जीव–जन्तुओं के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है और अब उनके अस्तित्व पर भी ख़तरा मंडरा रहा है।

सागर क्षेपण का अर्थ
(Meaning of Ocean Dumping)

सामान्य भाषा में सागर क्षेपण का अर्थ रसायनों, अपशिष्ट, गंदे पानी और मलबों को महासागरों में फेंक दिये जाने से है, जो कि समुद्री जैव विविधता के लिए अत्यधिक हानिकारक है। यही कारण है कि सागर क्षेपण को समुद्री प्रदूषण के मुख्य कारक के रुप में जाना जाता है, क्योंकि अनुपयोगी रसायन, रंजक और उद्योग जनित खतरनाक अपशिष्ट आदि का भी निस्तारण समुद्र में कर दिया जाता है जो समुद्री जीवन के लिए चिंताजनक है।

सागर क्षेपण से जुड़े हुए तथ्य
(Facts Related to Ocean Dumping)

चूंकि महासागरीय प्रदूषण का हमारे जीवन पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पड़ता है, इसलिए हम इसे ज्यादा महत्व नहीं देते हैं, लेकिन यह हमारे भोजन श्रृंखला का हिस्सा है अतः यह हमें अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर रहा है। प्लास्टिक एक ऐसा सामान्य तत्व है, जो काफी अधिक मात्रा में समुद्रों और महासागरों को प्रदूषित करता है। इसे काफी हानिकारक माना जाता है क्योंकि न तो इसे बड़ी मात्रा में पुनर्चक्रण किया जा सकता है न ही इसका पुनर्प्रयोग किया जा सकता है। कई बार समुद्री जीव इसे अपना भोजन समझकर खा लेते हैं जो कि उनके लिए जानलेवा बन जाता है। समुद्री भोजन जिसमें मुख्य घटक मछली व झींगा होते हैं अब यह उनके माध्यम से माइक्रो प्लास्टिक के रूप में मनुष्य के भोजन श्रृंखला में प्रवेश कर रहा है तथा कैंसर जैसी घातक बीमारियों का जनक बन रहा है। इसलिए पानी में हमारे द्वारा जो प्लास्टिक फेंका जाता है वह खुद हमारे स्वास्थ्य के लिए भी काफी हानिकारक सिद्ध होता जा रहा है।

कई बार हम मनुष्य सोचते हैं कि विश्व का अधिकतर हिस्सा पानी से घिरा हुआ है, इसलिए भूमि पर उत्सर्जित प्रदूषक आसानी से पानी में विलय हो जायेंगे और कुछ समय बाद पूर्णतः समाप्त हो जायेंगे, परन्तु यह भ्रम है। यह प्रदूषक पानी में कभी भी पूर्ण रुप से समाप्त नहीं होते हैं वरन खाद्य श्रृंखला को ही नुकसान पहुंचाते हैं। वह जीव–जन्तु जो खाद्य श्रृंखला के मध्य में स्थित होते हैं, वह इन हानिकारक प्रदूषकों द्वारा सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। खाद्य श्रृंखला वह प्रक्रिया है, जिसमें छोटे जंतुओं को बड़े जंतुओं द्वारा खाया जाता है। खाद्य श्रृंखला में ऊपरी चरण में आने वाले जीव जन्तु यह प्रदूषित भोजन सबसे अधिक मात्रा में खाते हैं जो उनके जीवित रहने की संभावना को कम करते हैं।

सागर क्षेपण के कारण
(Causes of Ocean Dumping)

आज के समय में महासागरीय प्रदूषण एक महत्वपूर्ण समस्या बन गया है। इसके लिए हम सबको मिलकर प्रयास करने की आवश्यकता है क्योंकि कई सारी मानवीय गतिविधियों द्वारा महासागरों की साफ–सफाई प्रभावित होती है। महासागरीय प्रदूषण के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:–

- विषाक्त कचरे का निस्तारण
- औद्योगिक रसायनों का निस्तारण
- रेडियोधर्मी पदार्थों का निस्तारण

- समुद्री खनन
- औद्योगिक व घरेलू सीवेज
- खतरनाक व हानिकारक कचरे का अवैध निस्तारण
- तेल के रिसाव से फैलने वाला प्रदूषण

सागर क्षेपण के प्रभाव (Effects of Ocean Dumping)

कई टैंकरों और समुद्री जहाजों द्वारा महासागरों में फैलाया गया तेल समुद्री जीवों के श्वसन तंत्र और गिल्स को जाम कर देता है, जिससे उनके अंगों को पानी में मौजूद ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। इसके साथ ही यह उनकी खाद्य तथा प्रजनन प्रक्रिया जैसी गतिविधियों को भी प्रभावित करता है तथा उनके शरीर के तापमान को कम कर देता है।

जब ये विषाक्त प्रदूषक महासागर के पानी में मिल जाते हैं और जीवों द्वारा भोजन के रुप में ग्रहण कर लिये जाते हैं, तो यह मनुष्यों को भी प्रभावित करते हैं क्योंकि इन समुद्री जीवों को हम अपने आहार के रुप में ग्रहण करते हैं। इससे कई सारी हानिकारक बीमारियों होने की संभावना बढ़ जाती हैं, जिनमें हेपेटाइटिस, कैंसर और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में समस्या आदि प्रमुख हैं।

सागर के पानी को प्रदूषित करने वाले अधिकांश धूल के कण महासागर में घुलने के बजाए बहुत लंबे समय तक पानी में उपस्थित रहते हैं। जैसे–जैसे इन प्रदूषकों और सामग्रियों में क्षरण होता है, वे समुद्र के वायुमंडल में मौजूद ऑक्सीजन को अवशोषित करने लगते हैं। जिसके कारण समुद्र के पानी में मौजूद ऑक्सीजन के स्तर में कमी होने लगती है और यह समुद्री जैव विविधता के लिए कई तरह की समस्याएं उत्पन्न कर देता है।

सागर क्षेपण का समाधान (Solutions of Ocean Dumping)

महासागरीय जैव विविधता को बनाये रखने के लिए कई सारे कदम उठाये जा सकते हैं। इस विषय में हमें खेती करने वाले किसानों को यह समझाने की आवश्यकता है कि उन्हें जैविक खेती की पद्धति को अपनाना चाहिए, जिसमें अतिरिक्त उर्वरक और कीटनाशक बहते पानी के साथ समुद्र में मिलने से रूक सकते हैं। फसलों का नियमित आवर्तन करते रहने से भी रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम से कम किया जा सकता है।

इसी क्रम में तेल का परिवहन करने वाले जहाजों और कंटेनरों को निर्देशित किया जा सकता है कि वह यात्रा से पहले अपने कंटेनरों की जांच कर लें कि उनमें रिसाव की समस्या तो नहीं है, जिससे इनके द्वारा समुद्र में तेल रिसाव जनित प्रदूषण न फैले।

महासागर के तटीय क्षेत्रों पर स्थित उद्योगों द्वारा किसी भी तरह के अपशिष्ट का निस्तारण महासागर में न किया जाय।

महासागर के पर्यावरण संरक्षण हेतु बनाए गए नियमों को कठोरता से लागू किया जाना चाहिए।

हमेंशा अपने आस–पास के स्थानों और समुद्री तटों को साफ–सुथरा रखना चाहिए।

निष्कर्ष

विगत समय में समुद्री प्रदूषण में कमी को देखा गया है, यदि सभी ने साथ मिलकर महासागर से प्रदूषण को समाप्त करने का कार्य नहीं किया तो इसके परिणाम भविष्य में काफी विध्वंसक हो सकते हैं। आज के समय में प्रदूषण हमारे लिए सबसे बड़ी समस्या बन चुका है और यदि हमने इसे नियंत्रित करने हेतु उपाय नहीं किये तो हमारी भावी पीढ़ियों को इसका नुकसान उठाना पड़ेगा। इसलिए हमें समुद्र में अपशिष्ट निस्तारण के इस आसान और पारंपरिक कार्य को बंद करना होगा तथा इसे रोकने के लिए कई महत्वपूर्ण व कठोर कदम उठाने होंगे, जिससे कि सागर क्षेपण जैसी पर्यवारणीय समस्या को समय रहते नियंत्रित किया जा सके।

प्लास्टिक प्रदूषण : समस्या एवं निवारण

अर्जुन प्रसाद तिवारी,
शक्ति कुमार सिंह एवं नाज रिज़्वी
राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्राहलय

परिचय

आधुनिक युग को यदि हम प्लास्टिक युग कहें तो इसमें कोई संदेह नहीं है। हमारी गृहोपयोगी वस्तुओं जैसे बर्तन, जूते, थैले, कंघे, बाल्टी, टिफिन, पानी बोतल, टूथब्रश, जल पाईप आदि से लेकर कृषि, चिकित्सा, भवन–निर्माण, विज्ञान, सेना, शिक्षा, मनोरंजन, अंतरिक्ष कार्यक्रमों और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में किसी न किसी रूप में प्लास्टिक का उपयोग तथा प्रयोग किया जा रहा है। आरंभ में प्लास्टिक प्राकृतिक सामग्री जैसे, प्राकृतिक रबर, नाइट्रोसेल्यूलोस और कोलेजन से बनाया गया। सन् 1600 ई.पू. में मीजोअमेरिकन्स द्वारा प्राकृतिक रबर का इस्तेमाल गेंदों, बैंड और मूर्तियों के निर्माण में किया गया। मानव निर्मित प्लास्टिक का आविष्कार सन् 1862 में इंग्लैंड के अलेक्जैन्डर पार्केस (Alexander Parkes) द्वारा किया गया था। उन्हीं के नाम पर उन दिनों प्लास्टिक का नाम पार्केजाइन (Perkesine) था। इसके बाद बेल्जियम के अमेरिकी नागरिक डॉ. लियो हेंड्रिक बैक्लैंड ने व्यावसायिक पैमाने पर प्लास्टिक के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन 1910 में फीनॉल तथा फार्मेल्डिहाइड की अभिक्रिया में कुछ परिवर्तन करके बेकलैंड ने एक ऐसे प्लास्टिक का निर्माण किया जिसका उपयोग कई उद्योगों में किया जा सकता था। बेकलैंड के नाम पर ही इस नए प्लास्टिक का नामकरण बेकेलाइट रखा गया। बाद में प्लास्टिक निर्माण के बहुत से पदार्थ तथा कई नये तरीके खोजे गए जिससे विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक वर्तमान में बनाए जाते हैं। प्लास्टिक मुख्य रूप से पेट्रोलियम पदार्थों से उत्सर्जित सिंथेटिक रेजिन से बना है। रेजिन में प्लास्टिक मोनोमर्स अमोनिया और बेंजीन का संयोजन करके बनाया जाता है। प्लास्टिक में क्लोरीन, फ्लोरीन, कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और सल्फर के अणु शामिल हैं।

आरंभ में हमारी जरूरत की चीजें अन्य पदार्थों जैसे लोहा, ताँबा, जस्ता, कांसा, पीतल या लकड़ी से बनाई जाती थीं, लेकिन वर्तमान में प्रायः सभी चीजें प्लास्टिक से या इसके प्रयोग से बनाई जा रही हैं, क्योंकि यह जल और हवा के साथ प्रतिक्रिया नहीं करता जिससे अन्य पदार्थों से बनी वस्तुओं की तरह आसानी से सड़ता नहीं है, और साथ ही भार में हल्का, मज़बूत, टिकाऊ और अन्य पदार्थों से बनी वस्तुओं की अपेक्षा सस्ता भी है। प्लास्टिक की इसी विशेषता के कारण इसके अत्यधिक उपयोग से उत्पन्न कचरे ने मनुष्य, जीव–जंतुओं और पर्यावरण के लिए एक गंभीर वैश्विक समस्या का रूप ले लिया है। इसकी अधिकता ने आज समुद्रों, नदियों, पहाड़ों, भूमि तथा प्राकृतिक स्थलों को भी प्रदूषित कर दिया है। इन्हीं बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत लेख में प्लास्टिक कचरे से पैदा हुए गंभीर मुद्दे के अलग–अलग पहलुओं को छूने के साथ साथ इसके निवारण एवं उचित प्रबंधन हेतु जन–साधारण को जानकारी उपलब्ध कराने तथा जागरूक करने का प्रयास किया गया है।

प्लास्टिक प्रदूषण

पर्यावरण में भारी मात्रा में प्लास्टिक कचरे का संचय होना ही प्लास्टिक प्रदूषण (Plastic pollution) है। प्लास्टिक कचरे की मात्रा दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, क्योंकि प्लास्टिक नॉन–बॉयोडिग्रेडेबल होता है और प्लास्टिक का यह गुण पर्यावरण के लिये खतरा उत्पन्न कर रहा है। आपको बता दें कि नॉन–बॉयोडिग्रेडेबल ऐसे पदार्थ होते हैं जिनका जीवाणु, कवक या अन्य सूक्ष्म जीवों की क्रियाओं द्वारा अपघटन नहीं होता और ये पदार्थ मिट्टी या जल में हजारों सालों तक जमा रहते हैं। पूरी दुनिया के देशों में प्लास्टिक का इस्तेमाल इतना बढ़ चुका है कि वर्तमान में प्लास्टिक के रूप में निकलने वाला कचरा सभी देशों के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। प्लास्टिक को फेंकना और जलाना दोनों ही पर्यावरण के लिए हानिकारक है।

पर्यावरण में प्लास्टिक अपशिष्ट की उपलब्धता

वैश्विक रूप से प्रत्येक वर्ष लगभग 500 अरब प्लास्टिक थैलों का उपयोग होता है। **'वर्ल्ड वॉच इंस्टीट्यूट'** के अनुसार लगभग 100 अरब प्लास्टिक थैले अकेले अमेरिका में उपयोग होते हैं। वर्ष 1950 से अब तक वैश्विक स्तर पर 8.3 से 9 अरब मीट्रिक टन प्लास्टिक का उत्पादन हो चुका है जिसका 79 फीसदी भाग अभी भी पर्यावरण में मौजूद है। प्लास्टिक के कुल उत्पादन का लगभग 40 फीसदी भाग सिंगल यूज प्लास्टिक के रूप में किया जाता है और अब तक उत्पादित कुल प्लास्टिक का लगभग 44 फीसदी भाग वर्ष 2002 के बाद बनाया गया। समुद्रों में सर्वाधिक प्लास्टिक प्रदूषण

फैलाने वाले 20 देशों में से भारत 12वें स्थान पर है और इनमें दक्षिण–पूर्व एशियाई देश, श्रीलंका, चीन, मिस्र, बांग्लादेश, नाइजीरिया व दक्षिण अफ्रीका भारत से भी ऊपर हैं। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय शहरों में प्रतिदिन लगभग 15000 टन प्लास्टिक अपशिष्ट निकलता है जिसमें से सिर्फ लगभग 9000 टन प्लास्टिक कचरा एकत्रित करके रिसाईकल किया जाता है, शेष बचा हुआ लगभग 6000 टन पर्यावरण को प्रदूषित कर रहा है। शीर्ष 7 राज्य जो सबसे ज्यादा प्लास्टिक कचरा फैला रहे हैं। महाराष्ट्र (4.69 लाख टन), गुजरात (2.69 लाख टन), तमिलनाडु (1.50 लाख टन), उत्तर प्रदेश (1.30 लाख टन), कर्नाटक (1.29 लाख टन) आन्ध्र प्रदेश (1.28 लाख टन), तेलंगाना (1.20 लाख टन) है। सर्वाधिक प्लास्टिक कचरा फैलाने वाले 24 राज्यों में महाराष्ट्र अव्वल है, जो देश का करीब 30 प्रतिशत प्लास्टिक कचरा फैला रहा है। वहीं उत्तर प्रदेश चौथे स्थान पर है जबकि गुजरात दूसरे नम्बर पर है।

विभिन्न अपशिष्ट पदार्थो का जैव–विघटन

अपशिष्ट पदार्थों से आशय उन पदार्थों से है जिन्हें उपयोग के पश्चात अनुपयोगी मानकर फेंक दिया जाता है। इनमें घरेलू अपशिष्ट जैसे कागज, गत्ता, कपड़ा, प्लास्टिक, लकड़ी, रबर, धातु के टुकड़े, सब्जियों एवं फलों के छिलके, सड़े–गले पदार्थ, सूखे फूल, पत्तियाँ तथा उद्योगों से निस्तारित तरल पदार्थ एवं ठोस अपशिष्ट आदि शामिल हैं। इन अपशिष्ट पदार्थों के भराव क्षेत्र में जैव–विघटन की अवधि को निम्नानुसार तालिका 1 में दर्शाया गया है:–

तालिका–1 विभिन्न अपशिष्ट पदार्थों की जैव–विघटन अवधि

क्र.सं.	सामग्रियां	जैव–विघटन अवधि
1	कागज तौलिया	2 से 4 सप्ताह
2	केले का छिलका	3 से 4 सप्ताह
3	पेपर बैग	1 माह
4	कार्ड बोर्ड	2 माह
5	रूई के दस्ताने	3 माह
6	प्लाईवुड	1 से 3 साल
7	दूध के कार्टन	25 से 40 साल
8	टिनडेड स्टील कैन	50 साल
9	फोमेड प्लास्टिक कप	50 साल
10	चमड़े के जूते सोल	50 से 80 साल
11	प्लास्टिक के कंटेनर	50 से 80 साल
12	अल्यूमीनियम कैन	200 से 500 साल
13	प्लास्टिक की बोतलें	400 साल
14	प्लास्टिक का थैला	200 से 1000 साल

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्लास्टिक कचरा सड़ने में सबसे ज्यादा समय लेता है। आमतौर पर प्लास्टिक की वस्तुओं को भराव क्षेत्र में जैव–विघटन होने में 200 से 1000 साल तक का समय लगता है। प्लास्टिक अपशिष्ट की सबसे ज्यादा जैव–विघटन अवधि से स्पष्ट है कि प्लास्टिक अपशिष्ट आज पर्यावरण के प्रमुख खतरों में से एक है।

प्लास्टिक प्रदूषण के कारण

प्लास्टिक प्रदूषण का मुख्य कारण मानव द्वारा बड़े पैमाने पर प्लास्टिक का निर्माण और अनुचित प्रबंधन, रीसाइक्लिंग तथा निस्तारण की विधियों को जाने बिना अत्यधिक उपयोग करना है। इसके नॉन–बॉयोडिग्रेडेबल गुण के कारण पानी या मिट्टी में इसका विघटन नहीं होता

है और इसे जलाने पर कई प्रकार की जहरीली गैसों का उत्सर्जन होता है जो वायु प्रदूषण के लिए खतरा उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त प्लास्टिक प्रदूषण के कई कारण हैं जैसे सिंगल यूज़ प्लास्टिक बैग का बहुतायत में उपयोग, भराव क्षेत्र और मिट्टी पर प्लास्टिक उत्पादों का निस्तारण, प्लास्टिक उत्पादों के पुनर्चक्रण और पुनः प्रयोग में विफलता, पानी एवं अन्य पेय पदार्थ की बोतलें, प्लास्टिक से बनी घरेलू वस्तुएँ जैसे कुर्सी, टेबल, खिलौने, बाल्टियाँ इत्यादि का अत्यधिक उपयोग। खाद्य पदार्थों की पैकिंग की पन्नियाँ जैसे नमकीन, चिप्स, कुरकुरे, खाद एवं सीमेंट की बोरियाँ, पौधे रोपण की पन्नियाँ आदि भी प्लास्टिक प्रदूषण के लिए जिम्मेदार हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण का पारिस्थितिक तंत्र एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

1. **पर्यावरण प्रदूषणः** प्लास्टिक प्रदूषण का वन्यजीव और मनुष्य के स्वास्थ्य पर खतरनाक प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त प्लास्टिक भूमि, वायु और जल को भी प्रदूषित करता है।

2. **वायु प्रदूषणः** प्लास्टिक कचरा जलाने से सामान्यतः कार्बन मोनोऑक्साइड, डाइऑक्सीन तथा हाइड्रोजन साइनाइड जैसी हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है जिससे श्वसन तथा त्वचा सम्बन्धी बीमारियों के होने का खतरा बढ़ता है। पॉलीस्टाइन प्लास्टिक के जलने से क्लोरो–फ्लोरो कार्बन (CFC) का उत्पादन होता है जो वायुमंडल में ओजोन परत के लिए हानिकारक है। प्लास्टिक के जलने से उत्सर्जित रसायन जब उच्च वातावरण में पहुंचते हैं तो यह अम्ल वर्षा का कारण बनता है।

3. **मृदा प्रदूषणः** प्लास्टिक को जब भराव क्षेत्र वाली जगह पर डिस्पोज किया जाता है तो इसका अपघटन तेज़ गति से नहीं हो पाता है जिससे प्लास्टिक में मौजूद विषाक्त पदार्थ मिट्टी में मिलकर पेड़–पौधों की विकास दर को प्रभावित करते हैं। प्लास्टिक से बनी शराब की बोतलें गैस और नमी की अवरोधक होती हैं जिससे उपजाऊ भूमि को काफी नुकसान पहुँचता है।

4. **महासागरों की विषाक्तताः** प्रतिवर्ष महासागरों में लगभग 13 मिलियन टन प्लास्टिक मलबे का रिसाव होता है जिसका सीधा प्रभाव समुद्री जीवों जैसे व्हेल, समुद्री शेरों, पक्षियों, मछलियों, प्रवाल भित्तियों (कोरल रीफ) एवं अन्य स्तनधारियों के जीवन पर पड़ता है।

5. **जैवसंचयनः** भूमि, नदियों, झीलों और तालाबों पर प्लास्टिक का निस्तारण जहरीले पदार्थ को छोड़ने के समान है प्लास्टिक को सामान्यतः जीव–जंतु भोजन समझकर निगल जाते हैं, जिसके कारण ये विषाक्त रसायन उनके द्वारा मानव खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर जाते हैं ।

6. **मानव स्वास्थ्य पर प्रभावः** पॉलिथीन कचरा प्रायः मच्छर और कीटों को प्रजनन हेतु उपयुक्त स्थान प्रदान करता है। इस प्रकार से मच्छर जनित बीमारियां जैसे मलेरिया, चिकनगुनिया और डेंगू के संचरण में वृद्धि होती है। प्लास्टिक के ज्यादा सम्पर्क में रहने से लोगों के खून में थैलेट्स की मात्रा बढ़ जाती हैं। इससे गर्भवती महिलाओं के शिशु का विकास रुक जाता है। ज्यादा देर तक धूप में रखी प्लास्टिक की बोतल और कंटेनर के पानी में तापमान की वजह से प्लास्टिक में मौजूद नुकसानदेह केमिकल डाइऑक्सिन का रिसाव शुरू हो जाता है। ये डाईऑक्सिन पानी में घुलकर हमारे शरीर में पहुंचता है जिसकी वजह से महिलाओं में ब्रेस्ट कैंसर का खतरा बढ़ जाता है तथा बच्चों की स्मरण शक्ति पर भी इसका विपरीत असर पड़ता है। प्लास्टिक में मौजूद हानिकारक रसायन बिसफिनोल–ए शरीर में हार्मोन्स बनने की प्रक्रिया और उसके स्तर को प्रभावित करता है और जिसका असर मानव प्रजनन क्षमता पर पड़ता है।

7. **भूमिगत जल प्रदूषणः** प्लास्टिक में पाए जाने वाले हानिकारक रसायन जैसे स्टाइरीन, ट्रिमर तथा पॉलीस्टीरीन में पाए जाने वाले बेंजीन से भूजल प्रदूषण का खतरा बढ़ता है।

8. **प्राकृतिक आपदाः** प्लास्टिक और अन्य ठोस अपशिष्ट शहरों के जल निकासी मार्गों पर जमा होकर पानी के बहाव को रोक देते हैं जिसके उपरांत नगरों, महानगरों, कस्बों में जल भराव तथा बाढ़ की समस्या उत्पन्न होती है।

9. **पशु स्वास्थ्य के लिए खतराः** सड़क के किनारे पाए गए प्लास्टिक के थैलों को प्रायः पशु भोजन समझकर खा जाते हैं। क्योंकि प्लास्टिक की सामग्री पेट में पचने योग्य नहीं होती हैं जिससे पशुओं की मृत्यु हो जाती है।

प्लास्टिक प्रदूषण का समाधान एवं निवारण

- **प्लास्टिक के उत्पादन और वितरण में नियंत्रणः** प्लास्टिक से बनी वस्तुओं की बढ़ती मांग के कारण वैश्विक स्तर पर प्लास्टिक के उत्पादन और वितरण में वृद्धि हो रही है इस पर नियंत्रण रखना प्रथम प्रयास होना चाहिए।
- **प्राकृतिक पैकेजिंग प्रणाली का प्रयोगः** शादी–विवाह तथा पार्टियों में प्लास्टिक से बनी प्लेटों, चम्मचों, गिलासों आदि की जगह पर्यावरण के अनुकूल प्राकृतिक सामग्री जैसे पलास के पत्तों से बने दोने तथा पत्तल, बांस के बर्तन आदि का उपयोग किया जाना चाहिए।
- **कागज, कपड़े और जूट के थैलों का इस्तेमालः** कागज, कपड़े और जूट के थैले पॉलीथीन का बेहतर विकल्प हो सकते हैं ये पूरी तरह ईको फ्रेंडली हैं इनका इस्तेमाल पर्यावरण के लिए हानिकारक भी नहीं है।
- **पुनरुपयोगः** पुनरुपयोग प्लास्टिक अपशिष्ट के अन्य समाधानों में से एक है। पुनरुपयोग का अर्थ है प्लास्टिक बैगों को एक बार उपयोग के बाद फेंकने के बजाय जितनी बार संभव हो उपयोग करना चाहिये। कई कंपनियां इस्तेमाल किये हुए प्लास्टिक को लेकर प्लास्टिक की नई चीजों को बनाने का काम कर रही हैं। इसलिए इस तरह के प्लास्टिक को फेंकने के बजाय इन कंपनियो को दे देना चाहिये।
- **अन्य निर्माणकारी कार्यो में उपयोगः** प्लास्टिक के कचरे को उसके स्रोत स्थल पर ही अलग कर इसका उपयोग सड़क निर्माण में भी किया जा सकता है।
- **जागरुकता फैलाकरः** प्लास्टिक प्रदूषण जैसी गंभीर समस्या से निपटने के लिए जन जागरूकता एक ऐसा विषय है जिससे इस समस्या को हल किया जा सकता है। यह कार्य टेलीविजन, रेडियो, विज्ञापनो, होर्डिगों तथा सोशल मीडिया के माध्यमों से आसानी से किया जा सकता है। हम स्वयं भी अपने आसपास के लोगों को इसके बारे में उचित जानकारी प्रदान कर और विशेष रूप से बच्चों को प्लास्टिक थैले के उपयोग को बंद करने के लिये प्रेरित कर सकते है यह पॉलीथीन के इस्तेमाल को रोकने का सबसे बड़ा कदम होगा।

प्लास्टिक कचरा प्रबंधन हेतु राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय प्रयास

वर्तमान में प्लास्टिक प्रदूषण और प्लास्टिक के कचरे का प्रबंधन पूरी दुनिया के लिए एक चिंताजनक विषय है। प्लास्टिक के उपयोग और उसके सुरक्षित निस्तारण से जुड़े मुद्दों पर सफलता प्राप्त करना पूरी दुनिया के लिए एक बड़ी चुनौती है। लेकिन यह कार्य उचित प्रबन्धन द्वारा सम्भव है जिसे सरकारी तन्त्र, स्वयंसेवी संस्थाओं और नागरिकों के सहयोग से किया जाता है। प्लास्टिक कचरे के उचित प्रबन्धन के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कई प्रयास किये जा चुके है, जिसका विवरण निम्नानुसार हैः–

राष्ट्रीय प्रयास

- पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार ने हाल ही में 27 मार्च, 2018 को 'प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन (संशोधन) नियम, 2018 अधिसूचित किया है। जिसके अनुसार मल्टी लेयर्ड प्लास्टिक (एमएलटी), जिनकी रिसाइक्लिंग नहीं हो सकती, उन्हें चरणबद्ध तरीके से बंद किया जाना शामिल है। साथ ही उत्पादक, आयातक तथा ब्रांड मालिक के लिये एक केंदीय पंजीकरण प्रणाली बनाने का भी निर्देश दिया गया है।
- केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और ठोस कचरा प्रबंधन नियम, 2016 के अनुसार सूखे कचरे यानी प्लास्टिक, पेपर, मेटल, ग्लास और गीले यानी किचन और बगीचे के कचरे को, उनके स्रोत स्थल पर ही अलग करना अनिवार्य है।
- भारत सरकार द्वारा इस वर्ष 2 अक्टूबर से सिंगल यूज प्लास्टिक जैसे बैग, कप, प्लेट, पानी बोतल, प्लास्टिक और कुछ टाइप की पैकिंग प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगा दिया गया है।
- सिक्किम, नागालैंड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, त्रिपुरा, राजस्थान और दिल्ली आदि प्रदेशों तथा जम्मू कश्मीर केन्द्र शासित प्रदेश ने प्लास्टिक के उपयोग को प्रतिबंधित किया हुआ है।
- पैन इंडिया द्वारा देश के महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्थलों, राष्ट्रीय संपदाओं, जंगलों और समुद्री तटों को प्लास्टिक और कूड़े से मुक्त कराने का अभियान आरम्भ किया गया है।

- पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार के अधीनस्थ राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, नई दिल्ली और इसके आंचलिक केंद्रों द्वारा विभिन्न प्रकार के जनजागरूकता कार्यक्रम जैसे प्रदर्शनी, दीवार लेखन, स्लोगन लेखन, व्याख्यान, फिल्म शो, रैली, निबंधन प्रतियोगिता एवं भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसका मुख्य उद्देश्य प्लास्टिक प्रदूषण से पर्यावरण, पारिस्थितिक तंत्र एवं मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभावों के बारे में छात्रों, बच्चों, शिक्षकों व अन्य समुदायों में जागरूकता पैदा करना तथा प्लास्टिक कचरे के उचित प्रबंधन के तरीकों से अवगत करना है।
- विश्व पर्यावरण दिवस 2018 भारत के लिए महत्वपूर्ण था क्योंकि इस बार थीम "बीट प्लास्टिक पॉल्यूशन" के साथ भारत ने वैश्विक मेजबानी की, इस अवसर पर भारत द्वारा 2022 तक सिंगल यूज प्लास्टिक के इस्तेमाल को समाप्त करने की घोषणा भी की गई।

अंतरराष्ट्रीय प्रयास

- हाल ही में नैरोबी में यूनाइटेड नेशन्स एन्वायरनमेंट असेम्बली में 200 से ज्यादा देशों ने समुद्रों से प्लास्टिक प्रदूषण को हटाने के लिये एक संकल्प पारित किया है।
- दुनियाभर में 127 देशों ने प्लास्टिक के इस्तेमाल को रोकने के लिए पहल की है और 13 देशों में यूनाइटेड किंगडम, फ्रांस, न्यूजीलैंड, अमेरिका, दक्षिण कोरिया, बांग्लादेश, ताइवान, केन्या, जिम्बाब्वे, कनाडा, मोरक्को, रवांडा और एंटीगुआ ने प्लास्टिक प्रदूषण रोकने के लिए विधिवत नियम बनाकर पाबंदी शुरू कर दी है।
- सितंबर, 2016 में फ्रांस प्लास्टिक पर बैन लगाने का कानून पारित कर प्लास्टिक के प्लेट्स, कप, स्ट्रा और सभी तरह के बर्तनों को 2020 तक पूरी तरह से प्रतिबंधित करने वाला पहला देश बना।
- 2018 में ब्रिटेन ने माइक्रोबीड्स से निर्मित उत्पादों जैसे– शॉवर जेल, फेस स्क्रब आदि की बिक्री पर रोक लगा दी है, जिससे प्लास्टिक के सूक्ष्म कणों को समुद्र में जाने से रोका जा सके।
- वर्ष 2002 में बांग्लादेश पतले प्लास्टिक उत्पादों के इस्तेमाल पर आधिकारिक रूप से रोक लगाने वाला दुनिया का पहला देश था।
- गैर–लाभकारी संगठन ''दि ओसियन क्लीनअप'' पूरी दुनिया के समुद्रों से प्लास्टिक को हटाने के लिये नए आधुनिक तरीकों से काम कर रहा है। इसके द्वारा ग्रेट पेसिफ़िक गार्बेज पैच के आधे भाग को समुद्री धाराओं की मदद से साफ करने की योजना बनाई गई है।
- यूनाइटेड नेशंस द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस, 2018 की थीम "बीट प्लास्टिक पॉलुशन" रखी गयी थी, जिसकी मेज़बानी भारत ने की थी। इसका उद्देश्य नॉन–बॉयोडिग्रेडेबल कचरे के डिस्पोजल से पैदा हुई स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों और पर्यावरण के संबंध में जागरूकता पैदा करना था।

निष्कर्ष

हमारे द्वारा प्लास्टिक से बनी वस्तुओं के उपयोग से पर्यावरण में होने वाली गंभीर समस्याओं को अनदेखा किया जा रहा है हम अपनी सुविधा के लिये प्लास्टिक का लगातार उपयोग करते आ रहे हैं। लेकिन अब समय आ गया है जब हमे इस समस्या को गंभीरता से समझने की आवश्यकता है कि प्लास्टिक हमारे पर्यावरण को किस तरह से नुकसान पहुंचा रहा है और इसे कैसे रोका जा सकता है। हम अपने दैनिक जीवन में किस तरह बदलाव करें कि हमारे प्राकृतिक स्थानों, वन्य जीवन और हमारे निजी स्वास्थ्य पर प्लास्टिक प्रदूषण का भारी बोझ कम हो। हमें पर्यावरण की सुरक्षा और पृथ्वी के जनजीवन पर प्लास्टिक द्वारा होने वाले हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए तत्काल रुप से प्लास्टिक के उपयोग को बंद करने की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण की सुरक्षा के साथ साथ एक स्वच्छ वातावरण का निर्माण हो सके।

स्वच्छ पर्यावरण हेतु हमारी उदासीनता एवं पुनः जागृति

रामेश्वर
केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली

सर्वविदित है कि प्रारंम्भ में समस्त जीवों की उत्पत्ति एक स्वच्छ पर्यावरण में हुई तथा प्रकृति ने उन्हें अपना जीवन निर्वाह हेतु स्वच्छ एवं अनुकूल परिस्थितियों का उपहार प्रदान किया, ताकि उनका जीवन निर्वाह सुचारु रूप से हो सके। इसके लिए उन्हें कई प्राकृतिक संसाधन जैसे–जल, वायु, मृदा, जंगल एवं लकड़ी, खनिज, प्राकृतिक गैस, तेल एवं कोयला आदि उपलब्ध कराए, लेकिन जैसे–जैसे समय व्यतीत होता गया प्रकृति में विभिन्न जीव जन्तु, पशु–पक्षियों की संख्या निरन्तर तेजी से बढ़ती गई। इसके साथ ही मानव जाति के उत्पन्न होने एवं उनके जीवन निर्वाह हेतु प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग भी तेजी से बढ़ता गया जिसके कारण पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखना सबसे बडी चुनौती रही है।

प्रकृति में सभी पशु–पक्षी, जीव–जन्तुओं में मनुष्य ही सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी रहा है। इसलिए प्रकृति से प्राप्त पर्यावरण को हमेशा स्वच्छ बनाए रखना उसकी सबसे बड़ी जिम्मेदारी है, ताकि आने वाले जीवों की पीढ़ियों को वही स्वच्छ पर्यावरण मिल सके जो उनकी उत्पत्ति के समय उनको मिला था।

धीरे–धीरे समय व्यतीत होता गया और मनुष्य ने अपना ध्यान पर्यावरण की स्वच्छता बनाए रखने से हटाकर उसे अपना जीवन यापन करने के लिए आने वाली चुनौतियों का सामना करने में लगाना शुरू कर दिया। परिणामस्वरूप, इस ओर से उसका ध्यान हटने लगा। इतना ही नहीं, अपना जीवन यापन करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का जरूरत से ज्यादा दोहन एवं उन्हें नुकसान पहुंचाने लगा, जिसके कारण प्राकृतिक संसाधन जो कि पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखने के लिए अति अत्यावश्यक हैं, वे प्रदूषित होने लगे। इससे पर्यावरण की स्वच्छता पर अत्यधिक बुरा प्रभाव पड़ने लगा।

वर्तमान परिवेश में हमारी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं जीवन–यापन हेतु वृक्षों की अंधाधुंध कटाई, अपशिष्ट पदार्थों एवं रसायनों को नदियों के स्वच्छ जल में बिना उपचार के प्रवाहित करना, कल–कारख़ानों आदि के द्वारा स्वच्छ पर्यावरण में ज़हरीले धुएँ एवं गैसों का विर्सजन करना, तेल एवं कोयले का व्यावसायिक लाभ हेतु आवश्यकता से अधिक दोहन करना, मृदा–अपरदन आदि के कारण पर्यावरण को अत्यधिक नुकसान पहुँच रहा है, जिसके कारण आज हमें एवं आने वाली पीढ़ियों को कई भयानक बिमारियों का सामना करना पड़ेगा।

स्वच्छ पर्यावरण को बनाए रखने के लिए हमारा समुचित योगदान अत्यावश्यक है। हमें अब पुनः जागृत होना चाहिए। हमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग उन्हें नुकसान न पहुँचाते हुए आवश्यकतानुसार ही करना चाहिए।

प्रकृति ने हमें जो प्राकृतिक संसाधन दिए हैं उन्हें स्वच्छ एवं निरन्तर बनाए रखने के लिए हमें भी पर्यावरण को अपनी क्षमतानुसार समय–समय पर योगदान देते रहना चाहिए ताकि हमारा दिया गया योगदान स्वच्छ पर्यावरण के रूप में पुनः लौटकर हमें एवं आगे आने वाली पीढ़ियों को भी निरन्तर मिलता रहे।

पर्यावरण की स्वच्छता को बनाए रखने के लिए हम कई छोटे–छोटे प्रयास कर अपना योगदान दे सकते हैं। जैसे प्रायः यह देखा गया है कि किसी खास अवसर पर वृक्षारोपण जैसे कार्यों हेतु कई सामाजिक संगठनों, संस्थाओं एवं व्यक्तियों द्वारा मुहिम छेड़ी जाती हैं जिसके तहत एक ही दिन में हज़ारों वृक्षों का रोपण किया जाता है एवं अपनी जिम्मेदारी को यहीं विराम दे दिया जाता है निरन्तर देख–रेख के अभाव में वे सभी पौधें नष्ट हो जाते हैं जिस उद्देश्य से यह कार्य शुरू किया जाता है वो सफलता पूर्वक सम्पन्न नहीं हो पाता है।

अतः आवश्यकता यह है कि वृक्षारोपण के पश्चात उन वृक्षों की लगातार देखभाल एवं उनके विकास पर भी ध्यान दिया जाए ताकि परिपक्वता की स्थिति में पौधे वृक्षों का रूप धारण कर स्वच्छ ऑक्सीजन पर्यावरण को प्रदान कर सके एवं पर्यावरण स्वच्छ बना रहे।

कागज व्यवसाय की आवश्यकता के लिए भी वृक्षों की अंधाधुंध कटाई की जा रही है। कागज का सर्वाधिक उपयोग कार्यालयों एवं कोर्ट–कचहरी आदि में हो रहा है। हमें डिजीटल कार्य प्रणाली एवं कागज रहित प्रोत्साहन योजनाओं के सफल क्रियान्वयन में अपना सकारात्मक

चित्रः आवासीय कॉलोनियों के पास खुले मैदान में प्लास्टिक अपशिष्ट जलते हुए

सहयोग प्रदान करना चाहिए ताकि कागज का उपयोग कम से कम किया जा सके एवं उनके निर्माण में वृक्षों को नुकसान ना पहुँचे।

जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव पर्यावरण स्वच्छता पर अत्यधिक पड़ रहा है एवं वर्तमान में वाहनों की संख्या निरन्तर तेजी से बढ़ती जा रही है, जिसके कारण सड़कों पर वाहनों के आवागमन एवं संचालन के दौरान जाम की समस्याएँ अत्यधिक बढ़ती जा रही है। फलस्वरूप कार्बन का उत्सर्जन भी अत्यधिक मात्रा में हो रहा है एवं वायु प्रदूषण में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। परिणामस्वरूप पर्यावरण दूषित होता जा रहा है। अतः हमारे द्वारा निजी वाहनों का कम से कम उपयोग करना चाहिए और पब्लिक ट्रांसपोर्ट का अधिक से अधिक उपयोग किया जाना चाहिए ताकि पर्यावरण को हो रहे नुकसान को नियंत्रित किया जा सके।

स्वच्छ पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने के लिए पराली तथा नाड़ भी काफी हद तक जिम्मेदार है। प्रतिवर्ष गेहूँ एवं धान की फसल पक जाने के बाद उनकी कटाई की जाती है तथा किसानों द्वारा नई फसल की तैयारी के लिए खेत खाली करने तथा समय के सदुपयोग हेतु खेतों में खड़ी पराली एवं नाड़ को आग लगाकर जला दिया जाता है। इनके जलने से पर्यावरण में कार्बन डाई–ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, मिथेन आदि हानिकारक गैसों की मात्रा बढ़ जाती हैं, जिसके कारण पर्यावरण को बहुत नुकसान होता है साथ ही साथ हमारी त्वचा एवं श्वास के लिए ये गैसें बहुत नुकसानदायक है।

प्रायः यह देखा गया है कि आवासीय परिसरों के आस–पास खुले मैदानों में प्लास्टिक अपशिष्ट रात के घने अंधेरे में जला दिये जाते हैं, जिससे धुएं एवं जहरीली गैसों का असर सुबह होते–होते आसानी से देखा जा सकता है। इन गैसों में प्रमुखतया कार्बन डाईऑक्साइड एवं कार्बन मोनोऑक्साईड जैसी हानिकारक गैसें होती हैं जो श्वसन नलिका एवं त्वचा की कई गंभीर बिमारियों का कारण बनती है तथा स्वच्छ पर्यावरण को भी अत्यधिक नुकसान पहुँचाती है।

अतः हमें प्लास्टिक अपशिष्टों को जलाने वाले लोगों के खिलाफ उचित कार्यवाही करनी चाहिए तथा ऐसी गतिविधियों से होने वाले नुकसान के बारे में लोगों में जागरूकता लाने के प्रयास भी करने चाहिए ताकि पर्यावरण को बचाया जा सके।

स्वच्छ पर्यावरण को बनाए रखने के लिए हमें अपनी उदासीनता का त्याग कर लोगों को पुनः जागृत करना चाहिए ताकि हमारा पर्यावरण हमेशा स्वच्छ बना रहे।

जल संरक्षण में आपसे अपेक्षा

डॉ. दिलीप कुमार मार्कण्डेय
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली

जल संरक्षण आज के विश्व–समाज की सर्वोपरि चिन्ता होनी चाहिए, चूंकि उदार प्रकृति हमें निरन्तर वायु, जल, प्रकाश आदि का उपहार देकर उपकृत करती रही है, लेकिन स्वार्थी आदमी सब कुछ भूल कर प्रकृति के नैसर्गिक सन्तुलन को ही बिगाड़ने पर तुला हुआ है। आज लोगों को एक–एक घड़े शुद्ध पेयजल के लिये मीलों भटकना पड़ रहा है। जल के टैंकर और ट्रेन से जल प्राप्त करने के लिये घंटों कतार में खड़ा रहना पड़ता है। रोजमर्रा के कामकाज नहाने, कपड़े धोने, खाना बनाने, बर्तन साफ करने तथा उद्योग धंधा चलाने के लिये तो जल चाहिए। वह कहाँ से लाए जबकि नदी, तालाब, ट्यूबवैल, हैण्डपम्प एवं कुएँ बावड़ियाँ सूख गए हैं। पशु–पक्षियों को भी पानी के लिये मीलों भटकना पड़ता है। पेड़–पौधे भी सूखते जा रहे हैं। जल की कमी से अनेक कारखाने बंद होने से लोग बेरोजगार होते जा रहे हैं। खेती–बाड़ी के लिये तो और भी अधिक पानी की जरूरत है परन्तु पानी नहीं मिलने से खेती–बाड़ी चौपट होती जा रही है। जल संकट हमारे पूरे दैनिक जीवन को बुरी तरह से प्रभावित करता है। इसलिये इस समस्या पर प्राथमिकता से ध्यान दिए जाने की जरूरत है।

पानी संबंधी हर समस्या के लिए हम सब जिम्मेदार हैं

जल संकट तो हमारी भूलों और लापरवाहियों से ही उपजा है। हम अनावश्यक रूप से तथा अधिक मात्रा में जल का दोहन कर रहे हैं। दैनिक उपयोग में आवश्यकता से अधिक मात्रा में जल का अपव्यय करने की आदत ने जल संकट बढ़ा दिया है। बढ़ती जनसंख्या के कारण भी जल का उपभोग बढ़ता जा रहा है। खेती एवं उद्योगों में अधिक उत्पाद लेने की खातिर जल का उपयोग बढ़ा दिया है। जल स्रोतों से जल के उपभोक्ता तक पहुँचने से पहले ही पाँचवा हिस्सा गटर में चला जाता है।

वृक्षों की अंधाधुंध कटाई व वनों के लगातार घटने से वर्षा होने की अवधि व साथ ही वर्षा की मात्रा में भी कमी आ रही है। कुओं, नलकूपों, तालाबों से अन्धाधुन्ध जल दोहन के कारण भूजल में कमी आ गई है। धरती में जल स्तर निरन्तर नीचे जा रहा है। कल–कारखानों से निकले दूषित जल व शहरी क्षेत्रों के गटर एवं कूड़े–कचरे ने जलस्रोतों को प्रदूषित कर दिया है जिससे पीने के पानी का संकट खड़ा हो गया है। यह सब कुछ अनियन्त्रित मानवीय गतिविधियों के कारण ही हुआ है। इसका निराकरण भी मानव ही कर सकता है।

पानी बचाने में आपका सहयोग चाहिए

हमारे देश के पुरखों से हमें अनेक प्रकार के जलस्रोत विरासत में मिले हैं। यदि हमने इस विरासत को संभाल कर नहीं रखा तो आने वाली पीढ़ियाँ हमें माफ नहीं करेंगी। हमारे देश के गाँव–गाँव में परम्परागत कुएँ, बावड़ी व तालाब बने हुए हैं। पिछले वर्षों में लम्बे समय से हम इनकी अनदेखी करते आ रहे हैं। इन्हें या तो तोड़फोड़ दिया गया है या प्राकृतिक रूप से नष्ट हो गए हैं। आगे से इन जलस्रोतों की चिन्ता सभी मिलकर करेंगे तभी जल संकट से निजात मिल सकेगी। हमने अपने ही स्वार्थ में इन्हें उजाड़कर कंकरीट का जंगल बिछा दिया है। जनता ने जल पूर्ति की जिम्मेदारी अपने कंधों से उतारकर सरकार के कंधों पर रख दी है। जबकि सरकारें योजनाएँ बनाने तक सीमित हो जाती हैं क्योंकि इन्हें कारगर ढंग से लागू करने में लोगों के स्वार्थ आड़े आते हैं। गाँव–गाँव और शहर–शहर में बने हुए जलस्रोतों का पुनरुद्धार किया जाना आवश्यक है। मोहल्ले, गाँव, शहर जहाँ भी ऐसे स्रोत हैं वहाँ के लोग मिलकर इन जलस्रोतों की जिम्मेदारियाँ अपने ऊपर लें। मिलकर इनमें जमा कूड़े–कचरे, मिट्टी, कंकड़, झाड़–झंखर को हटाएँ। जलस्रोतों के जल मार्ग में आने वाले अवरोध व नाजायज कब्जे हटाएँ। जलस्रोतों के रखरखाव में अपनी व दूसरे

लोगों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। अब तक जो भूलें हमने की है उनका समाधान भी हमें मिलजुल कर ही करना है। हम एक–एक मिलकर अनेक बन सकते हैं। जब इतने हाथ श्रमदान करेंगे तो जलस्रोत अवश्य साफ रहेंगे। उन्हें गंदा करने से भी बचाएँगे। इस कथन पर काम करना है साथी हाथ बटाना, एक अकेला थक जाएगा तो मिलकर बोझ उठाना।

पूरे विश्व के लिये जल प्रदूषण एक बड़ा पर्यावरणीय और सामाजिक मुद्दा है। यह अपने चरम बिंदु पर पहुँच चुका है। राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान (नीरी), नागपुर ने चेताया है कि नदी जल का 70 प्रतिशत बड़े स्तर पर प्रदूषित हो गया है। भारत की मुख्य नदियां जैसे गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु, यमुना आदि बड़े पैमाने पर प्रभावित हो चुकी हैं। भारत की मुख्य नदी गंगा भारतीय संस्कृति और विरासत से अत्यधिक गहरे रूप में जुड़ी हुई है। आमतौर पर लोग जल्दी सुबह नहाते हैं और किसी भी व्रत या उत्सव में गंगा जल को देवी–देवताओं को अर्पण करते हैं। पूजा को संपन्न करने के मिथक में गंगा में पूजा विधि से जुड़ी सभी सामग्री एवं अस्थि विसर्जन कर देते हैं। इसी गंगा नदी एवं अन्य नदियों में उद्योगों से चीनी मिल, भट्टी, ग्लिस्रिन, टिन, पेंट, साबुन, कताई, रेयान, सिल्क, सूत आदि जैसे जहरीले कचरे बड़ी मात्रा में मिलते हैं। 1984 में गंगा के जल प्रदूषण को रोकने के लिये गंगा एक्शन प्लान को शुरु करने के लिये सरकार द्वारा एक केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण की स्थापना की गयी थी। इस योजना के अनुसार हरिद्वार से हुगली तक बड़े पैमाने पर 27 शहरों में प्रदूषण फैला रहे लगभग 120 कारखानों को चिन्हित किया गया था। लखनऊ के पास गोमती नदी में लगभग 19.84 मिलियन गैलन कचरा लुग्दी, कागज, भट्टी, चीनी, कताई, कपड़ा, सीमेंट, भारी रसायन, पेंट और वार्निश आदि कारखानों से गिरता है। पिछले 4 दशकों में ये स्थिति और भी भयावह हो चुकी है।

दुनिया की बहुत सारी नदियों की तरह भारतीय नदियों का पानी भी प्रदूषित हो चुका है, जबकि इन नदियों को हमारी संस्कृति में हमेशा पवित्र जगह दी जाती रही है। भारत के लोग इन नदियों से मुंह नहीं फेर सकते क्योंकि वे उनकी जीवनरेखाएं हैं और भारत का भविष्य कई रूपों में इन्हीं नदियों से जुड़ा हुआ है। भारत में जल प्रदूषण सबसे गंभीर पर्यावरण संबंधी खतरों में से एक बनकर उभरा है। इसके सबसे बड़े स्रोत शहरी सीवेज और औद्योगिक अपशिष्ट हैं जो बिना शोधित किए हुए नदियों में प्रवाहित किए जा रहे हैं। सरकार की तमाम कोशिशों के बावजूद शहरों में उत्पन्न कुल अपशिष्ट जल का केवल 10 प्रतिशत हिस्सा ही शोधित किया जा रहा है और बाकी ऐसे ही नदियों, तालाबों एवं महासागरों में प्रवाहित किया जा रहा है। तीव्र औद्योगीकरण ने भी जल प्रदूषण की समस्या को निश्चित रूप से खतरनाक स्तर तक पहुंचा दिया है। साथ ही, कृषि में प्रयुक्त कीटनाशकों एवं रासायनिक उर्वरकों ने भी जल प्रदूषण की समस्या को बढ़ाने में अपना योगदान दिया है। जल प्रदूषण की समस्या से मानव तो बुरी तरह प्रभावित होते ही हैं, जलीय

जीव जन्तु, जलीय पादप तथा पशु पक्षी भी प्रभावित होते हैं। खास तौर पर कुछ समुद्री हिस्सों एवं नदियों में तो जल प्रदूषण की वजह से जलीय जीवन समाप्तप्राय हो चुका है।

पानी कैसे बचाया जा सकता है:

रोजाना पानी को कैसे बचा सकते हैं उसके लिये हमने यहाँ कुछ बिन्दु आपके सामने प्रस्तुत किये हैं:

1. लोगों को अपने बागान या उद्यान में तभी पानी देना चाहिये जब उन्हें इसकी जरुरत हो।
2. पाइप से पानी देने के बजाय फुहारे से देना अधिक बेहतर होगा जो कई गैलन पानी को बचायेगा।
3. पानी को बचाने के लिये सूखा अवरोधी पौधा लगाना अच्छा तरीका है।
4. पानी के रिसाव को बचाने के लिये पाइपलाइन और नलों के जोड़ ठीक होने चाहिये जो प्रतिदिन लगभग 20 गैलन पानी को बचा सकता है।
5. कार को धोने के लिये पाइप की जगह बाल्टी और मग का इस्तेमाल करें जो लगभग 150 गैलन पानी को बचा सकता है।
6. फुहारे के तेज बहाव के लिये अवरोधक लगाएँ।
7. पूरी तरह से भरी हुई कपड़े धोने की मशीन और बर्तन धोने की मशीन का प्रयोग करें जो प्रति महीने लगभग 300 से 800 गैलन पानी बचा सकता है।
8. प्रति दिन अधिक पानी को बचाने के लिये शौच के समय कम पानी का इस्तेमाल करें।
9. हमें फलों और सब्जियों को खुले नल के बजाय भरे हुए पानी के बर्तन में धोना चाहिये।
10. बरसात के पानी को जमा कर शौच, उद्यानों को पानी देने आदि के लिये उपयोग किया जा सकता है, जिससे स्वच्छ जल पीने और भोजन पकाने के उद्देश्य के लिये बचाया जा सकता है।
11. जल संसाधन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष जल की गुणवत्ता है। सतहगत एवं भूमिगत जल को प्रदूषणमुक्त करने तथा जल की गुणवत्ता में वृद्धि जल का पुनर्चक्रण एवं जल का पुनरुपयोग करने के लिये अधिकांश वैज्ञानिक विश्लेषण एवं नवीनतम तकनीकी साधनों का उपयोग करना।
12. सम्बन्धित राज्यों की जल की आवश्यकताओं को मद्दे नजर रखते हुए जल को नियोजित ढंग से पर्यावरणीय ठोस एवं समन्वित विधि से संरक्षित एवं विकसित करना।
13. जल संसाधन का नियोजन एक जल चक्रीय इकाई जैसे नदी बेसिन के आधार पर करना, जल को अधिकाधिक समय तक रोके रखना तथा जल की क्षति न्यूनतम करने के सभी उपाय करना।
14. उक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु एक सूचनातंत्र विकसित करना जिसके अन्तर्गत आंकड़े भण्डारों की वृद्धि करना तथा उन्हें श्रृंखलाबद्ध करना।
15. नदी के नियोजित विकास एवं प्रबंध हेतु समुचित संगठन का निर्माण करना।
16. जल संपन्न क्षेत्रों से जलाभाव क्षेत्रों में जल उपलब्ध कराने की राष्ट्रीय आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए एक नदी बेसिन से दूसरी बेसिन में जल प्रवाह की व्यवस्था करना।
17. जल संसाधन का विकास यथासंभव बहुउद्देशीय करना। जल विकास परियोजना में सिंचाई, बाढ़–नियंत्रण, जल विद्युत उत्पादन, मत्स्यपालन, नौ परिवहन एवं मनोरंजन का सम्मिलित लक्ष्य होना चाहिए परन्तु सर्वाधिक प्राथमिकता पेयजल को मिलनी चाहिए।
18. बहुउद्देशीय परियोजना प्रस्तुत करते समय इसके मानव जीवन अधिवास, व्यवसाय, आर्थिक एवं अन्य सम्बन्धित पक्षों पर इसके प्रभाव का आकलन अनिवार्य है। विशेष तौर पर, समाज के निर्बल वर्गों तथा अनुसूचित जाति, जनजाति पर इनके प्रभाव का मूल्यांकन अत्यावश्यक है।
19. ऐसी परियोजना के निरूपण एवं क्रियान्वयन में पर्यावरण की गुणवत्ता तथा पारिस्थितिकी संतुलन को बनाये रखने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। जहाँ अपरिहार्य हो, क्षति पूर्ति की व्यवस्था होनी चाहिए।
20. पहाड़ी क्षेत्रों में ऐसी परियोजना का क्रियान्वयन करते समय सुनिश्चित पेयजल की उपलब्धता, जल विद्युत उत्पादन की संभावना तथा समुचित सिंचाई सुविधा पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इन सबकी व्यवस्था करते समय प्राकृतिक स्वरूप ढाल की तीव्रता, तीव्र उपवाह एवं मिट्टी की अपरदनशीलता का ध्यान रखना आवश्यक है।
21. भूमिगत जल की संभाव्य उपलब्धता का समय–समय पर आकलन करते रहना चाहिए।

22. भूमिगत जल का दोहन उसके पुनर्वास के अनुरूप होना चाहिए। इस प्रकार के पुनर्वेशन बढ़ाने के समुचित उपाय किये जाने चाहिए।

23. सतहगत एवं भूमिगत जल का समेकित एवं अन्तर्वैकल्पिक उपयोग, परियोजना के प्रारंभ से ही करना चाहिए।

24. समुद्रतट के निकट भूमिगत जल का अधिक दोहन नहीं होना चाहिए, जिससे खारे पानी के भूमिगत मीठे जल में मिश्रण की संभावना न उत्पन्न हो।

25. वरीयताक्रम से पेयजल, सिंचाई, जल विद्युत, नौ परिवहन के आधार पर जल उपयोग का प्रारूप निश्चित होना चाहिए।

26. जल उपयोग एवं भूमि उपयोग नीतियों में पूर्ण समन्वयन स्थापित होना चाहिये।

27. संपूर्ण देश में जल प्रदेशों का सीमांकन होना चाहिये तथा तदनुरूप ही आर्थिक कार्यकलाप विकसित होने चाहिये।

28. बाढ़ नियंत्रण हेतु एक महायोजना बनानी चाहिये एवं प्रत्येक बाढ़ की संभावनायुक्त नदी बेसिन का नियमन होना चाहिये।

29. समुद्री लहरों अथवा नदी जल द्वारा अपरदन न्यूनतम करने के लिये उपयुक्त कार्यक्रम बनाना चाहिये।

सूखाग्रस्त क्षेत्रों में मिट्टी में आर्द्रता संचयन, जल दोहन तकनीक, वाष्पीकरण क्षति न्यून करने, भूमिगत जल की संभाव्यता बढ़ाने तथा जल संपन्न क्षेत्रों से जल प्राप्त करने की दिशा में समुचित प्रयास किये जाने चाहिए। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में विभिन्न उपयोगों हेतु जल की मांग में सतत वृद्धि होना अपरिहार्य है। यद्यपि जल का उपयोग घरेलू, औद्योगिक कृषिगत, विद्युत उत्पादन, नौ परिवहन, मनोरंजन, सबमें होता है, किन्तु सर्वाधिक मांग सिंचाई के लिये होती है। किसी एक सिंचाई परियोजना के क्रियान्वयन में ही पर्यावरण सुरक्षा, विस्थापितों का पुनर्वास, जनस्वास्थ्य, बांध सुरक्षा आदि अनेक समस्यायें प्रकट होती हैं। इन सबके समाधान हेतु एक सामान्य उपागम अत्यावश्यक है। इनके अतिरिक्त लाभ के वितरण में समता एवं सामाजिक न्याय की समस्यायें भी जुड़ जाती हैं।

कुछ सिंचाई परियोजनाओं के कमान्ड क्षेत्र में जल जमाव एवं मिट्टी में लवणता वृद्धि की कठिनाइयाँ भी उपस्थित हुई हैं। इन सभी समस्याओं का समाधान एक समान नीति एवं उपायों से ही हो सकता है।

अंत में यही कह सकते हैं कि धरती पर जीवन का सबसे जरूरी स्रोत जल है क्योंकि हमें जीवन के सभी कार्यों को निष्पादित करने के लिये जल की आवश्यकता है जैसे पीने, भोजन बनाने, नहाने, कपड़ा धोने, फसल पैदा करने आदि के लिये। बिना इसको प्रदूषित किये भविष्य की पीढ़ी के लिये जल की उचित आपूर्ति के लिये हमें पानी को बचाने की जरुरत है। हमें पानी की बर्बादी को रोकना चाहिये, जल का उपयोग सही ढंग से करें तथा पानी की गुणवत्ता को बनाए रखें। भविष्य में जल की कमी की समस्या को सुलझाने के लिये जल संरक्षण ही उचित उपाय है। भारत और दुनिया के दूसरे देशों में जल की भारी कमी है जिसकी वजह से आम लोगों को पीने और खाना बनाने के साथ ही रोजमर्रा के कार्यों को पूरा करने के लिये जरूरी पानी के लिये लंबी दूरी तय करनी पड़ती है। जबकि दूसरी ओर, पर्याप्त जल के क्षेत्रों में अपने दैनिक जरुरतों से ज्यादा पानी लोग बर्बाद कर रहे हैं। हम सभी को जल के महत्व और भविष्य में जल की कमी से संबंधित समस्याओं को समझना चाहिये। हमें अपने जीवन में उपयोगी जल को बर्बाद और प्रदूषित नहीं करना चाहिये तथा लोगों के बीच जल संरक्षण और बचाने को बढ़ावा देना चाहिये।

पर्यावरण संबंधी सामान्य जानकारी

डॉ. दिलीप कुमार मार्कण्डेय
केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली

वृक्षों की सामान्य जानकारी

अपने परिवेश में पाये जाने वाले कुछ सामान्य वृक्षों के बारे में यहाँ कुछ सामान्य जानकारी प्रस्तुत की जा रही है। जिसे प्रस्तुत करने का अभिप्राय यह है कि आप इन पेड़ पौधों से संबंधित सामान्य ज्ञान प्राप्त कर सकें और भारत सरकार के पर्यावरण संरक्षण संबंधी अभियान में प्रत्यक्ष रूप से सहयोग दें। इस अंक में अमलतास और पारिजात या हरसिंगार नामक पौधों को प्रस्तुत किया गया है।

अमलतास

अत्यंत ही खूबसूरत पीले रंग के फूलों के गुच्छों से लदे इस बड़े से वृक्ष को उस समय अपने पूर्ण यौवन पर देखा जा सकता है, जब हमारे देश में शरद ऋतु समाप्ति की ओर बढ़ रही होती है और मौसम में उष्णता का अनुभव होने लगता है। इस पौधे को अनेकों अन्य नामों जैसे गिरमाला, किअर, अलाश (girmala/kiar/alash) आदि से भी जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम केसिया फिस्टुला (Cassia fistula) है। अत्यंत ही अनियमित तरीके से वृद्धि करने वाले इस सुंदर से मध्यम आकार के इस पर्णपाती सजावटी पेड़ को शहरों, औद्योगिक इकाइयों, बगीचों, रेलवे स्टेशनों, विभिन्न शिक्षा संस्थानों, सरकारी और निजी कार्यालयों आदि में आम तौर से मुस्कुराते हुये देखा जा सकता है। प्रदूषण नियंत्रणकारी इस वृक्ष को पर्यावरण विशेषज्ञ प्रायः वायू प्रदूषण नियंत्रण हेतु लगाते हैं। घनी छाया प्रदान करने वाले इस मजबूत से घने वृक्ष को विभिन्न प्रकार की हरित पट्टियों (green belts) के विकास में भी विशेष रूप से लगाया जाता है। यही नहीं, इस पेड़ के अनेकों औषधीय गुण भी हैं। इस वृक्ष के तने पर विद्यमान हल्के पीले रंग की छाल के भी अनेकों उपयोग हैं। पुरानी छाल अक्सर मिट्टी के रंग की और भंगुर प्रकृति की होती है। इस पौधे की संयुक्त प्रकृति की पत्तियाँ होती है, जो जोड़ों में पायी जाती है। लगभग 3 से 8 जोड़े कतार में लगे हुये देखे जा सकते हैं। पत्तियाँ अत्यंत ही चिकनी होती है और प्रत्येक पट्टी के किनारे पर हल्के हरे लाल की धारी देखी जा सकती है।

इसके फूल गुच्छे में होते हैं चमकीले पीले रंग के इन फूलों में पाँच पंखुड़ी होती हैं। इसके फल हल्के हरे रंग के और बेलनाकर पाइपनुमा या छड़ीनुमा होते हैं। शुरू में ये फल गहरे हरे रंग के होते हैं, किन्तु पूर्णतया परिपक्व होने पर ये गहरे काले रंग की छड़ीनुमा हो जाते हैं। जैसा कि पहले ही बताया गया है कि इन पौधों पर अप्रैल मई के महीने में बहार आती है। इस बहार में तैयार होने वाले फलों को पूर्ण रूप से परिपक्व होने में 8 से 10 माह लग जाते हैं। ग्रीन बेल्ट तैयार करने में इसे विशेष रूप से चुना जाता है। साथ ही इस वृक्ष के अनेकों औषधीय महत्व भी हैं जैसे ये विभिन्न प्रकार के त्वचा– व हृदय रोगों के नियंत्रण में, मियादी बुखार के उपचार में और विभिन्न प्रकार के सूजन कम करने के लिए इसे उपयोग में लिया जाता है।

अब आपको क्या करना है

- जरा सोचिए इस पेड़ को आपने कब और कहाँ देखा है?
- आप जिस समय इसे पहचानने का प्रयास कर रहे थे, उस समय कौन सा मौसम है,
- क्या बहार नजर आ रही थी?
- क्या फूलों के गुच्छे दिखे?
- क्या छड़ीनुमा काले फल आपको नजर आए?
- पत्तियों की कोई विशेषता नज़र आई?

- आपने जिस जगह पर इसे देखा, वहाँ ऐसे कितने और पेड़ लगे थे?
- क्या सभी की उम्र एक सी नज़र आ रही थी?
- क्या आपने इन पौधों पर पक्षियों के घोंसले आदि देखे?
- क्या आप इन पक्षियों को पहचान पाये?
- आपको कोई पेड़ घायल अवस्था में तो नही मिला?
- इस पेड़ के तने पर लोहे की कील से ठुके हुये बोर्ड वगैरह तो नही मिले?
- क्या आपको महसूस हुआ कि इसकी छांव से वातावरण का ताप कम हो जाता है?

पारिजात, हरसिंगार

पारिजात और हरसिंगार के नाम से प्रसिद्ध इस झाड़ीनुमा वृक्ष को आम तौर से शहरो, घरो, बगीचों, आदि में सुंदर, औषधिकारी, धूल मिट्टी आदि को छानने वाला शुभ–व पवित्र पौधे के रूप में लगाया जाता है। इसे हर, कुरी, सहरवा (har/ kuri/saherwa) आदि स्थानीय नामों से भी जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम Nyctanthes arbor-tristis है। झाड़ीनुमा इस छोटे से वृक्ष से अनेकों दिशाओं से निकलती हुई घनी शाखाओं को देखा जा सकता है। इस पेड़ की छाल गहरे पीले, भूरे आदि रंगों में मिलती है। छाल को कई बार हरे रंग में भी देख सकते हैं और बहुत ही खुरदुरी और अनेकों सिकुड़नों से युक्त होती हैं। जोड़े में मिलने वाली पत्तियाँ एक दूसरे के विपरीत दिशा में लगी रहती है। पत्तियाँ गहरे हरे रंग की होती हैं व इनकी ऊपरी सतह अत्यधिक खुरदुरी होती है। ऊपरी सतह की तुलना में निचली सतह का रंग हल्का होता है। इस पौधे में पाई जाने वाली पत्तियाँ कंगूरेदार होती हैं और पत्तियों के सिरे किसी दिशा विशेष को इंगित करते हैं। इस पेड़ में सफ़ेद रंग के 5 से 8 पंखुड़ी वाले छोटे छोटे अत्यधिक खुशबू वाले फूल निकलते हैं। इन फूलों की डंडी गहरे संतरे रंग की होती है।

इस पेड़ में सिक्केनुमा फल लगते हैं, जो शुरुआत में हरे और परिपक्व होने पर गहरे कत्थई या काले रंग के हो जाते हैं। ऐसे फल बीज में बदल जाते हैं, जिन्हें आप अप्रैल से मई के बीच इस पेड़ पर गुच्छे में देख सकते हैं। इस पेड़ में फरवरी–मार्च में पतझड़ आता है और जून जुलाई में फिर से नई पत्तियों के कारण हरा भरा दिखने लगता है। इसमें अगस्त से फूल आने शुरू हो जाते हैं, जो सितंबर से अक्तूबर में अधिकतम देखे जा सकते हैं। ठंड के बढ़ने के साथ ही इसमें खिलने वाले फूलों की संख्या में भी कमी आने लगती है। बगीचों में इस पेड़ की पत्तियों पर धूल की कई परतें भी देखी जा सकती है। इसे इस तरह से भी कहा जा सकता है कि आम तौर से मिट्टी से लदी धूल को हवा से अलग कर यह सांस लेने वाली हवा को साफ करके पर्यावरण शुद्ध करने में हमारी सहायता करते हैं। साथ ही बाग बगीचों की शोभा बढ़ाने में भी यह बहुत ही उपयोगी और आवश्यक पौधा माना जाता है।

अब आपको क्या करना है:

- आपने इस पेड़ को कहाँ देखा?
- जिस जगह पर आपने इस पेड़ को देखा, वहाँ इनकी कितनी संख्या थी?
- क्या आपने पेड़ में फूल, फल काइयाँ आदि देखे?
- क्या इस पेड़ पर कोई पक्षी घोंसले बनाकर रह रहे थे?
- इस पेड़ की पट्टियों की ऊपरी और निचली सतह की विशेषताएँ आपको नजर आयीं?
- क्या आप इस पेड़ की पत्तियों पर जमी धूल का मापन कर सकते हैं?
- मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात आदि प्रदेशों में हिन्दू धर्मावलम्बी इन फूलों को लाखों की संख्या में एकत्रित करके भगवान शिव को समर्पित करते हैं– आपका क्या अनुभव है?
- इस पेड़ से संतरी रंग का विरंजक, सुगंधी इत्र आदि में उपयोग करने के लिए व्यापक रूप में संवर्धित किया जाता है–आप भी अपना अनुभव बताएं।
- इस पेड़ के तने की कुछ विशेषताएँ होती हैं–आपको कुछ नजर आया?

पर्यावरण एवं उसकी आवश्यकता

शिवदान सिंह राजपूत एवं सचिव तंवर
शुष्क वन अनुसंधान संस्थान (आफरी), जोधपुर

दुनिया हर किसी की जरूरत को पूरा करने के लिए पर्याप्त है, लेकिन हर किसी के लालच को पूरा करने के लिए नहीं। — **महात्मा गांधी**

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को विशेष महत्व दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के अनेक घटकों को पवित्र मानकर उन्हें पूजा जाता रहा है। पीपल, बरगद, आंवला के वृक्ष एवं तुलसी को पवित्र माना जाता है। जल, वायु, अग्नि को भी देव मानकर उनकी पूजा की जाती है। अपने जीवनदायी जल के कारण गंगा, सिंधु, सरस्वती, यमुना, गोदावरी, नर्मदा जैसी अधिकतर नदियों को माँ मानकर उनकी पूजा की जाती है। धरती को भी माता का ही दर्जा दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारत में पर्यावरण के विविध स्वरुपों की पूजा होती है। पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की समष्टिगत इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते हैं तथा उनके रूप, जीवन और जीवितता को तय करते हैं। हमारे पर्यावरण को सुरक्षित करने के लिए हम प्रतिवर्ष 3 मार्च को विश्व वन्यजीव दिवस; 21 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय वन दिवस; 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस; व अन्य दूसरे जल, ओज़ोन व मरु प्रसार रोक आदि दिवस मनाते है जिनका उद्देश्य दुनिया की आबादी के बीच जागरूकता पैदा करना होता है।

ज्यादातर पर्यावरणीय समस्याएँ पर्यावरणीय अवनयन, जनसंख्या और मानव द्वारा संसाधनों के अतिदोहन में वृद्धि से जुड़ी हैं। पर्यावरणीय अवनयन के अंतर्गत पर्यावरण में होने वाले वे सारे परिवर्तन आते हैं जो अवांछनीय हैं और किसी क्षेत्र विशेष में या पूरी पृथ्वी पर जीवन और संधारणीयता का खतरा उत्पन्न करते हैं। वर्तमान दिनों में ऑस्ट्रेलिया में बुशफायर, ब्राजील में अमेज़ॅन जंगल की आग, आर्कटिक क्षेत्र में खनिजों की खोज, पौधों और जानवरों की प्रजातियों का विलुप्त होना तथा औद्योगिक क्रांति से बढ़ता पृथ्वी का वैश्विक तापमान आदि कुछ खबरें पर्यावरण के बिगड़ने के उदाहरण हैं।

मनुष्य को समृद्धि के साथ जीवन जीने के लिए पृथ्वी के संसाधनों की आवश्यकता होती है, लेकिन संसाधनों के अधिक उपयोग से बहुत सारे अपशिष्ट (Wastes) उत्पन्न हो रहे हैं जो पृथ्वी पुनर्चक्रण (Recycling) क्षमता से ज्यादा हैं, जिससे पर्यावरण में असंतुलन पैदा होता है। संसाधनों को दो वर्गों में विभक्त किया जाता है। नवीकरणीय संसाधन और अनवीकरणीय संसाधन। इसके आलावा कुछ संसाधन इतनी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं कि उनका क्षय नहीं हो सकता उन्हें अक्षय संसाधन कहते हैं जैसे सौर ऊर्जा। अनवीकरणीय संसाधनों का तेजी से दोहन उनके भण्डार को समाप्त कर मानव जीवन के लिये कठिन परिस्थितियां पैदा कर सकता है। कोयला, पेट्रोलियम, एवं धात्विक खनिजों के भण्डारों का निर्माण एक दीर्घ अवधि की घटना है तथा जिस तेजी से मनुष्य इनका दोहन कर रहा है ये एक न एक दिन समाप्त हो जायेंगे। वर्तमान समय में, दुनिया के परमाणु संयंत्रों द्वारा उत्पन्न परमाणु कचरे को नष्ट करने के लिए भी कोई समाधान उपलब्ध नहीं है, कुछ देश परमाणु कचरे को महासागरों में फेंक देते हैं जो कि उचित निस्तारण नहीं है।

उसी प्रकार अनियोजित शहरीकरण, जीवाश्म ईंधन का जलना, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन कुछ उदाहरण हैं, जो कि खाद्य और जल सुरक्षा, स्थानीय अर्थव्यवस्था और सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए घातक परिणाम हैं। उदाहरण के लिए सहारा डेजर्ट पिछली सदी में से 10 प्रतिशत बड़ा हो गया है, कनाडा में पर्माफ़्रोस्ट (permafrost) लाइन स्थानांतरित हो गई है, व्हीट बेल्ट पोल वार्ड को आगे बढ़ा रही है, अंटार्टिका त्वरित दर से अपनी बर्फ खो रहा है, हाल ही में जीवन के लिए खतरा बन चुके है रोग प्रकोप—कोरोनोवायरस, निपाह वायरस, इबोला वायरस निरंतर बढ़ रहे है। हालांकि, संयुक्त राष्ट्र, गैर—सरकारी संगठनों (डब्ल्यूडब्ल्यूएफ, आईयूसीएन आदि) जैसे प्लेटफॉर्म, पर्यावरण प्रदूषण के परिणामों के बारे में दुनिया के देशों के बीच जानकारी का प्रसार कर रहे हैं और पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए सदस्य देशों के बीच कानूनी रूप से हस्ताक्षरित सम्मेलनों को बढ़ावा दे रहे हैं।

आजकल, बहुआयामी दुनिया में महाशक्ति बनने और अन्य देशों पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए राष्ट्रों के बीच प्रतिस्पर्धा, न केवल पौधों और जानवरों की प्रजातियों के लिए खतरा है, बल्कि एक समय स्वयं मानव–जाति भी इससे बच नहीं पाएगी। इसके लिए दुनिया के देशों के बीच मजबूत इच्छाशक्ति के साथ नैतिक आचरण एवं संसाधनों का स्थायी तरीके से उपयोग करने की आवश्यकता है ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियों को भी प्राकृतिक संसाधन मिल सकें और फिर से पृथ्वी जिसे नीले रंग का ग्रह कहा जाता है को पुनर्स्थापित किया जा सके।

"यह हम सभी की सामूहिक और व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी है कि हम जिस पृथ्वी पर रहते हैं, उसे बनाए रखने और उसकी रक्षा करने के लिए प्रयास करते रहें"

–दलाई लामा

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत।।

सभी सुखी होवें, सभी रोगमुक्त रहें, सभी मंगलमय के साक्षी बनें और किसी को भी दुःख का भागी न बनना पड़े।'''

उत्तराखंड में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

डॉ. गिरीश चंद्र सिंह नेगी
गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान,
कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

सामान्यतः जलवायु चक्र में दीर्घकालिक परिवर्तन जलवायु परिवर्तन कहलाता है। जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय में विश्व समुदाय के समक्ष एक बड़ी चुनौती के रूप में उभरा है। यह एक व्यापक चुनौती है जिसके दूरगामी पर्यावरणीय, आर्थिक एवं सामाजिक परिणाम होंगें। आज दुनिया का ध्यान जलवायु परिवर्तन से होने वाले दुष्परिणामों एवं इनसे निपटने एवं अनुकूलन की तरफ केंद्रित हो गया है। पर्यावरणविदों, योजनाकारों एवं नीति निर्धारकों हेतु जलवायु परिवर्तन एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन चुका है। जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों में हिमनदों का पिघलना, हिम–रेखा का ऊंचाई की तरफ खिसकना, नदियों के जल प्रवाह में परिवर्तन, खाद्यान्न उत्पादन व जैव–विविधता में ह्यस, खर–पतवार में वृद्धि, वानिकी और कृषि आधारित जीवनयापन में आ रही कठिनाइयों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहे हैं। हालांकि जलवायु परिवर्तन और पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ रहे प्रभाव पर अध्ययन हेतु दीर्घकालिक जलवायु आंकड़ों के अभाव में निश्चित निष्कर्ष प्रस्तुत करने में अभी भी कठिनाई बनी हुई है।

हिमालय क्षेत्र में वैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययन यह संकेत देते हैं कि हिमालय के वायुमंडल के गर्म होने की रफ्तार दुनिया के अन्य पर्वतीय क्षेत्रों से अधिक है। यह तापमान वृद्धि मुख्यतः जाड़ों की ऋतु में अधिक पाई गई है। भारतीय उष्णदेशीय मौसम विज्ञान संस्थान, पुणे के अनुसार विगत 100 वर्षों में भारत वर्ष में वर्षा की मात्रा में 68 प्रतिशत की कमी आई है। जबकि जम्मू एवं कश्मीर में वर्षा की मात्रा में वृद्धि हुई है, एवं कश्मीर घाटी का औसत तापमान पिछले दो दशकों में 1.45 डिग्री सेल्सियस बढ़ चुका है। हमारे संस्थान द्वारा अलकनंदा घाटी (गढ़वाल) में किए गए एक अध्ययन से पता चला कि वर्ष 1960–2000 के बीच वार्षिक तापमान में 0.15 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है। उपग्रह चित्रों के विश्लेषण के अनुसार हिमालय के ग्लेशियर लगभग 67 प्रतिशत खिसक गए हैं। पड़ोसी राष्ट्र नेपाल में ग्लेशियर के सिकुड़ने की दर 10 मीटर प्रतिवर्ष तक आँकी गई है।

पृथ्वी के तापमान में वृद्धि का उत्तरदायित्व मुख्यतः बढ़ती हुई कार्बन डाइआक्साइड है जो औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व 280 पी.पी.एम. के आंकड़ें को पार कर आज 400 पी.पी. एम से ऊपर पहुंच गया है। इसी प्रकार अन्य हानिकारक हरित गैसों की वायुमण्डल में सान्द्रता बढ़ती जा रही है। वर्ष 1970 एवं 2004 के बीच हरित गैसों के वायुमण्डल में सान्द्रण में 70 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई है। विश्व जलवायु निगरानी (2006) के अनुसार पृथ्वी के औसत तापमान में पिछले 100 वर्षो के दौरान 0.74 डिग्री सेल्सियस रिकार्ड की वृद्धि की गई है। इसी प्रकार वर्ष 1961 से 2003 के दौरान समुद्र स्तर में 1.8 मि.मी. की औसत वृद्धि हुई जो कि 3.1 मि.मी. औसत की तेज दर से 1993 से 2003 के दौरान हुई। वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी सतह का औसत तापमान वर्ष 2100 में 1.4 से 5.8 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है, एवं समुद्र तल में 0. 18 से 0.59 मी. प्रति वर्ष तक वृद्धि हो सकती है। प्रस्तुत लेख जलवायु परिवर्तन से उत्तराखण्ड के जनजीवन, कृषि, जल, वन पारिस्थितिकी पर पड़ रहे प्रभावों पर केन्द्रित किया गया है एवं आगामी कार्यों हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण अनुसंधान व विकास के बिन्दु भी सुझाए गए है।

उत्तराखंड में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

(क) कृषि पर प्रभावः यह सर्वविदित है कि उत्तराखण्ड में जीवन–यापन का मुख्य आधार कृषि है। कृषि मौसम चक्र पर निर्भर है और मानव जनसंख्या फसलों की पैदावार और खाद्य आपूर्ति पर निर्भर है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय भाग में अधिकांश वारानी खेती (लगभग 85 प्रतिशत) वर्षा एवं वनों से प्राप्त बायोमॉस ऊर्जा पर आधारित है। पहाड़ी ढलानों पर छोटी एवं बिखरी हुई जोतें सीमान्त कृषकों की आजीविका का मुख्य आधार है। छोटी जोतों में खाद्यान्न की पैदावार अत्यधिक कम (6–13 क्विंटल प्रति हैक्टेयर) है। अनियमित वर्षा के कारण सिंचाई प्रणाली गंभीर रूप से प्रभावित हुई है एवं प्रदेश की अधिकांश नहरें अपने सम्पूर्ण क्षमता से कई गुना कम भूमि को सिंचित कर पा रही है। कुल्लू घाटी में इस

संस्थान के एक अध्ययन से ज्ञात हुआ कि वर्ष 1980 एवं 1990 के मध्य अधिकतम तापमान में 0.25 से 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई जिससे सेब के उत्पादन में उल्लेखनीय रूप से गिरावट आई। इस अवधि में बर्फबारी में कमी होने एवं सेब के बगीचों में आर्द्रता कम होने से फूलों व कलियों की संख्या में गिरावट देखी गई क्योंकि सेब की अच्छी पैदावार हेतु बसन्त ऋतु से पूर्व 10 सप्ताह तक 5 डिग्री सेल्सियस से नीचे तापमान रहना जरूरी है। जंगलों एवं आस–पास की वनस्पतियों में फूल खिलने के समय में परिवर्तन तथा खर–पतवार के अतिक्रमण से फसलों के परागण हेतु उत्तरदायी मधुमक्खियां एवं अन्य कीट पतंगों के लिए भोजन में कमी आने से परागण तथा फसलों एवं फलों का उत्पाद प्रभावित हो रहा है। हिमांचल प्रदेश के सेब के बगीचों में स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि मधुमक्खियों के छत्तों को 500 रूपये/प्रतिदिन के किराये पर लिया जा रहा है एवं सेब के पेड़ो की टहनियों पर फूलों के गुच्छे लटकाये जाते है ताकि मधुमक्खियां आकर्षित होकर परागण कर सके। हिमाचल प्रदेश में सेब के बगीचों का अधिक ऊँचाईं की ओर खिसकना जलवायु परिवर्तन का परिणाम माना जा रहा है।

जलवायु परिवर्तन के कृषि पर पड़ने वाले कुछ प्रभाव निम्नवत हैं – (1) सिंचाई जल की उपलब्धता में कमी, (2) अतिशय सूखे की घटनाओं और वर्षा ऋतु के व्यवहार में बदलाव के परिणाम स्वरूप बीज अंकुरण, फसल और फलों की पैदावार में विफलता, (3) अवांछित खर–पतवार जैसे कुरी (लैंटाना कमारा), कांग्रेस घास (पार्थेनियम ओडोरेटम) एवं कालाबाँसा (यूपाटोरियम हिस्टरोफोरस) इत्यादि का खेतों व वनों में प्रकोप, (4) कीट जनित रोगों में वृद्धि, (5) कृषि फसलों की जैव–विविधता में गिरावट। इन दुष्प्रभावों से निबटने हेतु किसानों ने फसलों एवं फसल चक्रों में कई परिवर्तन कर दिए हैं। वर्षा जल की कमी का मुख्य नकारात्मक असर धान, गेंहूँ व दालों एवं मौसमी सब्जियों के उत्पादन पर पड़ा है। प्राचीन समय में प्रचलित ''वारहनाजा'' पद्धति गम्भीर रूप से प्रभावित हो गई है। इस संस्थान द्वारा पौढ़ी गढ़वाल में किये गये एक अध्ययन से पता चला कि पिछले तीन दशकों में परम्परागत फसलों के अर्न्तगत बोये गये क्षेत्र में लगभग 60 प्रतिशत की कमी आई है। वनों में खाद्य फल–फूल की मात्रा घटने से वन्य जीवों ने खेत–खलिहानों एवं मानव आबादी की ओर रूख कर दिया है जिससे ग्रामीणों के जीवन में नया संकट पैदा हो रहा है।

(ख) वनों पर प्रभावः वन एवं वनस्पतियों का वितरण, संरचना और पारिस्थितिकी मुख्यतः जलवायु द्वारा प्रभावित होते हैं। आईपीसीसी की तीसरी आकलन रिपोर्ट (2001) के अनुसार जलवायु परिवर्तन वन पारिस्थितिकी प्रणालियों को भविष्य में गंभीरता से प्रभावित कर सकता है। तापमान की वृद्धि एवं वनों की कटाई के कारण जल की कमी, वन्य जीवों के आवास का विखंडन पैदा कर सकता है। उत्तराखंड के वनों में वृक्ष प्रजातियां (जैसे बुरांस, पयॉ, आदि) का समय से पहले खिलना ग्लोबल वार्मिंग के साथ जोड़ा गया है। बसंत ऋतु में अगर तापमान सामान्य से अधिक हो एवं वर्षा की मात्रा सामान्य से कम हो तो पुष्पों के खिलने व कलियों के फूटने के समय में परिवर्तन, सामान्य वर्षों की अपेक्षा लगभग 2–4 सप्ताह पहले हो जाता है। इस परिवर्तन से पौधों में परागण, बीजों के जमने का समय एवं फलों के पकने के समय में अन्तर आ जाने से वन–पारिस्थितिकी तंत्र एवं उस पर निर्भर जीव–जंतुओं का जीवन–चक्र एवं उत्तरजीविता प्रभावित हो जाती है। कई वृक्ष जैसे रियांज एवं साल के बीजों की परिपक्वता/मानसूनी वर्षा के साथ होती है। अतः प्रजातियों को उचित समय पर नमी न मिलने से वृक्षों पर इनके बीज सूख जाएंगें। वनों के अन्दर खर–पतवारों के अतिक्रमण से प्राकृतिक वनों की संरचना में आ रहे गम्भीर बदलाव को जलवायु परिवर्तन के साथ जोड़ा गया है जिससे वनों पर प्रतिस्पर्धात्मक असर पड़ेगा। इसी प्रकार अल्पाइन वनस्पति क्षेत्रों की कई प्रजातियों का विकास उनके बर्फ के पिघलने के साथ शुरू होता है। बर्फ की मात्रा में कमी एवं जल्दी बर्फ पिघलने से उनके विकास और जीवन चक्र प्रभावित हो रहे हैं। वायुमंडल में तापमान वृद्धि के एक मुख्य असर के रूप में जंगल में आग की घटनाओं में वृद्धि हुई है। उत्तराखण्ड में चार जिले (अल्मोड़ा, चमोली, टिहरी, और पौढ़ी गढ़वाल) में सबसे अधिक विनाशकारी आग में 27 मई 1995 को 2115 वर्ग कि.मी. मी (कुल ऊंचाई 600 मीटर से 2650 के बीच) क्षेत्र गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो गया था। बिनसर वन्य जीव अभयारण्य (कुमाऊँ) से प्राप्त सूचना के अनुसार वर्ष 1995 में वायु का तापमान सबसे अधिक था। अतः ज्ञात होता है कि पौधे जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होकर अग्रिम शोध के लिए संकेत दे रहे हैं।

(ग) जल संसाधन पर प्रभावः उत्तराखण्ड के ग्लेशियरों से हमारे देश की प्रमुख नदियों गंगा–यमुना का उद्‌गम होता है। जो भारतवर्ष की लगभग आधी आबादी की पूर्ति करती है। हाल के दशकों में बर्फबारी में कमी एवं तापमान के बढ़नें से बर्फ के पिघलने की वृद्धि दर ने इस प्रदेश के जल संसाधन पर नकारात्मक असर डाला है। उत्तराखण्ड के प्रसिद्ध गंगोत्री ग्लेशियर पर विस्तार से कई शोध अध्ययन हुए है। एक रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1930 में यह ग्लेशियर 25 कि.मी. लम्बा था लेकिन अब यह 20 कि.मी. लम्बा रह गया है। शोधकर्ताओं ने इस ग्लेशियर के सिकुड़ने की दर 18–23 मीटर/वर्ष तक आँकी है। हालांकि इस संस्थान के विस्तृत अध्ययन से पता चला कि यह दर लगभग 12 मीटर/वर्ष ही है। इसी प्रकार कुमांऊँ के पिंडारी ग्लेशियर के सिकुड़ने की दर 23.5 मीटर/वर्ष आँकी गई है। कुमाऊँ के मिलम ग्लेशियर के सिकुड़ने की दर 9.1 मीटर/वर्ष 1901–1997 पाई गई है। गढ़वाल में स्थित डोकरियानी नामक ग्लेशियर पिछले 35 वर्षो में 16.5 मीटर/वर्ष की दर से सिकुड़ा है। इन अध्ययनों से स्पष्ट है कि ग्लेशियरों के पिघलने की रफ्तार उत्तराखण्ड में हाल के दशकों में बढ़ी है। ग्लेशियरों के पिघलने से जंगलों की आग एवं लकड़ी व अन्य ईधन के जलने से वायुमंडल में हो रही तापमान वृद्धि का असर अब स्थापित हो गया है। वर्षा में कमी भूमि में वनस्पति आवरण के ह्रास व मृदा अपरदन एवं अन्य पर्यावरणीय कारकों के कारण जल स्रोतों, छोटे नदी–नालों का सूखना व उनका वर्ष के मात्र कुछ महीनों में जल धारण करना अब आम बात हो गई है। इसके चलते जल की गम्भीर समस्या से गामीणों एवं कस्बों की आबादी को जूझना पड़ रहा है। नैनीताल जिले के गौला नदी जलागम में एक अध्ययन से पता चला कि लगभग 45 प्रतिशत जल स्रोत सूख गए हैं या बारहमासी नहीं रहे है। पिथौरागढ़ जिले में संस्थान के अध्ययन से पता चला है कि गर्मियों में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 60 लीटर प्रतिदिन के मानक के आधार से आधी रह गई है।

(घ) मानव स्वास्थ्य पर प्रभावः जलवायु परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से मानव स्वास्थय को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए डायरिया, मलेरिया, दमा इत्यादि को तापमान एवं वायुमण्डल की आद्रता तथा जल एवं वायु प्रदूषण से जोड़ा जा सकता है। जलवायु परिवर्तन का प्रत्यक्ष रूप से कई वेक्टर जनित रोगों पर प्रभाव पड़ता है। जैसे – मलेरिया का फैलना, बारटीनेलिसिस, बोर्न टिक रोग, वायरल बुखार और अन्य महामारी रोग तापमान वृद्धि से जुड़े हुए हैं, जो पैथोजेन की वृद्धि में सहायक होते हैं। हाल के वर्षों में मच्छरों की ऊँचें पर्वतीय इलाकों में उपस्थिति इसी वायुमण्डलीय तापमान बढ़ने का उदाहरण है। एयरोसोल्स को प्राथमिक रूप से वायुमण्डल में प्रदूषण वृद्धि का कारक माना जाता हैं। संस्थान द्वारा हिमाचल प्रदेश में किए गए अध्ययन से ज्ञात हुआ कि जाड़ों में इसके सान्द्रण में वृद्धि एवं वाहनों के धुएँ से वायुमंडल की दृश्य क्षमता प्रभावित होती है। वायुमण्डल में नाइट्रोजन आक्साइड तथा धरातलीय ओजोन का बढ़ता हुआ स्तर स्वाँस से सम्बन्धित बीमारियों को बढ़ावा देता है। इसके अलावा विशाल मात्रा में शहरों से उत्पन्न कूड़ा–कचरा से स्वच्छता और स्वास्थ्य से जुड़ी गंभीर समस्याएँ पैदा हो रही हैं। इस दिशा में ज्ञान और मानव जीवन पर पड़ने वाले दुष्परिणाम के आंकड़े सीमित है, किन्तु यह स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से निर्धन वर्ग पर ज्यादा असर पड़ेगा जो कि पूर्ण रूप से प्राकृतिक संसाधनों पर आजीविका हेतु आश्रित हैं।

जलवायु परिवर्तन के मानव जन–जीवन एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले उपरोक्त व्यापक असर एवं इससे निपटने की प्रभावी रणनीति के मद्देनजर कुछ सुझाव निम्नवत हैं :

(1) मौसम से संबंधित आकड़ों का संग्रह एवं जन–सामान्य को उपयोगी जानकारी सरल रूप में उपलब्ध कराना।

(2) सूखा, बाढ़ चक्र एवं अन्य वायुमण्डलीय घटनाओं का विस्तृत अध्ययन करके उपयुक्त फसलों व वनस्पतियों का वृक्षारोपण हेतु चयन।

(3) जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु फसलों एवं वनस्पतियों व वनों की अनुकूलन क्षमता की रणनीतियों की बेहतर समझ विकसित करना।

(4) जलवायु परिवर्तन (कार्बन डाइआक्साइड और वायुमण्डलीय तापमान वृद्धि) का महत्वपूर्ण खाद्य फसलों, इमारती लकड़ी, औषधीय पौधों पर अध्ययन एवं बचाव रणनीति विकसित करना।

(5) ग्लोबल वार्मिंग के फलस्वरूप हिमनदों के सिकुड़ने, पिघलने, बर्फबारी में कमी व बर्फानी नदियों के जलस्तर में उतार–चढ़ाव का अध्ययन।

(6) पौधों और जीव–जन्तुओं के गर्म वायुमण्डल के परिणामस्वरूप प्रवर्जन के लिए प्राकृतिक वास की आवश्यकताओं की जानकारी एकत्र करना।

(7) जल संरक्षण उपायों (वर्षा जल संग्रहण, आदि) एवं जल एवं वायु गुणवत्ता पर कार्यक्रम।

(8) खर–पतवारों का उन्मूलन, एवं

(9) जलवायु परिवर्तन के सापेक्ष स्थानीय निवासियों का मुकाबला करने के लिए प्रभाव न्यूनीकरण उपाय के पारंपरिक ज्ञान का प्रलेखन जो कि रणनीति बनाने हेतु महत्वपूर्ण साबित होगा।

पर्यावरणीय पर्यटन

डॉ. दीपक कोहली
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग,
उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ

आज भले ही कोरोना आपदा के कारण पूरे विश्व में पर्यटन उद्योग पर प्रभाव पड़ा हो, पर वास्तव में देखा जाए तो गत वर्षो में पर्यटन दुनिया का सबसे बड़ा उद्योग है और इसमें भी पर्यावरणीय–पर्यटन (इको टूरिज्म) तेजी से बढ़ा है। समूचे विकासशील उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में संरक्षित क्षेत्र प्रबंधकों और स्थानीय समुदायों को आर्थिक विकास और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता के बीच सन्तुलन कायम करने के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है। पर्यावरण–पर्यटन भी इस महत्त्वपूर्ण सन्तुलन का एक पक्ष है। सामान्य शब्दों में पर्यावरण–पर्यटन या इको टूरिज्म का अर्थ है पर्यटन और प्रकृति संरक्षण इस ढंग से करना कि एक तरफ पर्यटन और पारिस्थितिकी की आवश्यकताएँ पूरी हों और दूसरी तरफ स्थानीय समुदायों के लिये रोजगार– नये कौशल, आय और महिलाओं के लिये बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित किया जा सके।

भारत एक ऐसा देश है जो पूरी तरह से प्राकृतिक संपदा से संपन्न है। यहां नदी पहाड़, झरने, रेगिस्तान, एवं जंगल इत्यादि सभी कुछ है। जो इसे विविधताओं में एकता वाला राष्ट्र बनाते हैं। भारत में प्रकृति से जुड़े कई पर्यटन स्थल हैं जो ना केवल आपको प्रकृति के करीब ले जाने में मदद करते हैं बल्कि प्रकृति की विविधता और उसके सृजन को भी परिभाषित करते हैं। पर्यावरण पर्यटन प्रकृति से जुड़ा पर्यटन है जिसमें आप देश की संस्कृति, सभ्यता के साथ विभिन्न जीव– जंतुओं के बारे में भी जान पाते हैं।

पर्यावरण पर्यटन के लिए भारत में कुछ महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्यानों में कॉर्बेट नेशनल पार्क (उत्तराखंड), बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान (मध्य प्रदेश), कान्हा राष्ट्रीय उद्यान (मध्य प्रदेश), गिर राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्य (गुजरात) और रणथंभौर राष्ट्रीय उद्यान (राजस्थान), गलगीबागा बीच, (गोवा), टाडा (आंध्र प्रदेश), चिल्का झील (उड़ीसा), सुंदरवन नेशनल पार्क (पश्चिम बंगाल), काज़ीरंगा नेशनल पार्क (असम), कंचनजंगा जैवमंडल रिज़र्व (सिक्किम), ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क (हिमाचल प्रदेश) इत्यादि शामिल हैं। इको–टूरिज्म की अवधारणा भारत में अपेक्षाकृत नई है। हालांकि, हाल के वर्षों में यह तेजी से बढ़ रहा है और अधिक से अधिक लोग अब इस धारणा से अवगत हों रहे हैं। जागरूकता फैलाने के लिए, भारत सरकार ने देश में पर्यटन और संस्कृति मंत्रालय में पारिस्थितिक पर्यटन को लेकर विभाग भी स्थापित किया है। नाजुक हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र और लोगों की संस्कृति और विरासत को संरक्षित करने के लिए कई जागरूक प्रयास किए गए हैं। इसके अलावा, छुट्टियों के शिविर (होटल आवास के बजाय) यात्रियों के बीच बहुत अधिक प्रचलित हो रहे हैं। केरल में हाउसबोट, विथिरी के पेड़ के घर और कर्नाटक के जंगलों में गहरे घोंसले रिसॉर्ट्स आवास के लिए पर्यटकों के बीच बहुत लोकप्रिय हो रहे हैं। इसके अलावा, उन लोगों के लिए ट्रैवल कंपनियों द्वारा कई 'ग्रीन टूर' भी पेश किए जाते हैं, जो प्रकृति का सर्वोत्तम अनुभव करना चाहते हैं।

तिरुवनंतपुरम से लगभग 72 किलोमीटर की दूरी पर स्थित तेनमला भारत का पहला नियोजित पारिस्थितिक पर्यटन स्थान है। सुंदर पश्चिमी घाटों और शेन्दुरुनी वन्यजीव अभयारण्य के सुन्दर जंगलों से घिरा हुआ, तेनमला अपने एक तरह की समृद्ध जैव–विविधता के लिए जाना जाता है। शाब्दिक अर्थ 'हनी हिल्स', तेनमला भारत में एक लोकप्रिय पारिस्थितिक पर्यटन स्थल बन गया है। एक साहसिक पार्क समेत अद्भुत मनोरंजन आकर्षण के लिए अच्छी तरह से प्रशिक्षित कर्मचारियों और अविश्वसनीय सूचना सुविधाओं से, इस जगह में यह सब कुछ है। यह विशेष विषय के अनुसार तीन प्रमुख क्षेत्रों में विभाजित है – अवकाश क्षेत्र, साहसिक क्षेत्र और संस्कृति क्षेत्र; यहां पर कई रिसॉर्ट्स भी स्थित हैं, जहां आगंतुक शांतिपूर्वक रह सकते हैं।

महाराष्ट्र में स्थित अजंता और एलोरा की गुफाएं सबसे प्राचीन पर्यावरणीय पर्यटन का स्थल हैं। यह सबसे लोकप्रिय पर्यटक आकर्षणों में से एक, के रुप में जानी जाती हैं। खासकर यदि आप एक वास्तुकला प्रेमी हैं। सांस्कृतिक सौंदर्य और धार्मिक इतिहास में आपकी रुचि है तो यह जगह आपके लिए उपयुक्त है। यहां की गुफाएं सुंदर और उत्तम दीवार चित्रों और कला का घर हैं जो

बुद्ध और हिंदू धर्म के जीवन पर आधारित हैं। यह गुफाएं महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में स्थित हैं। बड़े–बड़े पहाड़ और चट्टानों को काटकर बनाई गई ये गुफाएं भारतीय कारीगरी और वास्तुकला का बेहतरीन नमूना है। अजंता की गुफाओं में ज्यादातर दीवारों पर की गई नक्काशी बौद्ध धर्म से जुड़ी हुई है जबकि एलोरा की गुफाओं में मौजूद वास्तुकला और मूर्तियां तीन अलग–अलग धर्मों से जुड़ी हैं– बौद्ध धर्म, जैन धर्म और हिंदू धर्म का प्रतीक हैं। अजंता एक दो नहीं बल्कि पूरे 30 गुफाओं का समूह है जिसे घोड़े की नाल के आकार में पहाड़ों को काटकर बनाया गया है और इसके सामने से बहती है एक संकरी सी नदी जिसका नाम वाघोरा है। एलोरा की गुफाओं में 34 मठयागोंपा और मंदिर हैं जो पहाड़ के किनारे पर करीब 2 किलोमीटर के हिस्से में फैला हुआ है। इन गुफाओं का निर्माण 5वीं और 10वीं शताब्दी के बीच किया गया था। एलोरा की गुफाएं पहाड़ और चट्टानों को काटकर बनाई गई वास्तुकला का सबसे बेहतरीन उदाहरण है। धार्मिक चित्रों, मूर्तियों और गुफाओं की प्राकृतिक सुंदरता पर्यावरण के अनुकूल आगंतुकों को उस समय की मौजूद संस्कृतियों में गहरी अंतदृष्टि प्रदान करती है।

अंडमान और निकोबार द्वीप समूह 572 छोटे द्वीपों का एक समूह है जो अपने विशिष्ट जंगलों, स्वच्छ जल और सदाबहार पेड़ों के लिए जाने जाते हैं। चूंकि वे अन्य देशों के नजदीक स्थित हैं, इसलिए यह द्वीप विभिन्न वनस्पतियों और जीवों की एक विस्तृत श्रृंखला का एक घर हें। पर्यावरण पर्यटकों के लिए इस द्वीप के पास बहुत कुछ है। एक शांत वातावरण, स्वच्छ हवा, सुन्दर जंगल और एक समृद्ध समुद्र के साथ, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह का पर्यावरण पर्यटन के लिए सबसे पसंदीदा स्थानों में से एक बन गए हैं। आगंतुक घोर वर्षा वन के माध्यम से स्नॉर्कलिंग, स्कूबा डाइविंग और ट्रेकिंग और लंबी पैदल यात्रा जैसी गतिविधियों की एक विस्तृत श्रृंखला का आनंद ले सकते हैं। मुख्य भूमि से अलग यह जगह तैरते एम्राल्ड द्वीपों और चट्टानों का समूह है। अंडमान और निकोबार द्वीप समूह नारियल और खजूर की सीमा वाले, पारदर्शी पानी वाले, आकर्षक और खूबसूरत समुद्री तटों और उसके पानी के नीचे कोरल और अन्य समुद्री जीवन के लिए मशहूर हैं। यहां की प्रदूषण रहित हवा, पौधों और जानवरों की नायाब प्रजातियों की मौजूदगी की वजह से इस जगह से प्यार हो जाता है।

नंदा देवी और फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान उत्तराखण्ड में एक अविश्वसनीय जैव विविधता के साथ असाधारण रूप से सुंदर स्थान हैं। भारत के दूसरे सबसे ऊंचे पर्वत नंदा देवी, के नाम पर यह नंदा देवी राष्ट्रीय उद्यान अपने निर्बाध पर्वत, सुंदर ग्लेशियर और अल्पाइन मीडोज़ के लिए जाना जाता है। राष्ट्रीय उद्यान के तौर पर नंदा देवी राष्ट्रीय उद्यान की स्थापना 1982 में हुई थी। वर्ष 1988 में यूनेस्को ने इसे विश्व धरोहर स्थल की सूची में शामिल किया था। फूलों की घाटी दुर्लभ पुष्प प्रजातियों के लिए जाना जाती है। इस उद्यान में 17 दुर्लभ प्रजातियों समेत फूलों की कुल 312 प्रजातियां हैं। देवदार, सन्टी/सनौबर, रोडोडेंड्रन (बुरांस) और जुनिपर यहां की मुख्य वनस्पतियां हैं। नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क में आकर पर्यटक, हिम तेंदुआ, हिमालयन काला भालू, सिरो, भूरा भालू, रूबी थ्रोट, भरल, लंगूर, ग्रोसबिक्सम, हिमालय कस्तूरी मृग और हिमालय तहर को देख सकते हैं। इस राष्ट्रीय पार्क में लगभग 100 प्रजातियों की चिड़ियों का प्राकृतिक आवास है। यहां आमतौर पर देखी जाने वाली चिड़ियां औरेंज फ्लैंक्डप बुश रॉबिन, ब्लू फ्रांटेड रेड स्टार्ट, येलो बिल्ला इड फेनटेल फ्लाईकैचर, इंडियन ट्री पिपिट और विनार्सियास ब्रेस्टौड पिपिट हैं।

राजस्थान के भरतपुर में स्थित, केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान मानव निर्मित आर्द्रभूमि है और भारत में सबसे प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यानों में से एक है जो पक्षियों की हजारों प्रजातियों का घर है। इस राष्ट्रीय उद्यान में 379 से अधिक पुष्प प्रजातियां, 366 पक्षी प्रजातियां, मछली की 50 प्रजातियां, छिपकलियों की 5 प्रजातियां, 13 सांप प्रजातियां, 7 कछुए प्रजातियां और 7 उभयचर प्रजातियां हैं। केवलादेव नेशनल पार्क देश के सबसे समृद्ध पक्षी विहारों में से एक है, खासकर सर्दियों के महीनों के दौरान यहां देश–विदेशी पक्षियों का जमावड़ा लगता है। पार्क में कई किफायती आवास विकल्प उपलब्ध हैं और इसे पूरी तरह से घुमने का सबसे अच्छा तरीका पैर, बाइक या रिक्शा पर है। यह सभी पर्यावरण–पर्यटकों और पक्षी प्रेमियों के लिए एक पसंदीदा जगह है। पहले भरतपुर पक्षी विहार के नाम से जाना जाता था। इस पक्षी विहार में हजारों की संख्या में दुर्लभ और विलुप्त जाति के पक्षी पाए जाते हैं, जैसे साईबेरिया से आये सारस, जो यहाँ सर्दियों के मौसम में आते हैं। 1985 में इसे यूनेस्को ने विश्व विरासत भी घोषित कर दिया था। मानसून के मौसम के

दौरान देश के प्रत्येक भागों से पक्षियों के झुंड यहाँ आते हैं। पानी में पाए जाने वाले कुछ पक्षी जैसे सिर पर पट्टी और ग्रे रंग के पैरों वाली बतख, कुछ अन्य पक्षी जैसे पिनटेल बतख, सामान्य छोटी बतख, रक्तिम बतख, जंगली बतख, वेगंस, शोवेलेर्स, सामान्य बतख, लाल कलगी वाली बतख, और गद्वाल्ल्स यहाँ पाए जाते हैं। केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान में पर्यटक अन्य पक्षी जैसे शाही गिद्ध, मैदानी गिद्ध, पीला भूरा गिद्ध, धब्बेदार गिद्ध, हैरियर गिद्ध और सुस्त गिद्ध देख सकते हैं। पक्षियों के अलावा पर्यटक जानवर जैसे काला हिरन, पायथन, साम्बर, धब्बेदार हिरण और नीलगाय देख सकते हैं।

उत्तरी कर्नाटक में पर्णपाती जंगलों और विविध वन्यजीवों से घिरा हुआ, दांदेली पर्यटकों को एक अद्वितीय प्राकृतिक सुंदरता प्रदान करता है। यह छोटा आधुनिक शहर रोमांचक वन्यजीव अभयारण्य, आरामदायक कयाक सवारी, राफ्टिंग, नौकायन, पक्षी विहार, रात्री शिविर, ट्रेकिंग, शांतिपूर्ण पिकनिक, मगरमच्छ और बाघ की खोज और आस–पास की गुफाओं के लिए रोमांचक यात्रा सहित अपने पर्यटकों के लिए कई आकर्षण प्रदान करता है। पश्चिमी घाट के घने पतझड़ जंगलों से घिरा दांदेली दक्षिण भारत के साहसिक क्रीड़ा स्थल के रूप में जाना जाता है। यहाँ पर भौंकने वाले हिरन, साँभर, चित्तीदार हिरन जैसे जंगली जानवरों के साथ–साथ पीले पैर वाले कबूतरों, ग्रेट पाइड हॉर्नबिल, क्रेस्टेड सर्पेन्ट ईगल और पीफाउल जैसे पक्षियों को देख सकते हैं। यहाँ पर पक्षियों की लगभग 200 प्रजातियाँ पाई जाती हैं जिनमें ऐशी स्वालो श्राइक, ड्रॉंगो, ब्राहमिनी काइट, मालाबार हॉर्नबिल और मिनीवेट शामिल हैं।

लक्षद्वीप दुनिया में सबसे प्रभावशाली उष्ण– कटिबंधीय द्वीप प्रणालियों में से एक हैं। 4200 वर्ग किलोमीटर से अधिक में फैला हुआ लक्षद्वीप 36 द्वीपों का एक छोटा सा समूह है, जो समुद्री जीवन से अत्यधिक समृद्ध हैं। चूंकि इन द्वीपों की संस्कृति और पारिस्थितिकी को बेहद नाजुक पारिस्थितिक तंत्र द्वारा समर्थित किया जाता है, इसलिए केंद्र शासित प्रदेश लक्षद्वीप समूह पर्यावरण–पर्यटन के लिए प्रसिद्ध हैं। यहां पर प्रत्येक द्वीप सुंदरता, समृद्ध समुद्री संपत्ति, रंगीन मूंगा चट्टानों, सुनहरे समुद्र तटों, स्वच्छ जल, वातावरण के संदर्भ में भिन्न है। लक्षद्वीप का सबसे बड़ा आकर्षण है प्राचीन सुंदरता और सुकून की जिंदगी। शहरी भाग–दौड़ और व्यस्त दिनचर्या के कोलाहल से दूर, आपको यहां सिर्फ समुद्री तटों से टकराती लहरों की आवाज सुनाई देगी। इस द्वीप पर आपको स्कूबा डाइविंग, स्नोर्कलिंग, कयाकिंग, कैनोइंग, विंडसर्फिंग, याच और इसी तरह की कई अन्य रोमांचक गतिविधियां मिल जाएंगी।

राजस्थान के अलवर से 37 किलोमीटर दूर स्थित, सरिस्का टाइगर रिजर्व भारत में प्रमुख वन्यजीव अभयारण्यों में से एक है। भले ही यह रणथंभौर से बड़ा है, लेकिन यह कम व्यावसायिक है और इसमें विविध वन्यजीवन की एक विस्तृत श्रृंखला है, जो इसे पारिस्थितिकीय सहिष्णुता का एक आदर्श उदाहरण बनाती है। एक विशिष्ट पारिस्थितिक तंत्र के साथ, सरिस्का टाइगर रिजर्व अद्वितीय वनस्पतियों और जीवों की कई प्रजातियों का घर है। अरावली पहाड़ियों की संकीर्ण घाटियों और खड़ी चट्टानों पर स्थित, सरिस्का टाइगर रिजर्व का शानदार परिदृश्य पर्णपाती पेड़ों और उत्कृष्ट घास के मैदानों से भरा हुआ है। सरिस्का को वन्य जीव अभयारण्य का दर्जा 1955 में मिला, और जब प्रोजेक्ट टाइगर की शुरुआत हुई, तो 1978 में इसे टाइगर रिजर्व बना दिया गया। वर्ष 1979 में इसे राष्ट्रीय पार्क घोषित कर दिया गया। अरावली पर्वत श्रंखला के बीच स्थित यह अभयारण्य बंगाल टाइगर, जंगली–बिल्ली, तेंदुआ, धारीदार लकड़बग्घा, सुनहरे सियार, सांभर, नीलगाय, चिंकारा जैसे जानवरों के लिए तो जाना ही जाता है, मोर, मटमैले तीतर, सुनहरे कठफोड़वा, दुर्लभ बटेर जैसी कई पक्षियों का बसेरा भी है। सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान विविध प्रजातियों के जंगली जानवरों–तेंदुए, चीतल, सांभर, नीलगाय, चार सींग वाला हिरण, जंगली सुअर, रीसस मकाक, लंगूर, लकड़बग्घा और जंगली बिल्लियों का शरणस्थल है।

कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान भारत का पहला राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्य है जो बड़ी संख्या में बाघों के लिए जाना जाता है। कॉर्बेट नेशनल पार्क 110 पेड़ प्रजातियों, 51 प्रकार की झाड़ियां, 30 प्रकार के बांस, 600 पक्षी प्रजातियों, सरीसृपों की 25 प्रजातियों और 50 स्तनधारी प्रजातियों का घर है। कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान वन्य जीव प्रेमियों के लिए एक स्वर्ग है जो प्रकृति की शांत गोद में आराम करना चाहते हैं। पहले यह पार्क (उद्यान) रामगंगा

राष्ट्रीय उद्यान के नाम से जाना जाता था परंतु वर्ष 1956 में इसका नाम कॉर्बेट नेशनल पार्क (कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान) रखा गया। यह भारत में जंगली बाघों की सबसे अधिक आबादी के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। जिम कॉर्बेट पार्क लगभग 160 बाघों का आवास है। इस पार्क में दिखाई देने वाले जानवरों में बाघ, चीता, हाथी, हिरण, साम्बर, पाढ़ा, बार्किंग हिरन, स्लौथ भालू, जंगली सूअर, घुरल, लंगूर और रेसस बंदर शामिल हैं। इस पार्क में लगभग 600 प्रजातियों के रंगबिरंगे पक्षी रहते है जिनमें मोर, तीतर, कबूतर, उल्लू, हॉर्नबिल, बार्बिट, चक्रवाक, मैना, मैगपाई, मिनिवेट, तीतर, चिड़िया, टिट, नॉटहैच, वागटेल, सनबर्ड, बंटिंग, ओरियल, किंगफिशर, ड्रोंगो, कबूतर, कठफोडवा, बतख, चौती, गिद्ध, सारस, जलकाग, बाज़, बुलबुल और फ्लायकेचर शामिल हैं। कॉर्बेट नेशनल पार्क पर्यटकों के लिए कोसी नदी रॉफ्टिंग का अवसर प्रदान करती है।

पर्यावरण–पर्यटन का सिद्धान्तों, दिशा–निर्देशों और स्थिरता मानदंडों पर आधारित प्रमाणन की ओर अभिमुख होना इसे पर्यटन क्षेत्र में असाधारण स्थान प्रदान करता है। पहली बार इस धारणा को परिभाषित किए जाने के बाद के वर्षों में पर्यावरण–पर्यटन के अनिवार्य बुनियादी तत्वों के बारे में आम सहमति बनी है जो इस प्रकार हैः भली–भाँति संरक्षित पारिस्थितिकी प्रणाली पर्यटकों को आकर्षित करती है, विभिन्न सांस्कृतिक और साहसिक गतिविधियों के दौरान एक कर्तव्यनिष्ठ, कम असर डालने वाला पर्यटक व्यवहार, नवीनकृत न हो सकने वाले संसाधनों की कम से कम खपत, स्थानीय लोगों की सक्रिय भागीदारी, जो प्रकृति, संस्कृति अपनी जातीय परम्पराओं के बारे में पर्यटकों को प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध कराने में सक्षम होते हैं और अंत में स्थानीय लोगों को पर्यावरण–पर्यटन का प्रबंध करने के अधिकार प्रदान करना ताकि वे जीविका के वैकल्पिक अवसर अपनाकर संरक्षण सुनिश्चित कर सकें तथा पर्यटक और स्थानीय समुदाय–दोनों के लिये शैक्षिक घटक शामिल कर सकें। पर्यावरण–अनुकूल गतिविधि होने के कारण पर्यावरण–पर्यटन का लक्ष्य पर्यावरण मूल्यों और शिष्टाचार को प्रोत्साहित करना तथा निर्बाध रूप में प्रकृति का संरक्षण करना है। इस तरह यह पारिस्थिति–विषयक अखंडता में योगदान करके वन्य जीवों और प्रकृति को लाभ पहुँचाता है। यह स्थानीय लोगों की भागीदारी उनके लिये आर्थिक लाभ सुनिश्चित करती है जो आगे चलकर उन्हें बेहतर स्तर और आसान जीवन उपलब्ध कराती है। आशा करते हैं कि कोविड–19 आपदा का असर समाप्त होते ही पर्यावरणीय पर्यटन फिर से अपनी ऊंचाइयों को छुएगा।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण संरक्षण

डॉ. दीपक कोहली,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग,
उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ

मानव जीवन प्रकृति पर आश्रित है। प्रकृति एक विराट शरीर की तरह है। जीव–जन्तु, वृक्ष–वनस्पति, नदी–पहाड़ आदि उसके अंग–प्रत्यंग हैं। इनके परस्पर सहयोग से यह वृहद शरीर स्वस्थ और सन्तुलित है। जिस प्रकार मानव शरीर के किसी एक अंग में खराबी आ जाने से पूरे शरीर के कार्य में बाधा पड़ती है, उसी प्रकार प्रकृति के घटकों से छेड़छाड़ करने पर प्रकृति की व्यवस्था भी गड़बड़ा जाती है। प्रकृति के साथ दुश्मन की तरह नहीं, वरन दोस्त की तरह व्यवहार करना चाहिए। हम दिनों दिन पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति लापरवाह होते जा रहे हैं, जिसके परिणाम भविष्य में घातक हो सकते हैं।

वर्तमान समय में पर्यावरण के समक्ष एक प्रमुख चुनौती बढ़ती जनसंख्या की है। धरती की कुल आबादी आज आठ अरब के निकट पहुंच चुकी है। बढ़ती आबादी पर्यावरण पर उपलब्ध संसाधनों पर अधिक दबाव डालती है, जिससे वसुंधरा की प्राकृतिक क्षमता प्रभावित होती है। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्यावरण के शोषण की सीमा आज चरम पर पहुंच रही है। जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम से कम करना सबसे बड़ी चुनौती है। आज हमारा पर्यावरण अपना प्राकृतिक रूप खोता जा रहा है। विश्व में बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण में तेजी से वृद्धि के साथ–साथ पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी विकराल होती जा रही है।

'पर्यावरण' शब्द का अर्थ है 'हमारे चारों ओर का वातावरण'। 'पर्यावरण संरक्षण' का तात्पर्य है कि 'हम अपने चारों ओर के वातावरण को संरक्षित करें तथा उसे जीवन के अनुकूल बनाए रखें'। यह पर्यावरण हमें क्या नहीं देता? जीवन जीने के लिए सभी आवश्यक पदार्थ एवं वस्तुएं हमें पर्यावरण से ही प्राप्त होती है। इसीलिए भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के संरक्षण को बहुत महत्त्व दिया गया है। यहाँ मानव जीवन को हमेशा मूर्त या अमूर्त रूप में पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, नदी, वृक्ष एवं पशु–पक्षी आदि के साहचर्य में ही देखा गया है। पर्यावरण और प्राणी एक–दूसरे पर आश्रित हैं। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है जितना यहाँ मानव जाति का ज्ञात इतिहास है।

वैदिक ऋषि प्रार्थना करते हैं कि पृथ्वी, जल, औषधि एवं वनस्पतियाँ हमारे लिये शान्तिप्रद हों। ये शान्तिप्रद तभी हो सकते हैं जब हम इनका सभी स्तरों पर संरक्षण करें। तभी भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण की इस विराट अवधारणा की सार्थकता है, जिसकी प्रासंगिकता आज इतनी बढ़ गई है। पर्यावरण संरक्षण का समस्त प्राणियों के जीवन तथा इस धरती के समस्त प्राकृतिक परिवेश से घनिष्ठ सम्बन्ध है। भारतीय संस्कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यहाँ पर्यावरण संरक्षण का भाव अति पुरातनकाल में भी मौजूद था पर उसका स्वरूप भिन्न था। उस काल में कोई राष्ट्रीय वन नीति या पर्यावरण पर काम करने वाली संस्थाएँ नहीं थीं।

पर्यावरण का संरक्षण हमारे नियमित क्रियाकलापों से ही जुड़ा हुआ था। इसी वजह से वेदों से लेकर कालीदास, दाण्डी, पंत, प्रसाद आदि तक सभी के काव्य में इसका व्यापक वर्णन किया गया है। भारतीय दर्शन यह मानता है कि इस देह की रचना पर्यावरण के महत्त्वपूर्ण घटकों–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से ही हुई है। समुद्र मंथन से वृक्ष जाति के प्रतिनिधि के रूप में कल्पवृक्ष का निकलना, देवताओं द्वारा उसे अपने संरक्षण में लेना, इसी तरह कामधेनु और ऐरावत हाथी का संरक्षण इसके उदाहरण हैं। कृष्ण की गोवर्धन पर्वत की पूजा की शुरुआत का लौकिक पक्ष यही है कि जन सामान्य मिट्टी, पर्वत, वृक्ष एवं वनस्पति का आदर करना सीखें।

भारत में पर्यावरण संरक्षण संबंधी जागरूकता जन–जन के हृदय में बसी है और यही कारण है कि वर्तमान समय में भी भारत में पर्यावरण संरक्षण संबंधी जन–जागरूकता काफी सक्रिय है, जिसके लिए अनेक आंदोलन भी चलाए गये। जिनमें प्रमुख निम्न हैं:

1. **चिपको आंदोलनः–**

   यह आंदोलन 1973 में तत्कालीन उत्तर प्रदेश (वर्तमान में उत्तराखण्ड) सरकार द्वारा जंगलों को काटने का ठेका देने के विरोध मे एक गांधीवादी संस्था 'दशौली ग्राम स्वराज मंडल' ने चमोली

जिले के गोपेश्वर में रेणी नामक ग्राम में प्रसिद्ध पर्यावरणविद्, सुन्दरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में प्रारम्भ किया, जिसमें इस गाँव की महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस आंदोलन के तहत् महिलाएँ पेड़ों से चिपक कर पेड़ को काटने से रक्षा करती थी। यह आंदोलन भारत का सर्वाधिक लोकप्रिय एवं चर्चित पर्यावरण संबंधी आंदोलन रहा।

2. **आप्पिको आंदोलनः–**

यह आंदोलन चिपको आंदोलन की तर्ज पर ही कर्नाटक के पाण्डुरंग हेगड़े के नेतृत्व में अगस्त 1993 में प्रारम्भ हुआ।

इसके अतिरिक्तः–

(1) पश्चिमी घाट बचाओ आंदोलन (महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल),

(2) कर्नाटक आंदोलन (आदिवासियों के अधिकार के लिए),

(3) शान्त घाटी बचाओ आंदोलन (उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वनों को बचाना),

(4) कैगा अभियान (नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र के विरोध में),

(5) जल बचाओ, जीवन बचाओ (बंगाल से गुजरात तथा दक्षिण में कन्याकुमारी तक, मछली बचाओ),

(6) बेडथी आंदोलन (कर्नाटक की जल विद्युत योजना के विरोध में),

(7) टिहरी बाँध आन्दोलन (उत्तराखण्ड मे टिहरी बाँध के विरोध में),

(8) नर्मदा बचाओ आंदोलन, (9) दून घाटी का खनन विरोध,

(9) दून घाटी का खनन विरोध,

(10) मिट्टी बचाओ अभियान,

(11) यूरिया संयंत्र का विरोध (मुम्बई से 25 किलोमीटर दूर वैशड़ में),

(12) इन्द्रावती नदी पर बाँध का विरोध (मुम्बई के इन्द्रावती नदी पर गोपाल पट्टनम एवं इचामपतल्ली बाँध का आदिवासियों द्वारा विरोध),

(13) गंध मर्दन बॉक्साइट विरोध संबंधित क्षेत्रों में संरक्षण के लिए किया आन्दोलन प्रमुख हैं।

जिस प्रकार राष्ट्रीय वन–नीति के अनुसार पारिस्थितिकी सन्तुलन बनाए रखने हेतु देश के मैदानी भागों में 33 प्रतिशत एवं पर्वतीय भागों में 66 प्रतिशत भू–भाग वनाच्छादित होना चाहिए, ठीक इसी प्रकार प्राचीन काल में जीवन का एक तिहाई भाग प्राकृतिक संरक्षण के लिये समर्पित था, जिससे कि मानव प्रकृति को भली–भाँति समझकर उसका समुचित उपयोग कर सके और प्रकृति का सन्तुलन बना रहे। अब इससे होने वाले संकटों का प्रभाव बिना किसी भेदभाव के समस्त विश्व, वनस्पति जगत और प्राणी मात्र पर समान रूप से पड़ रहा है। आज पूरे विश्व में लोग अधिक सुखमय जीवन की परिकल्पना करते हैं। सुख की इसी असीम चाह का भार प्रकृति पर पड़ता है। विश्व में बढ़ती जनसंख्या, विकसित होने वाली नई तकनीकों तथा आर्थिक विकास ने प्रकृति के शोषण को निरन्तर बढ़ावा दिया है। पर्यावरण विघटन की समस्या आज समूचे विश्व के सामने प्रमुख चुनौती है जिसका सामना सरकारों तथा जागरूक जनमत द्वारा किया जाना है।

प्रकृति के साथ अनेक वर्षों से की जा रही छेड़छाड़ से पर्यावरण को हो रहे नुकसान को देखने के लिये अब दूर जाने की जरूरत नहीं है। विश्व में बढ़ते बंजर इलाके, फैलते रेगिस्तान, कटते जंगल, लुप्त होते पेड़–पौधों और जीव जन्तु, प्रदूषणों से दूषित पानी, कस्बों एवं शहरों पर गहराती गन्दी हवा और हर वर्ष बढ़ते बाढ़ एवं सूखे के प्रकोप इस बात के साक्षी हैं कि हमने अपने धरती और अपने पर्यावरण की ठीक–ठीक देखभाल नहीं की।

हम देखते हैं कि हमारे जीवन के तीनों बुनियादी आधार वायु, जल एवं मृदा आज खतरे में हैं। सभ्यता के विकास के शिखर पर बैठे मानव के जीवन में इन तीनों प्रकृति प्रदत्त उपहारों का संकट बढ़ता जा रहा है। बढ़ते वायु प्रदूषण के कारण न केवल महानगरों में ही बल्कि छोटे–छोटे कस्बों और गाँवों में भी शुद्ध प्राणवायु मिलना दूभर हो गया है, क्योंकि धरती के फेफड़े वन समाप्त होते जा रहे हैं। वृक्षों के अभाव में प्राणवायु की शुद्धता और

गुणवत्ता दोनों ही घटती जा रही है। बड़े शहरों में तो वायु प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि लोगों को श्वास सम्बन्धी बीमारियाँ आम बात हो गई है।

वायु प्रदूषण के लिये बढ़ते वाहन भी कम उत्तरदाई नहीं हैं। बसों, कारों, ट्रकों, मोटर–साइकिलों, स्कूटर, रेलों आदि सभी में पेट्रोल अथवा डीजल ईंधन के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं। इनसे भारी मात्रा में दम घोंटने वाला काला धुआँ निकलता है, जो वायु को प्रदूषित करता है। डीजल वाहनों से जो धुआँ निकलता है उनमें हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोजन एवं सल्फर के ऑक्साइड तथा सूक्ष्म कार्बन–युक्त कणिकाएँ मौजूद रहती हैं। पेट्रोल चलित वाहनों के धुएँ में कार्बन मोनो–ऑक्साइड व लेड मौजूद होते हैं। लेड एक वायु प्रदूषक पदार्थ है। डीजल एवं पेट्रोल चालित वाहनों में होने वाले दहन से नाइट्रोजन ऑक्साइड एवं नाइट्रोजन डाइऑक्साइड भी उत्पन्न होती है जो सूर्य के प्रकाश में हाइड्रोकार्बन से मिलकर रासायनिक धूम कुहरे को जन्म देते हैं।

यह रासायनिक धूम कोहरा मानव के लिये बहुत खतरनाक है। हमारे लिये हवा के बाद जरूरी है जल। इन दिनों जलसंकट बहु–आयामी है, इसके साथ ही इसकी शुद्धता और उपलब्धता दोनों ही बुरी तरह प्रभावित हो रही हैं। एक सर्वेक्षण में कहा गया है कि हमारे देश में सतह के जल का 80 प्रतिशत भाग बुरी तरह से प्रदूषित है और भूजल का स्तर निरन्तर नीचे जा रहा है। शहरीकरण और औद्योगीकरण ने हमारी बारहमासी नदियों के जीवन में जहर घोल दिया है। हालत यह हो गई है कि मुक्तिदायिनी गंगा की मुक्ति के लिये अभियान चलाना पड़ रहा है। गंगा ही क्यों किसी भी नदी की हालत आज ठीक नहीं कही जा सकती है।

हमारी मृदा का स्वास्थ्य भी उत्तम नहीं कहा जा सकता है। देश की कुल 32 करोड़ 90 लाख हेक्टेयर भूमि में से 17 करोड़ 50 लाख हेक्टेयर जमीन गुणवत्ता के सन्दर्भ में निम्न स्तर की है। हमारी पहली वन नीति में यह लक्ष्य रखा गया था कि देश का कुल एक तिहाई क्षेत्र वनाच्छादित रहेगा। वर्तमान में हमारे देश में लगभग 22 प्रतिशत वन आवरण शेष रह गया है। इसके साथ ही अतिशय चराई और निरन्तर वन कटाई के कारण भूमि की ऊपरी परत की मिट्टी वर्षा के साथ बह–बहकर समुद्र में जा रही है। इसके कारण बाँधों की उम्र कम हो रही है, नदियों में गाद जमने के कारण बाढ़ और सूखे का संकट बढ़ता जा रहा है। आज समूचे विश्व में हो रहे विकास ने प्रकृति के सम्मुख अस्तित्व की चुनौती खड़ी कर दी है।

प्लास्टिक इस समय का प्रमुख विषाक्त प्रदूषक है। एक गैर विघटित पदार्थ होने तथा जहरीले रसायन से बना होने के कारण यह पृथ्वी, हवा और पानी को प्रदूषित करता है। आज हम दूरदराज गांव से महानगर तक प्लास्टिक कचरे की सर्वव्यापकता से त्रस्त है जगह–जगह पॉलीथीन की थैलियों और प्लास्टिक बोतल वातावरण को प्रदूषित कर रही है इस दृश्य के रचियता हम लोग ही हैं। पर्यावरण की भयावह होती तस्वीर और पारिस्थितिकी असंतुलन की समस्या का पर्यावरण के प्रति एक सजग नागरिक का दायित्व निभाना होगा।

आज दुनिया भर में अनेक स्तरों पर यह कोशिश हो रही है कि आम आदमी को इस चुनौती के विभिन्न पहलुओं से परिचित कराया जाये, ताकि उसके अस्तित्व को संकट में डालने वाले तथ्यों की उसे समय रहते जानकारी हो जाये और स्थिति को सुधारने के उपाय भी गम्भीरता से किये जा सकें। इस लोक चेतना में मीडिया की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। दुनिया में बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मीडिया में पर्यावरण के मुद्दों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की थी। भारतीय परिदृश्य में देखें तो छठे–सातवें दशक में पर्यावरण से जुड़ी खबरें यदाकदा ही स्थान पाती थी। उत्तराखण्ड के चिपको आन्दोलन और 1972 के स्टाकहोम पर्यावरण सम्मेलन के बाद इन खबरों का प्रतिशत थोड़ा बढ़ा। देश के अनेक हिस्सों में पर्यावरण के सवालों को लेकर जन जागृतिपरक समाचारों का लगातार आना प्रारम्भ हुआ। वर्ष 1984 में शताब्दी की सबसे बड़ी औद्योगिक दुर्घटना, भोपाल गैस त्रासदी के बाद तो समाचार पत्रों में पर्यावरणीय खबरों का प्रतिशत यकायक बढ़ गया। यह त्रासदी इतनी भयानक थी कि इसका असर इतने वर्षों बाद भी देखा जा सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य में हाल ही में आंध्र प्रदेश के विशाखापत्तनम से 15 किलोमीटर दूरी पर स्थित 'एलजी पॉलिमर कारखाने' में 'स्टाइरीन गैस' का रिसाव होने से कम– से–कम 11 लोगों की मौत हो गई।

पर्यावरण संरक्षण के उपायों की जानकारी हर स्तर तथा हर उम्र के व्यक्ति के लिये आवश्यक है। पर्यावरण संरक्षण की चेतना की सार्थकता तभी हो सकती है जब हम अपनी नदियाँ, पर्वत, पेड़, पशु–पक्षी, प्राणवायु और हमारी धरती को बचा सकें। इसके लिये सामान्य जन को अपने

आस–पास हवा–पानी, वनस्पति जगत और प्रकृति उन्मुख जीवन के क्रिया–कलापों जैसे पर्यावरणीय मुद्दों से परिचित कराया जाये। युवा पीढ़ी में पर्यावरण की बेहतर समझ के लिये स्कूली शिक्षा में जरूरी परिवर्तन करने होंगे। पर्यावरण मित्र माध्यम से सभी विषय पढ़ाने होंगे, जिससे प्रत्येक विद्यार्थी अपने परिवेश को बेहतर ढंग से समझ सके। विकास की नीतियों को लागू करते समय पर्यावरण पर होने वाले प्रभाव पर भी समुचित ध्यान देना होगा।

पेड़–पौधे मनुष्य को स्वच्छ वायु और आक्सीजन प्रदान करते हैं, साथ ही जलवायु सुधार, जल संरक्षण, मिट्टी के संरक्षण और वन्य जीवन की सुरक्षा करते हैं। इसलिए पेड़–पौधों की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। प्राकृतिक आपदाओं से बचाव के लिए पर्यावरण संरक्षण पर जोर देने की आवश्यकता है आज आवश्यकता इस बात की भी है कि मनुष्य के मूलभूत अधिकारों में जीवन के लिये एक स्वच्छ एवं सुरक्षित पर्यावरण को भी शामिल किया जाये। इसके लिये सघन एवं प्रेरणादायक लोक–जागरण अभियान भी शुरू करने होंगे। आज हमें यह स्वीकारना होगा कि हरा–भरा पर्यावरण, मानव जीवन की प्रतीकात्मक शक्ति है। वैज्ञानिकों का मत है कि पूरे विश्व में पर्यावरण रक्षा की सार्थक पहल ही पर्यावरण को सन्तुलित बनाए रखने की दिशा में किये जाने वाले प्रयासों में गति ला सकती है।

पर्यावरण प्रदूषण के सम्बन्ध में अंतरराष्ट्रीय चिन्ता 20वीं सदी के उत्तरार्ध में बढ़ गई थी। 30 जुलाई, 1968 को मानव पर्यावरण की समस्या पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ की आर्थिक तथा सामाजिक परिषद ने प्रस्ताव संख्या 1946 के तहत एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें कहा गया कि आधुनिक वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के परिप्रेक्ष्य में मानव तथा उसके पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों में परिवर्तन हुआ है। सामान्य सभा ने इस बात पर संज्ञानता प्रकट की। वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास ने मानव को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप पर्यावरण को आकार देने के उद्देश्य से अप्रत्याशित अवसरों को जन्म दिया है। यदि इन अवसरों को नियंत्रित ढंग से उपयोग नहीं किया गया तो अनेक गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न होंगी। सामान्य सभा ने जल प्रदूषण, क्षरण तथा भूमि के विनिष्टीकरण के अन्य प्रारूप, ध्वनि, कूड़ा–करकट तथा कीटनाशकों के गौण प्रभावों पर भी विचार किया।

मानव पर्यावरण की कुछ समस्याओं पर संयुक्त राष्ट्र संघ तथा उसकी अन्य एजेंसियाँ यथा अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन, खाद्य एवं कृषि संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, अंतरराष्ट्रीय परमाणु अभिकरण आदि कार्य कर रहे हैं। इस सम्मेलन का प्रमुख उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानवीय पर्यावरण के संरक्षण तथा सुधार की विश्वव्यापी समस्या का निदान करना था। पर्यावरण के संरक्षण के सम्बन्ध में अंतरराष्ट्रीय स्तर का यह पहला प्रयास था। इस सम्मेलन में 119 देशों ने पहली बार 'एक ही पृथ्वी' का सिद्धान्त स्वीकार किया। इसी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) का जन्म हुआ। सम्मेलन में मानवीय पर्यावरण का संरक्षण करने तथा उसमें सुधार करने के लिये राज्यों तथा अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं को दिशा–निर्देश दिये गए। प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाने की घोषणा इसी सम्मेलन में की गई।

सन 1992 में ब्राजील में विश्व के 174 देशों का 'पृथ्वी सम्मेलन' आयोजित किया गया। इसके पश्चात सन 2002 में जोहान्सबर्ग में पृथ्वी सम्मेलन आयोजित कर विश्व के सभी देशों को पर्यावरण संरक्षण पर ध्यान देने के लिये अनेक उपाय सुझाये गए। वस्तुतः पर्यावरण के संरक्षण से ही धरती पर जीवन का संरक्षण हो सकता है, अन्यथा मंगल आदि ग्रहों की तरह धरती का जीवन–चक्र भी एक दिन समाप्त हो जाएगा।

हमारे देश में 19 नवम्बर, 1986 से पर्यावरण संरक्षण अधिनियम लागू हुआ। तदनुसार जल, वायु, भूमि इन तीनों से सम्बन्धित कारक तथा मानव, पौधों, सूक्ष्म–जीव, अन्य जीवित पदार्थ आदि पर्यावरण के अन्तर्गत आते हैं। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के कई महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं, जैसे–

1. पर्यावरण की गुणवत्ता के संरक्षण हेतु सभी आवश्यक कदम उठाना।
2. पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन हेतु राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बनाना और उसे क्रियान्वित करना।
3. पर्यावरण की गुणवत्ता के मानक निर्धारित करना।
4. पर्यावरण सुरक्षा से सम्बन्धित अधिनियमों के अन्तर्गत राज्य–सरकारों, अधिकारियों और सम्बन्धितों के काम में समन्वय स्थापित करना।

5. ऐसे क्षेत्रों का परिसीमन करना, जहाँ किसी भी उद्योग की स्थापना अथवा औद्योगिक गतिविधियाँ संचालित न की जा सकें। उक्त–अधिनियम का उल्लंघन करने वालों के लिये कठोर दंड का प्रावधान है।

पर्यावरण हम सभी को सतर्क कर रहा है कि अगर हमने प्राकृतिक संसाधनों का सोच–समझकर इस्तेमाल नहीं किया तो हमारे पास कुछ भी नहीं बचेगा। पर्यावरण से जुड़े कुछ तथ्य हमें चेतावनी दे रहे हैं– जैसे सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट की रिपोर्ट की मानें तो भारत की गंगा और यमुना नदियों को दुनिया की 10 सबसे प्रदूषित नदियों में शुमार किया गया है। एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के 20 सबसे ज्यादा प्रदूषित शहरों में अकेले 13 शहर सिर्फ भारत में हैं। अगर एक टन कागज को रिसाइकल किया जाए तो 20 पेड़ों और 7000 गेलन पानी को बचाया जा सकता है। यही नहीं इससे जो बिजली बचेगी उससे 6 महीने तक घर को रोशन किया जा सकता है।

'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम' की रिपोर्ट के अनुसार, इंसानों को होने वाले 60% संक्रामक रोगों के मूल स्रोत जानवर होते हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की रिपोर्ट के अनुसार, पर्यावरणीय परिवर्तन या पारिस्थितिकी तंत्र में बदलाव के कारण कोविड–19 जैसे जूनोसिस रोग उत्पन्न हुए हैं।

पिछले 50 वर्षों के दौरान प्रकृति के परिवर्तन की दर मानव इतिहास में अभूतपूर्व है तथा प्रकृति के परिवर्तन का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण भूमि उपयोगिता में परिवर्तन है। जनसंख्या बढ़ने के साथ ही अत्यधिक मात्रा में प्राकृतिक संसाधन का दोहन करना, अत्यधिक पैदावार हेतु कृषि में खाद का उपयोग करना, मानव द्वारा जंगलों एवं अन्य स्थानों पर अतिक्रमण करना, इत्यादि पारिस्थितिक तंत्र में बदलाव के कारण हैं।

घर–परिवार ही सही अर्थों में शिक्षण की प्रथम पाठशाला है और यह बात पर्यावरण शिक्षण पर भी लागू होती है। परिवार के बड़े सदस्य अनेक दृष्टान्तों के माध्यम से ये सीख बच्चों को दे सकते हैं, जैसे कि–

1. 'यूज एंड थ्रो' की दुनिया को छोड़ 'पुनः सहेजने' वाली सभ्यता को अपनाया जाये।
2. अपने भवन में चाहे व्यक्तिगत हो या सरकारी कार्यालय हो, वर्षा जल–संचयन प्रणाली प्रयोग में लाएँ।
3. जैविक–खाद्य अपनाएँ।
4. पेड़–पौधे लगाएँ– अपने घर, फ्लैट या सोसाइटी में हर साल एक पौधा अवश्य लगाएँ और उसकी देखभाल करके उसे एक पूर्ण वृक्ष बनाएँ ताकि वह विषैली गैसों को सोखने में मदद कर सके।
5. अपने आस–पास के वातावरण को स्वच्छ रखें। सड़क पर कूड़ा मत फेंके।
6. नदी, तालाब जैसे जलस्रोतों के पास कूड़ा मत डालें। यह कूड़ा नदी में जाकर पानी को गन्दा करता है।
7. कपड़े के थैले इस्तेमाल करें, पॉलिथिन व प्लास्टिक को 'ना' कहें।
8. छात्र उत्तरपुस्तिका, रजिस्टर या कॉपी के खाली पन्नों को व्यर्थ न फेंके बल्कि उन्हें कच्चे कार्य में उपयोग करें। पेपर दोनों तरफ इस्तेमाल करें।
9. जितना खाएँ, उतना ही लें।
10. दिन में सूरज की रोशनी से काम चलाएँ।
11. काम नहीं लिये जाने की स्थिति में बिजली से चलने वाले उपकरणों के स्विच बन्द रखें, सी.एफ. एल. का उपयोग कर ऊर्जा बचाएँ।
12. वायुमण्डल में कार्बन की मात्रा कम करने के लिये सौर–ऊर्जा का अधिकाधिक इस्तेमाल करें, सोलर–कुकर का इस्तेमाल बढ़ाएँ तथा स्वच्छ ईंधन का प्रयोग करें।
13. पानी का प्रयोग करने के बाद नल को तुरन्त बन्द कर दें। ब्रश एवं शेव करते समय नल खुला न छोड़ें, कपड़े धोने के बाद साबुन वाले पानी से फर्श की सफाई करें।
14. फोन, मोबाइल, लैपटॉप आदि का इस्तेमाल 'पॉवर सेविंग मोड' पर करें।
15. जितना हो सके ठंडे पानी से कपड़े धोएँ, 'ड्रायर का प्रयोग न करें।'
16. जितना हो सके पैदल चलें– कम दूरी तय करने के लिये पैदल चलें या साइकिल का प्रयोग करें। कार पूल करें या सार्वजनिक वाहन प्रणाली का प्रयोग करें।
17. पैकिंग वाली चीजों को कम–से–कम काम में लें–

औद्योगिक कचरे में एक तिहाई अंश इन्हीं का होता है।

18. घर में चीजों का भण्डारण दुरुस्त तरीके से हो ताकि उन्हें व्यर्थ होने से बचाया जा सके।

19. डिस्पोजेबल वस्तुओं जैसे प्लास्टिक के गिलास, पानी की छोटी–छोटी बोतल और प्लेट के प्रयोग से परहेज करें।

20. विशिष्ट अवसरों पर एक पौधा अनिवार्यतः उपहार स्वरूप दें।

21. कूड़ा करकट, सूखे पत्ते, फसलों के अवशेष और अपशिष्ट न जलाएँ। इससे पृथ्वी के अन्दर रहने वाले जीव मर जाते हैं और वायु प्रदूषण स्तर में वृद्धि होती है।

22. तीन आर–रिसाइकिल, रिड्यूस और रियूज का हमेशा ध्यान रखें।

उल्लेखनीय है कि अगर दुनिया भर में प्राकृतिक संसाधनों का सोच–समझकर और सम्भलकर उपयोग नहीं किया गया, तो धरती लोगों की जरूरतों को पूरा नहीं कर पाएगी। पर्यावरण की रक्षा करने में लापरवाही बरतने का सीधा अर्थ है अपना विनाश करना। हम अपने दैनिक जीवन में पर्यावरणीय संसाधनों का प्रयोग करते हैं। इनमें से कुछ नवीनीकरणीय हैं और कुछ नहीं। मानव जो कुछ भी करता है उसका सीधा प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। पिछली दो सदियों में जनसंख्या में बेतहाशा वृद्धि हुई है तथा विकास एवं प्रौद्यौगिकी में तीव्र विकास से पर्यावरण पर पड़ने वाला दुष्प्रभाव कई गुना बढ़ गया है।

हमें यह शीघ्र जान लेना चाहिए कि मानव जाति के कल्याण एवं अस्तित्व के लिए पर्यावरण का संरक्षण अतिआवश्यक है। भूमि, वायु, पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों का बुद्धिमतापूर्ण ढंग से करना पर्यावरण संरक्षण के लिए एक आवश्यक कदम है जो केवल पर्यावरण के संबंध में जन–जागरूकता से ही सम्भव है। यहां पर यह भी उल्लेखनीय है कि कोविड–19 रूपी महामारी के कारण हुए लॉकडाउन से वायु प्रदूषण में काफी हद तक कमी आई है और हमारी आबोहवा साफ–सुथरी हुई है। यह तथ्य इस ओर इशारा करता है कि यदि हम पर्यावरण संरक्षण पर ध्यान नहीं देंगे, तो प्रकृति स्वयं उसका संज्ञान लेकर किसी न किसी आपदा, जैसे कोविड–19, के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होगी एवं अपने को स्वच्छ एवं निर्मल कर लेगी। इसलिए हम सभी को आज के परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण संरक्षण के महत्त्व को जान लेना आवश्यक है तथा अपने स्तर पर सतत प्रयासरत रहकर पर्यावरण संरक्षण के अभियान में अपना अमूल्य एवं महत्वपूर्ण योगदान देना हमारा नैतिक कर्तव्य भी है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार जड़ी–बूटियों की खेती

डॉ. बिनीता देवी,
डॉ. आशुतोष कुमार और डॉ. के. आर. मौर्य
एकेएस विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश

जड़ी–बूटियों का ऐतिहासिक परिदृश्य

भारत–जड़ी बूटियों का एक देश है। जड़ी–बूटियों का इतिहास लगभग 7000 वर्ष पुराना है। शारीरिक कष्ट एवं बीमारियों में जड़ी–बूटियों एवं उनसे बने उत्पादों के प्रयोग का पहला लिखित प्रमाण ऋग्वेद (5000 ई. पू.) में 67, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद (4500–2500 ई.पू.) में 1270 जड़ी–बूटियों के औषधीय गुणों एवं प्रयोग का वर्णन विद्यमान है। इन्हीं जड़ी–बूटियों पर आयुर्वेद की नीव टिकी है। इसके अतिरिक्त पुराणों, उपनिषदों, महाभारत एवं रामायण जैसे ग्रंथों में इनके प्रयोग के अनेक प्रमाण मिलते हैं। इन जड़ी–बूटियों से कई पौधों के अद्भुत गुणों के कारण ही मनुष्य उनकी पूजा करने लगे। तुलसी, नीम, साल तथा पीपल इसके सशक्त उदाहरण हैं।

जड़ी–बूटियों की अलिखित वृतान्त का पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण

हजारों वर्षों तक जड़ी–बूटियों के प्रयोग का यह ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होता गया। परंतु मानव मस्तिष्क की सीमाओं के कारण इस दौरान अनेक अति महत्वपूर्ण जड़ी–बूटियां एवं उनके प्रयोग का ज्ञान लुप्त हो चुका है। इतिहास में अनेक ऐसी जीवनदायी औषधियों का विवरण मिलता है जो या तो आज लुप्त हो चुकी है या फिर उनका ज्ञान मनुष्य को नहीं है। औषधीय ज्ञान हस्तांतरण की गुरु शिष्य या पिता–पुत्र परंपरा की गंभीर कमियों का अहसास चरक और सुश्रुत को आज से 2200–2700 वर्ष पहले ही हो चुका था जिसके कारण उन्होंने लोक कल्याण के लिए आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की नींव रखी थी। उन्होंने लगभग 1200 जड़ी–बूटियों के गुणों तथा उनके विशिष्ट प्रयोगों को पहली बार प्रणालीबद्ध तरीके से लिपिबद्ध किया था। चरक ने समस्त जड़ी–बूटियों को बीमारियों के आधार पर 50 तथा सुश्रुत ने 38 वर्गों में बांटा है जो आज भी मानव कल्याण कर रही हैं।

जड़ी–बूटियों के प्राचीन प्रकाशन

सोलहवीं तथा 17वीं शताब्दी में जड़ी–बूटियों पर विदेशी तथा भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा अनुसंधान एवं प्रकाशन कार्य प्रारंभ किया गया था। 18वीं शताब्दी में इन पर महत्वपूर्ण प्रकाशन किए गए जिनमें 1877 में यू.सी. दत्तों द्वारा ''मैट्रीयामैडीका ऑफ हिन्दूज'' तथा 1889–91 में डेमोक एवं उनके सहयोगियों द्वारा ''फारमाकों ग्राफिया इन्डिका'' मुख्य है। इनके अतिरिक्त 18वीं तथा 20वीं शताब्दी में छोटी–बड़ी सैकड़ों किताबें जड़ी–बूटियों तथा उनके प्रयोग पर छपी हैं। अधिकांश आधुनिक किताबें तथा साहित्य 18वीं शताब्दी की ही कुछ गिनी–चुनी किताबों की ही सामग्री से भरी पड़ी है। कुछ अनुसंधानकर्ताओं के जड़ी–बूटियों के सैकड़ों वर्ष पुराने प्रयोगों को आधुनिक वैज्ञानिक कसौटी पर खरा उतरता देख वैज्ञानिकों में उत्साह जगा। इसके फलस्वरूप लगभग 3000 जड़ी–बूटियों को उनके औषधीय गुणों के लिए पहचान लिया गया है। आज देश के अनेक वैज्ञानिक एवं औद्योगिक संस्थान इन जड़ी–बूटियों पर अनुसंधान कार्य में जुटे हैं।

भारत में जड़ी–बूटियां के व्यापार की अपार संभावनाएं

भारत उपमहाद्वीप में जड़ी–बूटियों की डेढ़ हजार से भी अधिक ऐसी प्रजातियां पाई जाती हैं जिन्हें विश्व में अनेक प्रकार की दवाइयां बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। संपूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 80 हजार डॉलर मूल्य की जड़ी–बूटियों का व्यापार होता है जिसमें से कुल यूरोपीय मांग के लगभग 12 प्रतिशत की आपूर्ति भारतीय उपमहाद्वीप से होती है। हमारे देश में ऐसी अनेकों जड़ी–बूटियों विद्यमान हैं जिनकी न केवल विदेशी बाजारों में पर्याप्त मांग है बल्कि घरेलू बाजारों में भी बड़े पैमाने पर मांग है। इनमें से आंवला, अश्वगंधा, अर्जून,

कुटकी, गुडुची, तुलसी, सोंठ, नीम, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, शतावर सदाबहार, गुग्गुल, सर्पगंधा, घृतकुमारी, कालमेद्य, पुर्ननवा, सफेद मुसली, अशोक तथा कोकुम का लगभग 70 से 90 करोड़ रूपये का व्यापार हमारे देश में हो रहा है।

जड़ी–बूटियों की खेती–ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार

भारत ऋषि–मुनियों की भूमि है यहां गंगा, यमुना, गोदावरी जैसी नदियां बहती हैं। इस धरती पर बहुमूल्य जड़ी–बूटियां प्राकृतिक रूप से जंगलों में पाई जाती थी। जहां से इन्हें प्राप्त करके औषधीय उपयोग या बिक्री के काम में लाया जाता था गत कुछ दशकों में जंगलों के भारी मात्रा में काटे जाने के कारण इनकी जंगलों से उपलब्धता काफी कम हो गई है तथा इनमें से कई पौधे तो लुप्त होने की कगार पर है, जिसके कारण अब इनकी कृषिकरण की आवश्यकता प्रबल हो गई है।

जड़ी–बूटियों की खेती–ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सुदृढ़ आधार है। कृषक प्रचलित फसलों की अपेक्षा इन्हें, एक लाभदायक विकल्प के रूप में अपना रहें हैं। औषधीय फसल विभिन्न प्रकार की मृदाओं एवं असिंचित क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। जड़ी–बूटियां अधिक कठोर होने की वजह से कीट तथा रोग से कम ग्रसित होती है और इनकी खेती के लिए कीटनाशक रसायनों की आवश्यकता नहीं पड़ती है। अस्वादिष्ट तथा कड़वे स्वाद के कारण जानवर भी इन फसलों को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में बढ़ती मांग के कारण इनकी बिक्री में कोई कठिनाई नहीं आती है। अनेकों बीमारियों में दवाई के काम आने के कारण खेत से इन्हें शुद्ध अवस्था में प्राप्त किया जा सकता है और मिलावटी तथा महंगी दवाओं से बचाया जा सकता है। जड़ी–बूटियों की खेती से अन्य फसलों की तुलना में भारी शुद्ध आय प्राप्त होती है।

जड़ी–बूटियों के लिए भारत की जलवायु उपयुक्त

भारत के विभिन्न प्रदेशों की जलवायु तथा मिट्टी अनेक प्रकार की जड़ी–बूटियों की खेती के लिए उपयुक्त है। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा, बिहार, हरियाणा आदि राज्यों में सफेद मूसली, अर्जुन, अशोक, अश्वगंधा, सर्पगंधा, सतावर, बच, कालहारी, कौंच, मेन्था, लेमनग्रास, जावा सिट्रोनेला, पामारोजा, आवंला, गुग्गल, चन्द्रशूर, लहसुन अदरक, बायबिंडग, सिन्दूरी, पपीता, मुश्कदाना आदि की फसलें सफलतापूर्वक उगायी जा सकती हैं। भारत में उष्ण, उपोष्ण तथा शीत कटिबंधीय जलवायु की उपलब्धता के कारण यहां सभी प्रकार की जड़ी–बूटियों की खेती संभव है। जड़ी बूटियों के लिए भारतीय हिमालय क्षेत्र सबसे उपयुक्त माना जाता है। इस क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के औषधीय पादप को उगाया जा सकता है।

जड़ी–बूटियों की खेती के मुख्य अवयव

किसी भी जड़ी–बूटी की खेती प्रारंभ करने से पहले कृषकों को कुछ मौलिक तथा महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान देना अति आवश्यक है जो निम्नलिखित हैं:–

जड़ी–बूटियों की खेती का पूर्ण प्रशिक्षण

जड़ी–बूटियों की खेती का क्षेत्र एक नया क्षेत्र है इसलिए जो किसान भाई जड़ी–बूटियों की खेती करने के इच्छुक हों उन्हें सर्वप्रथम किसी ऐसी संस्था से इनकी खेती से संबंधित प्रशिक्षण अनिवार्यतः प्राप्त करना चाहिए जो इस क्षेत्र में नवीन व्यावहारिक जानकारी रखती हो, जहां क्षेत्र से संबंधित विशेषज्ञ उपलब्ध हों तथा जो आपको इन पौधों की खेती की रूबरू जानकारी प्रदान करें। पहले छोटे स्तर पर खेती की शुरुआत करें।

जड़ी–बूटियों की खेती: प्रारंभ में छोटे स्तर पर शुरू करना चाहिए जिससे पहले वर्ष में इस कार्य में आने वाली कठिनाइयों/परेशानियों, बाजार की स्थिति, इस क्षेत्र में रीति–रिवाजों तथा अन्य पहलुओं की व्यावहारिक जानकारियां प्राप्त हो सकें। 1/4 एकड़ से अधिक क्षेत्र में सफेद मुसली, एक एकड़ से अधिक क्षेत्र में मेंथा, एक एकड़ से अधिक क्षेत्र में लेमन ग्रास, 1/2 एकड़ से अधिक क्षेत्र में कलिहारी नहीं लगाना चाहिए।

जड़ी–बूटियों की खेती वाले पुराने क्षेत्रों का भ्रमण आवश्यक

जिन क्षेत्रों में जड़ी–बूटियों की खेती पहले से हो रही हो, उनका भ्रमण अवश्य करना चाहिए ताकि खेती का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त हो सके तथा उस क्षेत्र के किसानों से भी जान–पहचान हो सके। इससे खेती की पूरी

जानकारी सही–सही हो जाएगी।

बीज तथा रोपण सामग्री की व्यवस्था

जड़ी–बूटियों के बीज तथा रोपण सामग्री विश्वास पात्र व्यक्तियों, पौधशालाओं, संस्थाओं तथा कृषि विश्व विद्यालय से ही खरीदनी चाहिए। इस क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्ति को यह ध्यान सदैव रखना चाहिए कि यह कार्य हम केवल आर्थिक लाभ के लिए नहीं कर रहे हैं, बल्कि इसमें संपूर्ण मानव जाति का हित निहित है तथा इससे हमारे प्राचीन संस्कार तथा परंपराएं भी जुड़ी हुई हैं। ये जड़ी–बूटियां एक स्वस्थ पर्यावरण वाली दुनिया का निर्माण करेंगी परंतु इन्हें जी–जान से प्यार करना होगा।

जड़ी–बूटियों की विपणन की व्यवस्था

जड़ी–बूटियों की खेती शुरू करने से पहले विपणन की व्यवस्था सुनिश्चित कर लेनी चाहिए। खरीददारों से कभी भी झूठे वायदे न करके उन्हें सही ब्यौरा देना चाहिए। उनको विश्वास में लेना अति आवश्यक है।

जमीन के दस्तावेजों में खेती की प्रविष्टी आवश्यक

आप जिस औषधीय पौधे की खेती कर रहे हों, उसका रिकार्ड पटवारी लेखपाल के कागजों/खसरा, खतौनी में अनिवार्य रूप से दर्ज करवाना चाहिए।

जड़ी–बूटियों की खेती–स्वस्थ जीवन का आधार

आज कल जबकि प्रचलित परंपरागत खेती प्रतिवर्ष अलाभकारी होती जा रही है, जड़ी–बूटियों की खेती को स्वस्थ वातावरण तथा लाभदायक व्यवसाय के रूप में अपनाया जा सकता है क्योंकि इनकी विश्व के बाजारों में अधिक मांग है। आज भी विश्व के सभी देशों के लोगों की आंखें भारत के ऋषि–मुनियों द्वारा बताई गई जड़ी–बूटियों पर टिकी हैं। जिन जड़ी–बूटियों के मात्र सेवन से बुढ़ापा जवानी में बदल गया तथा वे ऋषि–मुनि इच्छा मृत्यु को प्राप्त हुए थे। पूरे समाज को स्वस्थ तथा शांतिपूर्ण जीवन की राह दिखाई थी। अतः जड़ी–बूटियों की खेती स्वस्थ जीवन का आधार है।

जड़ी–बूटियां अन्य फसलों के लिए हितकारी तथा स्वस्थ पर्यावरण की निर्माता हैं

आज के नवीन शोधों से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जड़ी–बूटियां केवल मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा ही नहीं करती हैं बल्कि हमारे खेत–खलियानों तथा हमारे बाग–बगीचों के पौधों के स्वास्थ्य की भी रक्षा करती हैं। मिट्टी की गुणवत्ता सुधारती हैं तथा पौधों को कीड़े–मकोड़े तथा अन्य बीमारियों से बचाती हैं। आज इस तथ्य से काफी लोग अनभिज्ञ हैं कि जड़ी–बूटियों को दूसरी फसलों के साथ अंतरवर्ती फसल के रूप में उगाकर हम अपनी फसलों को कीड़ों तथा अन्य बीमारियों से बचा सकते हैं और हमें जहरीले कीटनाशकों एवं फफूंदी नाशकों का उपयोग नहीं करना पड़ेगा। इस प्रकार हम जड़ी–बूटियों के माध्यम से पूरे वातावरण को प्रदूषित होने से बचा लेते हैं। पर्यावरण सुरक्षा का यह एक छोटा किंतु उपयोगी कदम हैं।

ककड़ी, शकरकंद तथा पत्ता गोभी की फसलों में सोवा की अंतरवर्ती फसल बोने से इन फसलों में लगने वाले कीड़े छोड़कर भाग जाते हैं। सोवा की फसल से एक प्रकार का रसायन श्रावित होता है जिसकी गंध से कीड़े भाग जाते हैं। टाल क्षेत्रों में चना में धनियां की फसल उगाने से फली छेदक कीड़ों का आक्रमण प्रायः समाप्त हो जाता है। लाल मिर्च की फसल में सौंफ अंतरवर्ती फसल उगाने से लाल मिर्च पर लगने वाले कीड़ों का आक्रमण समाप्त हो जाता है। उत्तर बिहार में तंबाकू की फसल में लहसुन इसलिए उगाया जाता है कि लहसुन के कारण तंबाकू के कीड़ों का प्रकोप समाप्त हो जाता है।

वन हो एक औषधियों का :

जड़ी–बूटियों से ही नाना प्रकार की औषधियों का निर्माण हो रहा है। दुनिया के लोगों को अच्छा स्वास्थ्य, प्रसन्नता तथा तनाव रहित जीवन जड़ी–बूटियों के सानिध्य से ही प्राप्त होगा। अतः लेखक का विचार है कि भारत के हर गांव में प्रत्येक घर के सामने एक नीम का वृक्ष अवश्य लगाया जाए। हर गांव में एक जड़ी–बूटियों का वन लगाया जाए। गांव का हर व्यक्ति जड़ी–बूटियों के वन की देख–रेख करे। कौन सी जड़ी–बूटी किस रोग में कैसे इस्तेमाल की जाएगी, इसका प्रशिक्षण ग्रामीण महिलाओं, युवकों तथा युवतियों को दिया जाए तभी एक स्वस्थ पर्यावरण तथा सुखी मानव समाज का भारत में निर्माण हो सकेगा।

मिनी गौरैया

मेहता नगेन्द्र सिंह
कंकड़बाग, पटना

कंक्रीट के उभरते जंगल के बीच एक मेरा छोटा–सा कांटेजनुमा मकान स्थित है, जिसके अहाते में कुछ पेड़–पौधे खड़े हैं। कभी कभार फूल और फल का आमद होता रहता है। लेकिन विभिन्न प्रकार की चिड़ियों के कलरव कभी समाप्त नहीं हुए। हां, सुबह–शाम के शोरगुल में थोड़ी कमी महसूस की जाने लगी। उस समय कारण पर ध्यान नहीं गया। गौरैया का घर में आना–जाना बना रहा।

कुछ दिन बाद तबादले पर बेटा मनीष, बहू नेहा अपने पुत्र रौनक और पुत्री मिनी के साथ पटना आ गये। घर गुलजार हो उठा। मनीष भारत सरकार के उपक्रम बी. एस.एन.एल. में अधिकारी है। इसलिए दोनों बच्चों का दाखिला समीप के केंद्रीय विद्यालय में आसानी से हो गया। रौनक थ्री और मिनी वन स्टैण्डर्ड में। विद्यालय पहुँचाना और वहां से वापस घर ले आना मेरा रूटीन बन गया। घर पर रौनक के हाथ में बैट और बंदूक, मिनी के हाथ में खिलौने का पिटारा हमेशा रहता। दोनों के बीच खटपट होते रहना स्वाभाविक रूप से चलता। अक्सर मुझे जज का काम भी करना पड़ता।

दोनों बच्चों के रहने पर घर के बरामदे पर गौरैया का आवागमन बढ़ने लगा। मिनी को देख गौरैया पास आकर फुदकती रहती। लेकिन रौनक को देखते ही भाग जाती। मिनी का झुकाव भी गौरैया के प्रति अधिक बढ़ने लगा। स्कूल से आते ही गौरैया के पीछे पड़ जाना उसका स्वभाव बन गया। बरामदे पर अन्न के दाने छिड़क देना और प्लास्टिक के मग में बाहर पानी रख देना रोज का काम हो गया। इस कारण बरामदे के आगे बरादरी पर गौरेया की भीड़ बढ़ती गई। कभी–कभी अन्य चिडियां भी लोभवश चली आती। रौनक की बंदूक भी गौरैया के निशाने पर रफ्तार पकड़ने लगी। इस बात पर मिनी परेशान रहने लगी। जब भी रौनक की बंदूक चलती, मिनी चिल्ला उठती, झगड़ा कर बैठती। समझाने और समझौता कराने में हम लोग भी परेशान हो जाते। रौनक भी जिद कर बैठता। उसकी बंदूक अब पेड़ पर भी निशाना लगाने लगी। दोनों भाई–बहन में छत्तीस का संबंध गहराता गया। घर में तनाव का माहौल बन गया। रौनक का कहना होता कि जब वह दाना लेकर गौरैया के पास जाता तो क्यों गौरैया भाग जाती है, जबकि मिनी के आसपास फुदकने लगती। कई बार रौनक को समझाते हुए कहा गया कि गौरैया को बंदूक नहीं, प्यार चाहिए। रौनक पर इसका कोई असर नहीं पड़ा।

एक दिन मम्मी के साथ मिनी पड़ोस के घर गई थी। मौका पाकर रौनक ने छिपते हुए एक गौरैया पर गोली चला दी। गोली गौरैया से टकरा गई। गोली प्लास्टिक की होते हुए भी गौरैया को हताहत कर दी। गौरैया छटपटा कर दम तोड़ दी। रौनक उछल–उछल कर ताली पीटने लगा। वाह मारा–वाह मारा का शोर सुनकर मैं बाहर बरामदा पर निकला। देखकर अवाक हो गया। अन्य गौरैया के बीच चूँ–चूँ का हाहाकार मच गया। मैं क्या करता। गुस्से में रौनक को एक झापड़ जड़ दिया। वह रोता हुआ नानी के पास चला गया। मृत गौरैया को चारदिवारी के बाहर फेंकना जरूरी था। जैसे ही उसे लेकर बाहर जाने लगा कि अचानक मिनी मेरे समक्ष आ धमकी। छिपाने के क्रम में मृत गौरैया नीचे गिर गई, किसने मारा? क्यों मारा? हाय मेरी गौरैया। रोने की रफ्तार तेज होती गई। चंद मिनटों में मिनी बेहोश होकर गिर गई। नेहा उसे उठाकर घर के अंदर ले आई। निढाल मिनी बिल्कुल शांत और शिथिल हो गई। पड़ोस में स्थित नर्सिंग होम से डॉ. मधुकर को बुलाया गया। जांचोपरांत डॉ. मधुकर ने कहा–बच्ची गंभीर सदमे में चली गई है। होश में आने में समय लगेगा। दवा का असर थोड़ा धीमा होगा। असाधारण स्थिति की सूचना शीघ्र देनी है कहकर डॉ. मधुकर चले गए।

शाम को मनीष अधिकारिक दौरे से लौटा। वस्तुस्थिति से अवगत होते ही रौनक पर बरस पड़ा। रौनक वैसे ही भयभीत था। मार खाकर वह रोने लगा। उसके प्रति किसी का दयाभाव नहीं देखा गया। ग्लानि से पीड़ित रौनक उठा और अपनी बंदूक को तोड़कर मिनी के कमरे में फेंक दिया। आहट से मिनी थोड़ा कराह उठी, पर उसका अचेतन ज्यों का त्यों बना रहा। मनीष ने कोई

जोखिम लेना उचित नहीं समझा। डॉ. मधुकर के नर्सिंग होम में मिनी को भर्ती करा दिया। रातभर परेशानी और चिंता बनी रही।

सुबह मिनी के शरीर में थोड़ी सुगबुगाहट हुई। अधखुली आंखों से मम्मी को देखा और पूछ बैठी—मम्मी स्कूल जाना है, जल्दी तैयार कर दो। मम्मी ने कहा मिनी तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। आज स्कूल नहीं जाना है। अभी तुम डाक्टर अंकल के नर्सिंग होम में हो। इस बीच डॉ. मधुकर भी मिनी को देखने पहुँच गए। गहन जांच के बाद डॉ. मधुकर ने कहा मिनी ठीक हो रही है। इसे दूध और बिस्कुट खिला दें। उम्मीद है दोपहर के बाद मिनी को घर भेज देंगे।'' मिनी डाक्टर अंकल को टुकुर—टुकुर देखती रही।

दोपहर के बाद मिनी घर आ गई। उसकी नजरें कभी पेड़ पर, कभी बरामदे की ग्रिल पर, तो कभी चारदिवारी के बाहर दौड़ती रही। निश्चित ही वह गौरैया को खोज रही है। मुझे भी लगा यह सन्नाटा क्यों? क्या सभी पक्षीगण मातम मनाने परिसर को छोड़ गए? बच्ची मिनी की मनोस्थिति क्या रहेगी? इसी बीच मिनी सुबुकती हुई मेरे समीप आई। धीमे स्वर से पूछी— 'नानाजी, अब कोई और गौरैया मेरे घर नहीं आयेगी?' मैंने उसे अपनी गोद में बिठाकर कहा'' नहीं ऐसी बात नहीं है, अब तुम घर आ गई हो, गौरैया भी जरूरी आयेगी, मैं उसे बुलाऊँगा। देखो, तुम्हारी नानी ने पेड़ के नीचे दाना छिड़क दिया है और पतेली में पानी भी रख दिया है। भैया ने भी अपनी बंदूक तोड़ दी है। मान लो अभी तुरंत गौरैया नहीं भी आती है, तो कोई हर्ज नहीं। हमारे लिए तुम्हीं गौरैया हो। आज से तुम्हें ही हम लोग मिनी की जगह मिनी गौरैया के नाम से पुकारा करेंगे। गाल पर हल्की थपकी देकर गोद से उतार दिया। मिनी गौरैया के चेहरे पर हल्की मुस्कान झलक उठी। मेरा नाम मिनी गौरैया है, मिनी गौरैया कहती हुई बरामदे पर फुदकने लगी। इस अनुगूंज से घर का वातावरण खुशनुमा बन गया।

ग़ज़ल

मेहता नगेन्द्र सिंह
कंकड़बाग, पटना

रोज सबेरे हमें जगा जाती है गौरैया
फुदक–फुदक कर भैरवी सुना जाती है गौरैया

भोर की पहुनाई से घर आंगन भी खुश हो जाता
चहलकदमी का सिलसिला बना जाती है गौरैया

खेत में पड़े या फिर फसलों पर रेंगते कीड़े
स्वाद वाला भोज्य होता बता जाती है गौरैया

सांप हो बिल्ली हो या फिर कोई और घुसपैठिया
शोर गुल मचा प्रतिरोध जता जाती है गौरैया

नीड़ के वास्ते झांकती है घर का कोई कोना तो
वंश बढ़ाने का अहसास करा जाती है गौरैया

एक मोहक सा रिश्ता बनाया बचपन से लेकिन
यदा कदा ही चेहरा अब दिखा जाती है गौरैया

धरा से गगन तक सैर करने वाली नहीं है दूजा
सबक संरक्षण की याद दिला जाती है गौरैया

बात यहां केवल गौरैया की नहीं समझे 'मेहता'
बल्कि पाठ पर्यावरण का पढ़ा जाती है गौरैया

पानी

प्रो. चित्र भूषण श्रीवास्तव 'विदग्ध'
म. प्र. राज्य विद्युत मण्डल, जबलपुर

जीवन के लिए एक बड़ा वरदान है पानी
अनमोल है खेतों की तो बस जान है पानी
पानी के बिना जिंदगी आसान नहीं है
पानी जहां कम है वहां धन–धान्य नहीं है

पानी को रोकने को बांध बनाओ
पानी नहीं तो किसी का कल्याण नहीं है
धरती के लिए आसमान का दान है पानी
पानी नहीं तो भूमि का सम्मान नहीं है

पानी बिना खेती किसान नहीं है
वर्षा से मिली हर बूंद के पानी को बचाओ
खेती के बिना गांव का उत्थान नहीं है
सच मानो तो संसार का भगवान है पानी

पानी नहीं तो कोई भी सामान नहीं है
पानी बिना उत्साह या अरमान नहीं है
पेड़ पौधे पशु और खुद को बचाओ
बेपानी के इंसान का कोई मान नहीं है

शहर की समृद्धि की पहचान है पानी
मिट्टी का रोकने कटाव ,बांध बनाओ
मेढ़ बनाओ ,वन लगाओ ,घास उगाओ
खेत में नई कीमती फसलों को उगाने
मिल चलो मेहनत करो बढ़ शहर सजाओ
हरियाली और पर्यावरण का प्राण है पानी

नदी की मनोव्यथा

प्रो. चित्र भूषण श्रीवास्तव 'विदग्ध'
म. प्र. राज्य विद्युत मण्डल, जबलपुर

जो मीठा पावन जल देकर हमें सुस्वस्थ बनाती है,
जिनकी घाटी और जलधारा सबके मन को भाती है।
तीर्थ क्षेत्र जिसके तट पर हैं जिसकी होती है पूजा,
वही नदी माँ दुखिया सी अपनी व्यथा सुनाती है।

पूजा तो करते सब मेरी पर अपशिष्ट बहाते हैं,
कचरा पोलीथीन फेंक जाते हैं जो भी आते हैं।
मैल मलिनता भरते मुझमें जो भी नाले लाते हैं,
गंदे सीवर नाले नगरों के मुझमें डाले जाते हैं।

जरा निहारो पड़ी गन्दगी मेरे तट और घाटों में,
सैर सपाटे वाले यात्री ! खुश न रहो बस चाटों में,
मन के श्रद्धा भाव तुम्हारे प्रकट नहीं व्यवहारों में,
समाचार सब छपते रहते आये दिन अखबारों में,

ऐसे इस वसुधा को पावन मैं कैसे कर पाउँगी ?
पाप नाशिनी शक्ति गवाँकर विष से खुद मिट जाउंगी,
मेरी जो छबि बसी हुई है जन मानस के भावों में,
धूमिल वह होती जाती अब दूर दूर तक गांवों में,

प्रिय भारत में जहाँ कहीं भी दिखते साधक सन्यासी,
वे मुझमें डुबकी, तर्पण, पूजन, आरती के अभिलाषी,
सब तुम मुझको माँ कहते, तो माँ सा बेटों प्यार करो,
घृणित मलिनता से उबार तुम सब मेरे दुख दर्द हरो।

सही धर्म का अर्थ समझ यदि सब हितकर व्यवहार करें,
तो न किसी को कठिनाई हो, कहीं न जलचर जीव मरें,
छुद्र स्वार्थ नासमझी से जब आपस में टकराते हैं,
इस धरती पर तभी अचानक विकट बवण्डर आते हैं।

प्रकृति आज है घायल, मानव की बढ़ती मनमानी से
लोग कर रहे अहित स्वतः का, अपनी ही नादानी से
ले निर्मल जल, निज क्षमता भर अगर न मैं बह पाउंगी
नगर गांव, कृषि वन, जन मन को कैसे
पवित्र रख पाउँगी ?

प्रकृति चक्र की समझ क्रियायें, परिपोषक व्यवहार करो
बुरी आदतें बदलो अपनी, जननी का श्रृंगार करो
बाँटो सबको प्यार, स्वच्छता रखो, प्रकृति उद्धार करो
जहाँ जहाँ भी विकृति बढ़ी है बढ़कर वहाँ सुधार करो।

गंगा यमुना और नर्मदा सब की यह ही राम कहानी है
इसीलिये हो रहा कठिन अब मिलना सबको पानी है
समझो जीवन की परिभाषा, छोड़ो मन की नादानी
सबके मन से हटे प्रदूषण, तो हों सुखी सभी प्राणी !!

पर्यावरण संरक्षण के लिये सौर ऊर्जा

विवेक रंजन श्रीवास्तव
जबलपुर

आदि देव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर सूर्य साक्षात दर्शन देने वाले देवता माने गये हैं। सूर्य के बिना सांसारिक व प्राकृतिक क्रियाएं संभव नही हैं। वैदिक काल से ही प्रकृति के एक प्रमुख अंग के रूप में सूर्य की उपासना होती थी। सूर्य को सर्व रोग–दोष एवं आपदाओं के अपहर्ता के रूप में पूजा गया है। – **''आरोग्यं भास्करादिच्छेत्।** गीता भी कहती है– **'आदित्यानामहं विष्णुः।'** नारायणतत्व की मुख्यता होने के कारण सूर्य को 'सूर्यनारायण' की संज्ञा भी दी गई है। सूर्य के मानवीय रूप की कल्पना एवं शिल्पांकन ईशा पूर्व तृतीय शताब्दी से मिलता है। देश और कालभेद से सूर्य के आसन, मुद्रा, अलंकरण, रथ, रथाश्व आदि को लेकर पुराणों में चित्रण एवं शिल्पांकन की दृष्टि से सूर्य के अनेक रूप सामने आते हैं। न केवल भारतीय वरन विश्व की लगभग समस्त सभ्यताओ में सूर्य को गरिमामय स्थान दिया गया है। सूर्य की अधिसंख्य मूर्तियॉ लाल एवं काले पत्थर को तराशकर बनाई गई हैं। सूर्य की अनेक कांस्य व धातु की मूर्तियॉ भी मिली हैं। वेदों में सूर्य स्वर्णिम पंखों से युक्त सुन्दर पक्षी और शुभ्र अश्व के रूप में चित्रित हैं। पुराणों के श्लोकों में सूर्य का रूप अति सुन्दर एवं तेजोमय है। कुछ ग्रंथो में उनका वर्ण सिन्दूर के समान एकदम लाल भी बताया गया है।

सूर्य की मूर्तियां खड़ी मुद्रा तथा आसनस्थ–दोनों ही मुद्राओं में मिली हैं। सूर्य सप्ताश्वों से खींचे जाते हुए एक चक्रवाले रथ पर आसीन हैं। रथस्यैकं चक्रं भुजगयमिताः सप्ततुरगाः। सप्ततुरंग सप्त दिवस अथवा सप्तवर्ण का संकेत करते हैं। विज्ञान भी बतलाता है कि रवि–रश्मि में सप्त वर्ण सम्मिलित हैं। वर्षाकाल में इन्द्रधनुष के रंगो में इस रंग विघटन को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। सौर ऊर्जा वह ऊर्जा है जो सीधे सूर्य से प्राप्त की जाती है। सौर ऊर्जा ही मौसम एवं जलवायु का परिवर्तन करती है। यही धरती पर सभी प्रकार के जीवन, पेड़–पौधे और जीव–जन्तु का आधार है। सौर ऊर्जा को विविध प्रकार से प्रयोग किया जाता है, किन्तु वर्तमान युग में बिजली ही ऊर्जा का वह प्रकार है जो पलक झपकते कहीं से कहीं पहुंच कर बटन दबाते ही सेवा में हाजिर रहती हैं। अतः सूर्य की ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने को ही मुख्य रूप से सौर ऊर्जा के रूप में जाना जाता है। सूर्य की ऊर्जा को दो प्रकार से विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है। पहला प्रकाश–विद्युत सेल की सहायता से और दूसरा किसी तरल पदार्थ को सूर्य की उष्मा से गर्म करने के बाद इससे विद्युत जनरेटर चलाकर। सौर ऊर्जा भविष्य के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत साबित होने वाली है। अंतरिक्ष उपकरणों में भी सौर ऊर्जा का ही प्रयोग किया जाता है। सूर्य से सीधे प्राप्त होने वाली ऊर्जा में कई विशेषताएं हैं, जो इस स्रोत को आकर्षक बनाती हैं। इनमें इसकी सुलभता, अप्रदूषणकारी होना व अक्षुण्य होना प्रमुख हैं। अकेले भारतीय भूभाग पर ही 5000 लाख करोड़ किलोवाट घंटा प्रति वर्ग मी० के बराबर सौर ऊर्जा पड़ती है जो कि विश्व की संपूर्ण विद्युत खपत से कई गुना अधिक है। साफ धूप वाले अर्थात बिना धुंध व बादल के दिनों में प्रतिदिन का औसत सौर–ऊर्जा का सम्पात 4 से 7 किलोवाट प्रति घंटा प्रति वर्ग मीटर तक होता है। देश में प्रायः स्थानों पर वर्ष में लगभग 250 से 300 दिन ऐसे होते हैं जब सूर्य की रोशनी पूरे दिन भर उपलब्ध रहती है। सौर ऊर्जा, जो रोशनी व उष्मा दोनों रूपों में प्राप्त होती है, का उपयोग कई प्रकार से हो सकता है। सौर उष्मा का उपयोग अनाज को सुखाने, जल उष्मन, खाना पकाने, प्रशीतलीकरण, जल परिष्करण तथा विद्युत ऊर्जा उत्पादन हेतु किया जा सकता है। फोटो वोल्टायिक प्रणाली द्वारा सौर प्रकाश को बिजली में रूपान्तरित करके रोशनी प्राप्त की जा रही है, प्रशीतलन का कार्य किया जाता है, दूरभाष, टेलीविजन, रेडियो आदि चलाए जाते हैं, तथा पंखे व जल–पम्प आदि भी चलाए जा रहे हैं।

सौर–उष्मा पर आधारित प्रौद्योगिकी का उपयोग घरेलू, व्यापारिक व औद्योगिक इस्तेमाल के लिए जल को गरम करने में किया जा सकता है। देश में पिछले दो दशकों से सौर जल–उष्मक बनाए जा रहे हैं। लगभग 4,50,000 वर्गमीटर से अधिक क्षेत्रफल के सौर जल उष्मा संग्राहक संस्थापित किए जा चुके हैं, जो प्रतिदिन 220 लाख लीटर जल को 60–80 से० तक गरम करते हैं। भारत सरकार का अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय इस ऊर्जा के उपयोग को प्रोत्साहन देने हेतु प्रौद्योगिकी विकास,

प्रमाणन, आर्थिक एवं वित्तीय प्रोत्साहन, जन–प्रचार आदि कार्यक्रम चला रहा है तथा इसकी दक्षता और आर्थिक लागत में भी काफी सुधार हुआ है। वृहद् पैमाने पर क्षेत्र–परिक्षणों द्वारा यह साबित हो चुका है कि आवासीय भवनों, रेस्टोरेंट, होटलों, अस्पतालों व विभिन्न उद्योगों जैसे खाद्य परिष्करण, औषधि, वस्त्र, डिब्बा बन्दी, आदि के लिए यह एक सर्वथा उचित प्रौद्योगिकी है। जब हम सौर उष्मक से जल गर्म करते हैं तो इससे उच्च आवश्यकता वाले समय में बिजली की बचत होती है। 100 लीटर क्षमता के 1000 घरेलू सौर जल–उष्मकों से एक मेगावाट बिजली की बचत होती है। साथ ही अनुमान है कि इस तरह 100 लीटर की क्षमता के एक सौर उष्मक से कार्बन डाईआक्साइड के उत्सर्जन में प्रतिवर्ष 1.5 टन की कमी होती है। अभी इन संयंत्रों का जीवन–काल लगभग 15–20 वर्ष का है। सोलर कुकर द्वारा खाना पकाने से विभिन्न प्रकार के परम्परागत ईंधनों की बचत होती है। बॉक्स कुकर, वाष्प–कुकर व उष्मा भंडारक प्रकार के सौर–कुकर विकसित किए जा चुके हैं। ऐसे भी बॉक्स कुकर विकसित किए गये हैं जो बरसात या धुंध के दिनों में बिजली से खाना पकाने हेतु प्रयोग किए जा सकते हैं। सौर वायु उष्मन सूरज की गर्मी के प्रयोग द्वारा कटाई के पश्चात कृषि उत्पादों व अन्य पदार्थों को सुखाने के लिए विकसित किए गये हैं। इन पद्धतियों के प्रयोग द्वारा खुले में अनाजों व अन्य उत्पादों को सुखाते समय होने वाले नुकसान कम किए जा सकते हैं। चाय पत्तियों, लकड़ी, मसाले आदि को सुखाने में इनका व्यापक प्रयोग किया जा रहा है। सौर स्थापत्य किसी भी आवासीय व व्यापारिक भवन के लिए यह आवश्यक है जिससे उसमें रहने वाले व्यक्तियों के लिए वह भवन मितव्ययी उर्जा खपत के साथ ही आरामप्रद हो। सौर–स्थापत्य वस्तुतः जलवायु के साथ सामन्जस्य रखने वाला स्थापत्य है। भवन के अन्तर्गत बहुत सी अभिनव विशिष्टताओं को समाहित कर जाड़े व गर्मी दोनों ऋतुओं में जलवायु के विपरीत प्रभाव को कम किया जा सकता है। आदित्य सौर कार्यशालाएँ भारत सरकार के अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय के सहयोग से देश के विभिन्न भागों में स्थापित की जा रही हैं। नवीकरणीय ऊर्जा उपकरणों की बिक्री, रखरखाव, मरम्मत एवं तत्सम्बन्धी सूचना का प्रचार–प्रसार इनका मुख्य कार्य होगा। सरकार इस हेतु एकमुश्त धन और दो वर्षों तक कुछ आवर्ती राशि उपलब्ध कराती है। यह अपेक्षा रखी गयी है कि ये वर्कशाप ग्राहक–सेवा से आत्मनिर्भर रूप से कार्य करेंगी एवं अपने लिए धन स्वयं जुटाएंगी। सौर फोटो वोल्टायिक तरीके से ऊर्जा, प्राप्त करने के लिए सूर्य की रोशनी को सेमीकन्डक्टर की बनी सोलर सेल पर डाल कर बिजली पैदा की जाती है। इस प्रणाली में सूर्य की रोशनी से सीधे बिजली प्राप्त कर कई प्रकार के कार्य सम्पादित किये जा सकते हैं। भारत उन अग्रणी देशों में से एक है जहाँ फोटो वोल्टायिक प्रणाली प्रौद्योगिकी का समुचित विकास किया गया है एवं इस प्रौद्योगिकी पर आधारित विद्युत उत्पादक इकाईयों द्वारा अनेक प्रकार के कार्य सम्पन्न किये जा रहे हैं। देश में नौ कम्पनियों द्वारा सौर सेलों का निर्माण किया जा रहा है एवं बाइस से अधिक फोटोवोल्टायिक माड्यूलों का। लगभग 50 कम्पनियां फोटो वोल्टायिक प्रणालियों के अभिकल्पन, समन्वयन व आपूर्ति के कार्यक्रमों से सक्रिय रूप से जुड़ी हुयी हैं। सन् 1996–99 के दौरान देश में 9.5 मेगावाट के फोटो वोल्टायिक माड्यूल निर्मित किए गये। अबतक लगभग 6000000 व्यक्तिगत फोटोवोल्टायिक प्रणालियां (कुल क्षमता 40 मेगावाट) संस्थापित की जा चुकी हैं। भारत सरकार का अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय सौर लालटेन, सौर–गृह, सौर सार्वजनिक प्रकाश प्रणाली, जल–पम्प, एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एकल फोटोवोल्टायिक ऊर्जा संयंत्रों के विकास, संस्थापना आदि को प्रोत्साहित कर रहा है। फोटो वोल्टायिक प्रणाली माड्यूलर प्रकार की होती है। इनमें किसी प्रकार के जीवाष्म ऊर्जा की खपत नहीं होती है तथा इनका रखरखाव व परिचालन बड़ा सुगम है। साथ ही ये पर्यावरण के लिये सहगामी हैं। दूरस्थ स्थानों, रेगिस्तानी इलाकों, पहाड़ी क्षेत्रों, द्वीपों, जंगली इलाकों आदि, जहाँ प्रचलित ग्रिड प्रणाली द्वारा बिजली आसानी से नहीं पहुँच सकती है, के लिए यह प्रणाली आदर्श है। अतएव फोटो वोल्टायिक प्रणाली दूरस्थ दुर्गम स्थानों की दशा सुधारने में अत्यन्त उपयोगी है। सौर लालटेन एक हल्का ढोया जा सकने वाला फोटो वोल्टायिक तंत्र है। इसके अन्तर्गत लालटेन, रखरखाव रहित बैटरी, इलेक्ट्रोनिक नियंत्रक प्रणाली, व 7 वाट का छोटा फ्लुओरेसेन्ट लैम्प युक्त माड्यूल तथा एक 10 वाट का फोटो वोल्टायिक माड्यूल आता है। यह घर के अन्दर

व घर के बाहर प्रतिदिन 4–5 घंटे तक प्रकाश दे सकने में सक्षम है। मिट्टी तेल आधारित लालटेन, ढ़िबरी, पेट्रोमैक्स आदि का यह आदर्श विकल्प है। इससे न तो धुआँ निकलता है, न आग लगने का खतरा है और न स्वास्थ्य का। अब तक लगभग 2,50,000 के ऊपर सौर लालटेन देश के ग्रामीण इलाकों में कार्यरत हैं। सौर जल–पम्प फोटो वोल्टायिक प्रणाली द्वारा पीने व सिंचाई के लिए कुओं आदि से जल का पम्प किया जाना भारत के लिए एक अत्यन्त उपयोगी प्रणाली है। सामान्य जल पम्प प्रणाली में 900 वाट का फोटो वाल्टायिक माड्यूल, एक मोटर युक्त पम्प एवं अन्य आवश्यक उपकरण होते हैं। अब तक 4,500 से ऊपर सौर जल पम्प संस्थापित किये जा चुके हैं।

फोटो वोल्टायिक सेलों पर आधारित छोटे छोटे बिजली घरों से ग्रिड स्तर की बिजली ग्रामवासियों को प्रदान की जा सकती है। इन बिजली घरों में अनेकों सौर सेलों के समूह, स्टोरेज बैटरी एवं अन्य आवश्यक नियंत्रक उपकरण होते हैं। बिजली को घरों में वितरित करने के लिए स्थानीय सौर ग्रिड की आवश्यकता होती है। इन संयंत्रों से ग्रिड स्तर की बिजली व्यक्तिगत आवासों, सामुदायिक भवनों व व्यापारिक केन्द्रों को प्रदान की जा सकती है। इनकी क्षमता 1.25 किलोवाट तक होती है। अब तक लगभग एक मेगावाट की कुल क्षमता के ऐसे संयंत्र देश के विभिन्न हिस्सों में लगाए जा चुके हैं। इनमें उत्तर प्रदेश, देश का उत्तर पूर्वी क्षेत्र, लक्षद्वीप, बंगाल का सागर द्वीप, व अन्डमान निकोबार द्वीप समूह प्रमुख हैं।

ग्रामीण इलाकों में सार्वजनिक स्थानों एवं गलियों, सड़कों आदि पर प्रकाश करने के लिए सोलर स्ट्रीट लाइट उत्तम प्रकाश स्रोत हैं। इसमें 74 वाट का एक फोटो वोल्टायिक माड्यूल, एक 75 अम्पीयर प्रति–घंटा की कम रख–रखाव वाली बैटरी तथा 11 वाट का एक फ्लुओरेसेन्ट लैम्प होता है। शाम होते ही यह अपने आप जल जाता है और प्रातःकाल बुझ जाता है। देश के विभिन्न भागों में अबतक 40,000 से अधिक ऐसी इकाईयां लगायी जा चुकी हैं। घरेलू सौर प्रणाली के अन्तर्गत 2 से 4 बल्ब या ट्यूब लाइट जलाए जा सकते हैं, साथ ही इससे छोटा डीसी पंखा और एक छोटा टेलीविजन 2 से 3 घंटे तक चलाए जा सकते हैं। इस प्रणाली में 37 वाट का फोटो वोल्टायिक पैनेल व 40 एंपियर प्रति–घंटा की अल्प रख–रखाव वाली बैटरी होती है। ग्रामीण उपयोग के लिए इस प्रकार की बिजली का स्रोत ग्रिड स्तर की बिजली के मुकाबले काफी अच्छा है। अब तक पहाड़ी, जंगली व रेगिस्तानी इलाकों के लगभग 1,00,000 घरों में यह प्रणाली लगायी जा चुकी है।

मध्य प्रदेश के रीवा में रीवा अल्ट्रा मेगा सोलर लिमिटेड रम्स का गठन जुलाई 2015 में मध्य प्रदेश ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड एवं सोलर इनर्जी कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया की ज्वाइंट वेंचर कंपनी के रूप में किया गया था। यह मध्य प्रदेश सरकार और रम्स के लिए गर्व का विषय है कि राज्य शासन की अगुआई में रीवा सौर परियोजना का विकास और निष्पादन वैश्विक मानकों अनुसार किया गया है।

विश्व की सबसे बड़ी सौर परियोजनाओं में से एक रीवा सौर परियोजना से दिनांक 03 जनवरी 2020 से पूर्ण क्षमता के साथ उत्पादन प्रारंभ हो गया है। प्रदेश ही नहीं अपितु राष्ट्र के लिए इस परियोजना ने सौर ऊर्जा परियोजनाओं के क्षेत्र में नए कीर्तिमान रचे हैं। गर्व का विषय है कि वर्ष 2019–20 में परियोजना को राज्य स्तर पर नवाचार के लिए प्रधानमंत्री पुरस्कार के लिए सर्वश्रेष्ठ परियोजनाओं में चयनित किया गया। परियोजना में अपनाए गए अनेक नवाचार अपने आप में प्रथम थे,

जिसके चलते इस परियोजना से बिजली उत्पादन की न्यूनतम दर रू 2.97/यूनिट प्राप्त हुआ। 750 मेगावाट क्षमता की रीवा सौर परियोजना, मध्य प्रदेश के रीवा जिले में, 1590 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। यह दुनिया के सबसे बड़े सिंगल साइट सौर ऊर्जा संयंत्रों में से एक है। परियोजना से उत्पादित विद्युत का 76% अंश प्रदेश की पॉवर मैनेजमेंट कम्पनी को व 24% दिल्ली मेट्रो को प्रदान किया जा रहा है। इसकी कई विशेषताओं को नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी सौर पार्कों के लिए मानक परियोजना गाइड्लाइंस में शामिल किया गया है। रीवा सौर परियोजना प्रथम सौर परियोजना है जिससे प्राप्त विद्युत, तापीय ऊर्जा से प्राप्त विद्युत से सस्ती है। इस परियोजना से सालाना 15.7 लाख टन के CO2 उत्सर्जन को रोका जा रहा है, जो 2.6 करोड़ पेड़ों के लगाने के बराबर है। इस परियोजना को Transaction संरचना के लिए वर्ल्ड बैंक प्रेजिडेंट पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

यह परियोजना माननीय प्रधानमंत्री महोदय के वर्ष 2022 तक देश में एक लाख मेगावाट क्षमता की सौर ऊर्जा परियोजना स्थापित करने के संकल्प में मील का पत्थर साबित हुई है जो ना केवल प्रदेश को नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में आत्म निर्भर बनाने में सहयोग प्रदान करेगी वरन मध्य प्रदेश को अन्य राज्यों, व्यावसायिक संस्थानों को बिजली प्रदान करने में अग्रणी रखेगी। इस परियोजना से प्रदेश में लगभग 4000 करोड का निवेश हुआ तथा परियोजना निर्माण की अवधि में लगभग 4000 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ, वहीं परियोजना संचालन के समय लगभग 700 से 800 रोजगार के अवसर प्राप्त हो रहे हैं ।

सौर ऊर्जा के क्षेत्र में भारत के अग्रणी कदमों की धमक विश्व स्तर पर है, हमने न्यूयार्क स्थित यूएनओ में सौर उर्जा संयत्र प्रदान किया है। इस क्षेत्र में विकास, सुधार और अनुसंधान की अनंत संभावनायें हैं। सारी मानवता के हित में इस क्षेत्र में व्यापक पूंजी निवेश जरुरी है। सौर पैनलों से व्यापक पैमाने पर बिजली निर्माण के लिए पैनलों पर भारी निवेश करना पड़ता है। दुनिया में अनेक स्थानों पर सूर्य की रोशनी कम आती है, इसलिए वहां सोलर पैनल कारगर नहीं हैं। सोलर पैनल बरसात के मौसम में ज्यादा बिजली नहीं बना पाते। फिर भी विशेषज्ञों का मत है कि भविष्य में सौर ऊर्जा का अधिकाधिक प्रयोग होगा। भारत के प्रधानमंत्री ने हाल में सिलिकॉन वैली की तरह भारत में सोलर वैली बनाने की इच्छा जताई है। भगवान भुवन भास्कर जिनके चारों ओर हमारी पृथ्वी घूम रही है, ऊर्जा की हमारी समस्त आवश्यकतायें पूरी करने में समर्थ हैं, वे वैज्ञानिक आधार पर भी वैसे ही महत्वपूर्ण हैं, जैसे सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर पूजे जाते हैं, जरूरत केवल यह है कि हम उनसे प्राप्त अक्षत उर्जा के दोहन की सही प्रणाली को ढूंढ़ कर उसका लोक व्यापीकरण कर सकें।

पर्यावरण, वन एवं प्रदूषण

डॉ. राजेश कुमार ठाकुर
शासकीय कला एवं वाणिज्य, महाविद्यालय केवलारी,
सिवनी, मध्यप्रदेश

विषय की प्रासंगिकता से संबद्ध मेरी कविता का कुछ अंश उद्धृत है–

''पर्यावरण प्रदूषित घायल, सिसक रहे हैं जंगल
शुद्ध हवा–पानी के बिन अब संभव कैसे मंगल?
माटी मर रही तड़प–तड़प, कोख धरा की बाँझ
व्यवस्था के मैलेपन को अब माँज सके तो माँज
पर्यावरण बचाना है तो साहस की लाठी भाँज''

वृक्षों द्वारा सघन रूप से ढँके हुए विस्तृत स्थलीय क्षेत्र को वन कहते हैं। ''वन क्षेत्र ऐसे पादप समूह को कहते हैं जिसमें वृक्षों एवं अन्य काष्ठीय पादपों की प्रमुखता एवं बाहुल्य पाया जाता हो।''

एफ.ए.ओ. 1998 ने वनों को इस प्रकार परिभाषित किया है –''किसी भू–भाग का ऐसा क्षेत्र, जिसमें कम–से–कम दस प्रतिशत क्षेत्र वृक्षों से आच्छादित हो एवं जिसका न्यूनतम क्षेत्रफल 0.5 हैक्टेयर हो, जहाँ पेड़ों की औसत ऊँचाई 5 मीटर हो, वन कहलाते हैं।''

पर्यावरण का अर्थ उन दशाओं के योग से होता है जो मनुष्य को निश्चित समय में, निश्चित स्थान पर आवृत्त करती है। वातावरणीय वायु, जल और भूमि तथा उसमें निवास करने वाले समस्त प्राणी मिलकर जीवन–मण्डल बनाते हैं। इसमें सभी जैविक और अजैविक कारक तथा होने वाले भौतिक परिवर्तन, जलवायु, मौसम आदि सम्मिलित हैं। कुल मिलाकर ''वह वातावरण जो हमारे चारों ओर है, जिसमें पेड़–पौधे, जीव–जंतु, मनुष्य, वायु, जल, मृदा, आदि आते हैं ये सब मिलकर एक संतुलित पर्यावरण बनाते हैं।''

वृक्ष मानव–जीवन और प्राणी–जगत के लिए प्रकृति के अमूल्य वरदान हैं। वेदों में वृक्षों के महत्व को स्वीकार करते हुए उन्हें पूज्य माना गया है। उनके अंग–अंग में देवों का निवास बताया गया है और वृक्ष काटने को पाप–तुल्य माना गया है।

''मूले ब्रह्मा त्वचा विष्णुः शाखा रूद्रः महेश्वरः पत्रे
तु देवानां वृक्षराजः नमोस्तुते ।।''
– वटसावित्री व्रत पूजन

(वृक्ष के मूल में ब्रह्मा का निवास है और वृक्ष की त्वचा में विष्णु का, शाखाओं में भगवान शिव का वास है, तथा वृक्ष के पत्ते समस्त देवतामय हैं, ऐसे वृक्ष देव आपको नमस्कार है)

वन प्रकृति की अमूल्य धरोहर है ,जिनसे हमें कई प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं जैसे काष्ठ एवं जलाऊ लकड़ी, दैनिक उपयोग की अनेक वस्तुएँ मुख्य रूप से बाँस, तेंदूपत्ता, इमली, महुआ, गोंद, लाख, चिरोंजी, बबूल, वन–तुलसी, खैर (कत्था), हर्रा, बहेड़ा, आँवला, बेल, कुर्ची, वीजामरोड़, जामुन इत्यादि अनेक प्राकृतिक औषधियाँ वन्य–प्राणियों हेतु चारा, वन्य–जीवों को प्राकृतिक आश्रय–स्थल बड़े उद्योगों एवं कुटीर उद्योगों की सामग्री व आदिवासियों के जीवन–यापन की मूलभूत सुविधाएँ वनों से ही प्राप्त होती हैं। मानव के स्वयं का अस्तित्व पृथ्वी पर मिलने वाली हजारों प्रजातियों के पेड़–पौधों और जंतुओं के अस्तित्व पर निर्भर करता है।

पर्यावरण एवं पारिस्थितिक साम्य को प्रभावित करने वाले घटकों में वन सबसे महत्वपूर्ण हैं। वर्षा की मात्रा को वन ही नियमित करते हैं अर्थात जल–चक्र को नियमित रखने में सहायक होते हैं। वृक्ष प्रकाश–संश्लेषण में विषैली कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं तथा जीवनदायी ऑक्सीजन गैस छोड़ते हैं जिससे वातावरण में से कार्बन डाइऑक्साइड का अनुपात बढ़ नहीं पाता और वायुमण्डल प्रदूषण से बचता है दूसरी ओर तेजी से औद्योगीकरण एवं वाहनों की संख्या बढ़ने से इनके द्वारा वायुमण्डल में ज़हरीली गैस के प्रभाव को पौधे अपनी जैविक क्रियाओं से अवशोषित कर प्रदूषण–मुक्त रखते हैं। जंगल में सघन और ऊँचे वृक्ष तेज हवाओं एवं तेज वर्षा को सीधे ज़मीन पर पड़ने से रोकते हैं। वृक्ष तथा वनस्पतियों की जड़ें भू–पटल पर विद्यमान मिट्टी और पत्थर को जकड़े रहती है। भू–क्षरण से पृथ्वी को रोकती है। वृक्ष पृथ्वी पर छाया के रूप में छाते का कार्य करते हैं, जिससे भू–पटलीय जल का वाष्पीकरण कम होता है। पत्तियों के द्वारा पेड़–पौधों का अतिरिक्त जल का निरंतर वाष्पीकरण कम होता है जिससे वातावरण में ठण्डक बनी रहती है। तापमान गिरने से वायु में विद्यमान वाष्प जल में

परिवर्तित होकर वर्षा करने लगती है। अतएव ''मेघों को वनस्पति से उत्पन्न होने वाला कहा गया है।''

धरती पर जीवन प्रकृति–संतुलन से ही संभव हो सका। आज बढ़ती हुई आबादी के भोजन के लिए अन्न, सब्जी, फल, रहने हेतु घर, पहनने के लिए कपड़े चाहिए उनकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विविध प्रकार की सामग्री चाहिए। विडम्बना ही है कि जिन वनों के चलते आज मानव–जीवन का अस्तित्व है, जिन वनों के कारण पृथ्वी जीवन के लायक हुई, इंसान उन्हीं वनों को व्यापक पैमाने पर काट रहा है। खेती करने, घर बनाने, कल–कारखाने लगाने, सड़कें, रेल की पटरियाँ बिछाने हेतु भूमि चाहिए। हमारे कारखाने व उद्योग कच्चे माल के लिए जंगलों पर निर्भर हैं।

ई–कचरा (फेके गए कम्प्यूटर, मोबाइल एवं अन्य विद्युतीय उपकरण), धार्मिक एवं सामाजिक रीति–रिवाज, जन–मानस द्वारा पर्यावरण के कारकों की अनदेखी, बड़े व्यापारियों द्वारा आर्थिक लाभ के लालच में संसाधनों का अतिदोहन, वन्यजीवों को मारकर उनके अंगों की तस्करी, खनन उद्योग, लकड़ी कटाई, उद्योगों से निस्तारित अपशिष्टों के शुद्धिकरण हेतु संयंत्रों का अभाव, फसल कटाई के बाद खेतों की पराली जलाना, इत्यादि भयावह कारणों से हम प्रदूषण की त्रासदी को भोगने हेतु अभिशप्त हैं।

न केवल साहित्य बल्कि लोक–जीवन में भी यह विश्वास मिलता है कि हरे–भरे वृक्ष काटने से काटने वाले की वंश–वृद्धि नहीं होती। बढ़ती जनसंख्या, तीव्र औद्योगीकरण एवं विकसित होती नगरीय जनसंख्या के कारण लकड़ियों की माँग भी तीव्र गति से बढ़ी है। टिहरी बाँध, सरदार सरोवर बाँध या बस्तर के रावाघाट परियोजना का निर्माण प्राकृतिक वन–क्षेत्र की बलि देकर हुआ है। ऐसा नहीं है कि मनुष्य ने पर्यावरण को बिगाड़ने का काम अभी–अभी शुरू किया है।

मानवीय क्रिया–कलापों से पर्यावरण पहले से ही बिगड़ता रहा है। यह बात अलग है कि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया। बड़े पैमाने पर वनों के विनाश से ही ईराक में मैसोपोटामिया की सभ्यता, पेरू की इंका सभ्यता तथा सिंधु घाटी की प्राचीन सभ्यताओं का पतन हुआ। वनों के विनाश से भूमि में मृदा का अपरदन हुआ, बाढ़ें आईं, नहरें और खेत गाद–मिट्टी से भर गए, दुष्परिणामस्वरूप अकाल पड़ा, अनेक लोग मर गए तथा गाँव के गाँव उजड़ गए। प्रदूषण केवल वायु, जल, भूमि को ही नहीं प्रभावित करता है अपितु जैव–मण्डल के जीवों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक परितंत्र मृत जीवों तथा मल–मूत्र आदि का विघटन करके उनका पुनःचक्रण करता रहा है। जब भारी मात्रा में हानिकारक पदार्थ पर्यावरण को दूषित करते हैं तब परितंत्र उन्हें अपने में

नहीं मिला पाता तथा वे परितंत्र में इकट्ठे होते रहते हैं, परिणामस्वरूप पर्यावरण ख़राब हो जाता है।

पर्यावरण–संरक्षण हेतु वन–संरक्षण पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। वृक्ष प्रदूषण–नाशक होते हैं। नेशनल रिमोट सेंसिंग केन्द्र के प्रतिवेदन के अनुसार प्रतिवर्ष कुल मिलाकर वन क्षेत्रफल में वनों की स्थिति 11 से 12 प्रतिशत के मध्य है, जबकि संतुलित पर्यावरण हेतु 33 प्रतिशत वन आवश्यक हैं। 40 प्रतिशत पेड़ दुनिया भर में केवल कागज बनाने हेतु काट दिये जाते हैं। वन–संरक्षण हेतु आवश्यक है कि वनों के अंधाधुंध कटने एवं दोहन को रोकने हेतु कानून का पालन सख्ती से कराया जाए। ऐसे वृक्षों का रोपण किया जाय, जिसमें समाज की आर्थिक जरूरतें पूरी हों। प्राकृतिक वन–प्रदेशों को औद्योगिक गतिविधियों से पूर्ण रूप से अलग किया जाये।

वैसे तो वन (संरक्षण) अधिनियम, 1927 तथा 1980 प्रभावी रहे हैं किंतु वनों के संरक्षण हेतु व्यापक राष्ट्रीय वन–नीति श्री सुंदरलाल बहुगुणा का ''चिपको आंदोलन'' व राजस्थान के विश्नोई समाज द्वारा पेड़ बचाने हेतु चिपककर जान देने का अभियान राष्ट्रीय स्तर पर वन–महोत्सव तथा केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा संयुक्त वन–प्रबंधन के कार्यक्रम, विश्व वन्यजीव कोष (डब्लू.डब्लू. एफ.) द्वारा संरक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इधर जन–सामान्य में वनों के महत्व के प्रति जागरूकता बढ़ी है किन्तु आम नागरिक के छोटे–छोटे से किन्तु महत्वपूर्ण प्रयास कागज़ के दुरूपयोग को रोक सकते हैं। प्लास्टिक–मुक्त अभियान, समग्र स्वच्छता–अभियान में सक्रिय सहभागिता कर पेपर, नेपकिन और कागज़ का बेवजह इस्तेमाल रोक कर हम लाखों पेड़ों को कटने से बचा सकते हैं। कार्यालय में कागज़ का दोनों ओर से उपयोग करें। पेपर बिल के बजाय ई–बिल सुविधा को प्राथमिकता दें। ए.टी.एम. से रसीद और बैंक से पेपर स्टेटमेण्ट न निकालें। यात्रा के समय टिकट के डिजीटल रूप से ही काम चलायें।

हम सब मिलकर पर्यावरण को संतुलित रखने एवं अनेक जीवनोपयोगी उत्पादन देने वाले हमारी महत्वपूर्ण निधि ''धरती के फेफड़े यानी पेड़ बचायें'' अभियान को जोर–शोर से चलायें। हमें चाहिए कि पर्यावरण–संरक्षण हेतु हम वृक्षों के साथ उसी तरह जुड़ें, जिस तरह हम अपनी संतानों के पालन–पोषण के साथ जुड़ते हैं क्योंकि वन प्रकृति की संपूर्णता का श्रृंगार हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात उपजी विपरीत परिस्थितियों में जहाँ मोह–भंग की स्थिति उपजी, गाँवों से नगरों की ओर पलायन हुआ, सूचना और आवागमन के साधनों का विकास और प्रचार–प्रसार होने तथा संयुक्त परिवार का विघटन और भौतिकवाद की चकाचौंध ने भी मनुष्य को प्रकृति से दूर किया। नागार्जुन जी अपने उपन्यास ''वरूण के बेटे'' में चित्रित करते हैं–

''आबादी उत्तरोत्तर बढ़ती आयी थी, खानेवाले मुँह पचास गुना अधिक हो गए थे। कोसी का ज़हरीला पानी बीमारियाँ काफी ले आया था....मृत्यु हावी थी।''

देश में हम सब ग़ैर–ज़िम्मेदार तरीक़े से रह रहे हैं। प्रत्येक व्यक्ति एक सीजन में औसतन एक सैंकड़ा आम खाता है, इसी प्रकार जामुन, चीकू, संतरा, बिही, रसल्लो, कोसुम, सीताफल इत्यादि खाये हुए फलों के बीज व गुठलियाँ हमारे द्वारा लापरवाही से कूड़ेदान में फेंक दी जाती है जबकि हमारा दायित्व बनता है कि हम उन बीजों–गुठलियों को उगाकर पौधा बना लें फिर उन पौधों को सड़क के दोनों ओर, रेल पटरी के दोनों ओर, नहर के दोनों किनारों पर, किसी शासकीय या खाली उपयुक्त जगह पर उन पौधों को रोप दें। आलस्यवश या व्यस्ततावश यदि इतना भी नहीं कर सकते तो गुठलियों व बीजों को थैली में रख लें और जब कभी कहीं जा रहे हों तो वाहन रोककर सड़क के किनारों पर अथवा रास्ते में सफ़र में पड़ने वाले जंगल में उपयुक्त जगह उन बीजों को बिखेर दें।

प्रत्येक वर्षा ऋतु में प्रत्येक नागरिक द्वारा पौधरोपण करने उसे गोद लेने (गोद लेने से तात्पर्य उस पौधे के पेड़ बन जाने तक की देखभाल का दायित्व) अनिवार्य कर दिया जाए तो एक वर्ष में एक सौ पैंतीस करोड़ पेड़ पनपेंगे। प्रत्येक परिवार के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा पौधा लगाया जाना आनिवार्य हो। घर का कोई सदस्य अति वृद्ध हो या अति शिशु हो तो परिवार के अन्य सदस्य यह जिम्मेदारी निभाएँ। शासन–प्रशासन द्वारा सख्ती से पौधरोपण अभियान नहीं चलाया जाना एक चिंताजनक विषय है। पेड़ काटने तथा वन्य–प्राणियों के शिकार करने पर कठोर दण्ड न मिलना भी हमारी राजनीति का एक कमजोर पहलू है। वस्तुतः राजनीतिक प्रदूषण ने भी हमारी प्रकृति को विषाक्त किया है। शरद जोशी की व्यंग्योक्ति समीचीन है कि ''आप साफ कपड़े पहन ज्यादा देर गंदे मामलों के तटस्थ न्यायाधीश नहीं बन सकते।''

कोरोना संक्रमण काल में यह निष्कर्ष निकलकर आया कि मानव–समाज वाहनों का अनावश्यक उपयोग करता है जबकि सीमित दूरी वह पैदल या साइकिल द्वारा भी तय कर सकता है। नदियों का जल तुलनात्मक रूप से शुद्ध हुआ है किन्तु लॉकडाउन व अनलॉक समाप्ति के बाद वही ढाक के तीन पात वाली उक्ति चरितार्थ होगी। शादियों–पार्टियों–समारोहों में अभी भी प्लास्टिक के दोने–पत्तल–डिस्पोजल प्रयोग किये और उपयोग के बाद बेतरतीब तरीके से फेंके जाना जारी है।

रामायण काल में औषधि–चिकित्सा समृद्ध थी साथ ही पर्यावरण–चेतना भी व्यापक थी–

''क्षिति जल पावक गगन समीरा
पंच रचित अति अधम शरीरा''
– किष्किन्धाकाण्ड, 453,

प्राचीन काल में पर्यावरण–प्रदूषण का कहीं भी कोई वृतान्त नहीं मिलता क्योंकि उस समय कोई भी मांगलिक आयोजन, विवाह, जन्म और शुभ–अवसरों पर पृथ्वी–पूजन करना, जल कलश धारण करना, मंगलाचरण, अग्निहोत्र एवं जल–सिंचन से प्रारंभ होता था।

''नित्य पुष्पा नित्य फलास्तावः स्कंध विस्तृता
कालं वर्षो चपर्जन्यः सुख स्पर्शष्च मारूतः''

श्रीराम के राज्य में वृक्षों में सदा फूल लगे रहते थे, वे सदा फला करते थे, यथासमय वर्षा होती थी और सुखस्पर्शी हवा चलती थी। अयोध्याकाण्ड में जब माता सीता भगवान राम के संग वन–गमन का आग्रह करती हैं तब वे प्रकृति के साथ पारिवारिक तादात्म्य स्थापित करती हुई कहती है–

''खग मृग परिजन नगरवन बलकल
विमल दुकूल
नाथ साथ सुर सदन सम,
परनसल सुख मूल।।''

अर्थात हे नाथ! अपने साथ पशु–पक्षी मेरे कुटुम्बी होंगे,

वृक्षों की छाल ही उज्ज्वल वस्त्र होंगे और पर्णकुटी ही स्वर्ग के सम सुख देने वाली होगी। अपने वन–प्रवास के समय माँ सीता एवं अनुज लक्ष्मण द्वारा पेड़–पौधे लगाने एवं प्रकृति के संरक्षण के संदेश अनेक स्थानों पर मिलते हैं–

''तुलसी तरूवर विविध सुहाए।
कहुँ–कहुँ सिय कहुँ लखन लगाए''

इसी प्रकार सीताहरण के पश्चात् राम का एक–एक लता, पशु–पक्षी से सीता के बारे में पूछना प्रकृति से उनके गहरे तादात्म्य एवं आत्मीयता को प्रकट करता है –

''हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी।
तुम देखी सीता मृगनयनी।।''

किष्किन्धाकाण्ड में तुलसी ने प्रकृति के अपार सौन्दर्य को वर्षा ऋतु के आगमन पर इस प्रकार व्यक्त किया है –

''हरित भूमि तृन संकुल, समुझिझ परहिं नहिं पन्थ'' अर्थात पृथ्वी इतनी हरी–भरी है, जिससे रास्ता ही नहीं दिखाई दे रहा है।

हमारे देश में प्राचीन काल से ऋषियों ने पर्यावरण के महत्व को समझा है। वेदों में वनस्पतियों एवं औषधियों के महत्व को स्वीकार किया है। वनस्पतियों में औषधियों का स्थान प्रमुख होता है। ऋषिगण आदि देवताओं से औषधियों की याचना करना कभी नहीं भूलते थे। वे कहते हैं कि, ''जल अमृतमय व औषधिमय है।''

इस प्रकार हमारे रामायण, महाभारत जैसे महाकाव्य प्राकृतिक औषधि चिकित्सा और पर्यावरण रक्षण के अथाह भण्डार हैं और इस बात के द्योतक हैं कि प्राचीन काल की भाँति ही हमें पर्यावरण से पुत्रवत् प्रेम करना होगा, उसकी रक्षा करनी होगी तभी हम एक–दूसरे को खुशी और समृद्धि दे सकते हैं। वेद, गीता, रामायण में जो पर्यावरण–संचेतना व जागरूकता का सार निहित है, इन्हें अंगीकार करने से भारतीय संस्कृति में पर्यावरण–संरक्षण की अवधारणा की सार्थकता सिद्ध होगी, जिसकी प्रासंगिकता आज बेहद बढ़ गई है।

विज्ञान का आविष्कार करके मनुष्य ने चारों ओर से प्रकृति को परास्त करने का कदम बढ़ा लिया है। देखते–देखते प्रकृति को मनुष्य ने दासी बना लिया। आज मनुष्य ही मनुष्य का तथा एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का शोषण करते जा रहे हैं। प्रकृति में सब जीव–जंतु, प्राणी तथा वनस्पति–जगत परस्पर मिलकर रहते हैं। प्रत्येक का अपना विशिष्ट कार्य है जिससे सड़ने वाले पदार्थों की अवस्था तेजी से बदले और वह फिर वनस्पति जगत तथा उसके द्वारा जीव–जगत की खुराक़ बन सके। जब मनुष्य प्रकृति के कार्य में हस्तक्षेप करता है तब प्रकृति का संतुलन बिगड़ता है और इससे सारी सृष्टि का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप वायु–प्रदूषण तेजी से बढ़ रहा है। ऊर्जा तथा उष्णता पैदा करने वाले संयंत्रों से गर्मी निकलती है। यह उद्योग जितने बड़े होंगे और जितना बढ़ेंगे उतनी ज्यादा गर्मी फैलायेंगे। ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए जो ईंधन प्रयोग में लाया जाता है वह प्रायः पूरी तरह नहीं जल पाता। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि धुएँ से कार्बन मोनोऑक्साइड काफी मात्रा में उत्सर्जित होती है। आज मोटर वाहनों का यातायात तेजी से बढ़ रहा है। 960 किलोमीटर की यात्रा में एक वाहन उतनी ऑक्सीजन का उपयोग करता है जितना एक आदमी को एक वर्ष में करना चाहिए। दुनिया के हर अंचल में मोटर वाहनों का प्रदूषण फैलता जा रहा है। रेल का यातायात भी आशातीत रूप से बढ़ रहा है। हवाई–जहाजों का चलन भी सभी देशों में हो चुका है। तेल–शोधन, चीनी मिट्टी की मिलें, चमड़ा, कागज, रबर के कारखाने तेजी से बढ़े हैं। रंग, वार्निश, प्लास्टिक, चीनी के कारखाने बढ़ते ही जा रहे हैं। हर प्रकार के यंत्र बनाने के कारखाने बढ़ रहे हैं ये सब ऊर्जा–उत्पादन के लिए किसी–न–किसी रूप में ईंधन को फूँकते हैं और अपने धुएँ से सारे वातावरण को दूषित करते हैं। यह प्रदूषण जहाँ पैदा होता है, वहीं पर स्थिर नहीं रहता, वायु के प्रवाह में वह सारी दुनिया में फैलता रहता है।

सन् 1968 में ब्रिटेन में लाल धूल गिरने लगी, जो सहारा रेगिस्तान से उड़कर आई थी। जब उत्तरी अफ्रीका में टैंकों का युद्ध चल रहा था तब वहाँ से धूल उड़कर कैरेबियन समुद्र तक पहुँच गई थी। आस्ट्रेलिया, अमेरिका और ब्राजील के वनों में लगी आग लम्बे अंतराल तक धधकती रही। आज–कल लोग घरों, कारखानों, होटलों और विमानों के माध्यम से हवा, मिट्टी और पानी में अंधाधुंध दूषित पदार्थ प्रवाहित कर रहे हैं। विकास के क्रम में प्रकृति अपने लिए ऐसी परिस्थितियाँ बनाती है जो उसके लिए आवश्यक हैं इसीलिए इन व्यवस्थाओं में मनुष्य का हस्तक्षेप सब प्राणियों के लिए घातक होता है। प्रदूषण का

मुख्य ख़तरा इसी से है कि इससे पारिस्थितिकी संस्थान पर दबाव पड़ता है। घनी आबादी के क्षेत्रों में कार्बन मोनोऑक्साइड की वज़ह से रक्त–संचार में पाँच–दस प्रतिशत ऑक्सीजन कम हो जाती है। शरीर के ऊतकों को 25 प्रतिशत ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। ऑक्सीजन की तुलना में कार्बन मोनोऑक्साइड लाल रूधिर कोशिकाओं के साथ ज्यादा मिल जाती हैं इससे यह हानि होती है कि ये कोशिकाएँ ऑक्सीजन को अपनी पूरी मात्रा में संभालने में असमर्थ रहती हैं। लंदन में चार घण्टों तक ट्रैफिक संभालने के काम पर रहने वाले पुलिस के सिपाही के फेफड़ों में इतना विष भर जाता है कि मानो उसने एक सौ पाँच सिगरेट पी हों।

आराम की स्थिति में मनुष्य को दस लीटर हवा की आवश्यकता होती है। कड़ी मेहनत पर उससे दस गुना ज्यादा चाहिए लेकिन एक दिन में एक दिमाग को इतनी ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है जितनी कि 17 हजार हैक्टेयर वन में पैदा होती है। मिट्टी में बढ़ते हुए विष, वनस्पति की निरंतर कमी, महासागरों के प्रदूषण आदि की वज़ह से ऑक्सीजन की उत्पत्ति में कमी होती जा रही है। इसके अतिरिक्त प्रति वर्ष वायुमण्डल में 80 अरब टन धुआँ फेकते हैं। कारों तथा विमानों से दूषित गैस निकलती है। मनुष्य और प्राणियों की साँस से जो कार्बन डाइऑक्साइड निकलती है वो अलग प्रदूषण फैलाती है। वैज्ञानिकों की मान्यता है कि वातावरण के प्रदूषण की वर्तमान रफ्तार से 30 वर्ष में जीवन–मण्डल जिस पर प्राण और वनस्पति निर्भर है, समाप्त हो जाएगा। पशु, पौधे और मनुष्य का अस्तित्व नहीं रहेगा तथा सारी पृथ्वी की जलवायु बदल जाएगी। संभव है बर्फ का युग फिर से आए और तब तक पृथ्वी का वातावरण बढ़ने से नदियाँ और समुद्र सब विषैले हो जायेंगे।

यदि मनुष्य प्रकृति के नियमों का पालन कर प्रकृति को गुरू मानकर उसके साथ सहयोग करता और विशेषकर सब अवशिष्टों की प्रकृति को लौटाता है तो सृष्टि और मनुष्य स्वस्थ रह सकते हैं वरना अणु–विस्फोट जैसी ख़तरनाक स्थिति निर्मित होगी।

निष्कर्षतः इन पंक्तियों के माध्यम से संदेश देना समसामयिक होगा कि –

''वन में वृक्षों का वास रहने दो,
झील–झरनों में साँस रहने दो,
वृक्ष होते हैं वस्त्र जंगल के, छीनो मत ये
लिबास रहने दो।
पेड़–पौधे चिराग़ हैं वन के, उनमें बाक़ी
उजास रहने दो
वन विलक्षण विधा क़ुदरत की,
इस अमानत को ख़ास रहने दो''

अतएव हमें प्रकृति के शोषण–क्रम को कम करना होगा अन्यथा हमारा जीवन पानी के बुलबुले के समान बेवज़ह समाप्त हो जाएगा और हमारे सारे विकास कार्य ज्यों के त्यों धरे व पड़े रह जायेंगे।

कालिया का मदमर्दन.....

नदियों में जल प्रदूषण के विरुद्ध पौराणिक संदेश
नांदी पाठ ... नेपथ्य से

विवेक रंजनं श्रीवास्तव
जबलपुर

पुरुष स्वर .. दुनिया की अधिकांश सभ्यतायें नदी तटों पर विकसित हुईं हैं। प्रायः बड़े शहर आज भी किसी न किसी नदी या जल स्त्रोत के तट पर ही स्थित हैं। औद्योगिकीकरण का दुष्परिणाम यह हुआ है कि नदियों को हम कल कारखानों के अपशिष्ट से प्रदूषित कर रहे हैं। कृष्ण की यमुना की जो दुर्दशा आज हमने औद्योगिक प्रदूषण से कर डाली है वह चिंतनीय है। यमुना में कालिया नाग का प्रसंग वर्तमान संदर्भो में नदियों में प्रदूषण का प्रतीक है। स्त्री स्वर .. कृष्ण लीला में कालिया नाग के अंत का कथानक है जिसे नाट्य रूप में आपके लिये प्रस्तुत किया जा रहा है। कालिया नाग यमुना को विष वमन कर प्रदूषित करता है, जिससे यमुना के जलचर व तटों के वनस्पति व प्राणियो पर कुप्रभाव पड़ता है। बाल कृष्ण कालिया नाग का अंत करते हैं। यह दृष्टांत वर्तमान संदर्भो में नदियो में हो रहे प्रदूषण के अंत हेतु किये जा रहे प्रयासो को लेकर प्रासंगिक है।

मंच पर सतरंगी वस्त्रो में सूत्रधार का प्रवेश ..

सूत्रधार .. कालिया नाग जिस कुण्ड में यमुना में रहता था, उसका जल उसके विष की गर्मी से खौलता रहता था। उसके ऊपर उड़ने वाले पक्षी तक झुलसकर उसमें गिर जाया करते थे। विषैले जल की उत्ताल तरंगों का स्पर्श करके जब वायु का प्रवाह होता तो नदी तट के घास–पात, वृक्ष, पशु–पक्षी आदि असमय काल कवलित हो जाते थे। यह स्थिति चिंताजनक थी। एक दिन गेंद खेलते हुए बाल कृष्ण ने अपने सखा श्रीदामा की गेंद यमुना में फेंक दी। श्रीदामा गेंद वापस लाने के लिए कृष्ण से जिद करने लगे। बाल कृष्ण यमुना में कूद पड़े। वे उछलकर कालिया के फनों पर चढ़ गए और उस पर पैरों से प्रहार करने लगे और जल प्रदूषण के प्रतीक कालिया पर विजय प्राप्त कर ली। वृंदावन के नर–नारियों ने देखा कि भगवान श्रीकृष्ण के एक हाथ में बाँसुरी थी और दूसरे हाथ में वह गेंद थी, जिसे लेने का बहाना बनाकर वे यमुना में कूदने की लीला कर रहे थे।

दृश्य ..

श्रीदामा ... हे कृष्ण ! तुमने मेरी गेंद यमुना जी में क्यों फेंक दी, मुझे मेरी गेंद वापस लाकर दो।

बाल कृष्ण .. हे मित्र! यमुना में प्रवाह बहुत है, देखो जल भी कितना प्रदूषित है। वहां विषधर कालिया नाग का वास है . मैंने जान बूझकर थोड़े ही गेंद यमुना जी में फेंकी है, वह तो खेलते हुये जल में चली गई . तुम घर चलो मैं तुम्हें दूसरी गेंद दे दूंगा।

श्रीदामा ... नहीं नहीं कृष्ण ! मुझे दूसरी गेंद नहीं चाहिये, तुम मुझे अभी ही मेरी वही गेंद लाकर दो। मुझे अपनी वह गेंद अति प्रिय है।

बाल कृष्ण .. अच्छा श्रीदामा ! तुम नहीं मानते हो तो मैं तुम्हारी वही गेंद लाने का यत्न करता हूं। कृष्ण धीरे–धीरे यमुना जी में प्रवेश कर जाते हैं–

कृष्ण का यमुना में प्रवेश का प्रतीकात्मक अभिनय

संगीत अंतराल ... मंच पर रोशनी कम की जाएगी। पुनः धीरे–धीरे प्रकाश बढ़ाया जाएगा।

किनारे खड़े बाल सखा ... इतनी देर हो गई कृष्ण कहां गये ... अरे श्रीदामा तुमने ही हमारे कृष्ण को जबरदस्ती यमुना जी में भेजा है।

दूसरा सखा .. वह भी केवल एक गेंद के लिये।

एक गोपी ... रोते सुबकते हुये .. श्रीदामा ! मेरे कृष्ण को वापस लाओ , मैं कुछ नहीं जानती। जोर से आवाज लगाते हुये ... हे कृष्ण जल्दी वापस आ आओ।

श्रीदामा .. रोते हुये .. नदी की ओर उस तरफ देखते हुये जहां से कृष्ण ने नदी में प्रवेश किया था .. अच्छा कृष्ण , तुम लौट आओ , मुझे गेंद नहीं चाहिये।

धीरे–धीरे वृंदावन के नर नारी एकत्रित हो जाते हैं

नर नारियों का समूह .. सभी पुकारने लगते हैं, हे

कन्हैया ! तुम कहां हो ! लौट आओ ...

प्रकाश मद्धिम होता है और.. पुनः प्रकाश बढ़ता है , बैकग्राउंड में पर्दे पर नदी का दृश्य .. कृष्ण कालिया नाग के फन पर सवार मुरली बजाते हुये दिखते हैं ...

नर नारियों की भीड़ .उल्लास से .. हमारे कृष्ण कालिया पर सवार होकर नृत्य कर रहे हैं, उन्होंने कालिया का मद मर्दन कर दिया है। नर नारी हर्ष से नृत्य करते हैं।

पार्श्व संगीत –

काले नाग के नथैया
अपने प्यारे कृष्ण कन्हैया
जय कृष्ण .. जय कृष्ण –
फन पर हुये सवार भैया
अपने प्यारे कृष्ण कन्हैया
जय कृष्ण .. जय कृष्ण ..

बांसुरी की धुन के नाद के साथ परदा गिरता है।

पर्यावरण की प्राणहिता– 'मानवीय सोच...!'

अखिलेश सिंह श्रीवास्तव 'दादूभाई'
सिवनी, मध्यप्रदेश

मित्रों यत्र–तत्र आंकड़े उपलब्ध हैं, जिनमें आंकड़ों की भरमार–यों तो पर्यावरण पर कई लेख यत्र–तत्र मिलेगें, जानकारियों का अकूत संसार मिलेगा इस स्थिति में पर्यावरण पर और लिखने की क्या आवश्यकता है जी हां... बहुत आवश्यकता है, पर कुछ 'नए दृष्टिकोण के साथ'। आइए हम इस आलेख के माध्यम से एक ऐसे विषय पर विचार करते हैं जो पर्यावरण से संबंधित सभी कारकों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जिसके नियंत्रण मात्र से सर्वस्व – नियंत्रण संभव है। रहीम भी तो यही मार्ग दिखा गए हैं –

''कै साधे सब सधै, सब साधे सब जाए।
रहिमन मूलहिं सींचिबो, फूले फले अघाय''

पर्यावरण ! यह एक शब्द मात्र नहीं न ही प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता कोई भावबोध है, अपितु पर्यावरण इस धरित्री पर जीवन की प्राणहिता है। जीवन! जिसमें मानव, जंतु, वनस्पति समुद्र, नदियाँ, वायु, पर्वत, उपत्यकाएँ, गहन कंदीराएँ, मरुस्थल सभी इसकी सीमा में हैं। पर्यावरण और जीवन–से तात्पर्य इसका व्यापक वास है... 'ईशा वास्य मिदंसर्वं।' पर्यावरण 'परि' और 'आवरण' शब्दों का योग है। परि अर्थात चहूँ ओर और आवरण अर्थात चहूँ ओर से घिरा हुआ, आवरित। रत्नगर्भा के सभी भौतिक, रासायनिक, जैविक, अजैविक, मानव निर्मित–अनिर्मित समस्त कारक प्रकृति के परिधि अंश हैं। साधारण रूप में समझें तो शुद्ध जलवायु संसार की सबसे बड़ी सौगात है यदि जलवायु ही दूषित हो तो भला अन्य किसी विकास का क्या मूल्य हमारा यही सबसे महत्वपूर्ण चिंतन का विषय है। वर्तमान में विश्व जिस व्यवहार के प्रदूषण के दंडात्मक परिणाम से जूझ रहा है वह मानव के आचार– महामारी का रूप है।

खेतों में बोए गए धान के साथ खरपतवार जैसे बोंदरा, गेंदरा, चौड़ी पत्ती, आदि की खरपतवार तथा पराली जलने से कचरा फ़सल हानि करती है वैसे ही पर्यावरण की शुद्धता को दूषित धुँआ,हानिकारक रसायन रिसाव, आणविक संयंत्रों के विषाक्त पदार्थ, वन – विदोहन, ज्वालामुखी विस्फ़ोट इत्यादि हानि पहुँचाते हैं अतः जिस प्रकार किसान सब कार्य छोड़ कर खेत–से कचरा साफ़ करता है वैसे ही पर्यावरण स्वच्छता के लिए सब काज छोड़ के सार्वजनिक प्रयास आवश्यक हैं। अच्छा बंधुओं! तनिक ध्यान तो दीजिए क्या वास्तविक रूप–से उपरोक्त लिखित कारकों से ही पर्यावरण ह्रास होता है; क्या प्रदूषण का मूल कारण यही है...! नहीं यह नही है; मूल कारण कुछ और है। प्रदूषण का मूल कारण यह दूषण नहीं वरन मानव की दूषित मानसिकता है। ऐसा मेरा विश्वास है। यदि इंसान, मानवता के दायरे मे रहकर कार्य करे तो वह ऐसे प्रदूषण उत्सर्जक कृत्य करेगा ही नहीं। यह तो मानवीय स्वार्थ है कि वह मात्र स्व–चिंतन करता है, यदि हम सभी अपने अधिकारों के साथ कर्तव्यों के प्रति भी सजग हो जाएँ तो निश्चित ही पर्यावरण को इसका सीधा–सीधा लाभ मिलेगा; जैसे–लॉक डाउन काल में स्वच्छ पर्यावरण, वायु और जल शुद्धता के अप्रितम दृश्य देखने को मिले। इस जगत मे यदि मानवीय सोच बस शुद्ध हो जाए तो सर्वस्व शुद्धता संभव है। नदियों को विश प्रवाही बनाना, शांत नभ मे घातक कोलाहल उत्पन्न करना, ऋतु–चक्र मे बदलाव, ओज़ोंन परत में छिद्र, जल पवित्रता को ना–नाविध जल प्रदूषण क्रियाकलाप से समाप्त करना सभी पर्यावरण रिपु हैं, पर इन सब के पीछे जो मुख्य दोषी है, वह है, 'मानव की लोभी सोच, उसकी दूषित मानसिकता।'

रामचंद्र सिंह देव अपनी पुस्तक 'सिविलाइज़ेशन इन हरी' मे लिखते हैं, जो दैत्याकार बाँध बनाए जा रहे हैं वह मानवता की कब्रगाहें हैं। इन बाँधों की जो उम्र बताई गई है वह हमारी नासमझी और गंदगी की आदतों के चलते लगातार कम हो रही है। अन्य सामान्य स्थानों पर जल ग्रहण क्षेत्रों में रेत भरने के कारण वर्षा जल संग्रहण कठिन हो रहा है जो धीरे–धीरे सूखे की स्थिति बना रहा

है। पृथ्वी में भयंकर बीमारियाँ भी पर्यावरण असंतुलन का दुष्परिणाम हैं। प्लेग समाप्त हो गया था, आज पुनः सिर उठा रहा है। इसका मुख्य कारण भूकंपों से पहाड़ी चूहों का बाहर आना और मानवीय बस्ती के चूहों के साथ मिलना है। सोचिए! कितना भयावह और चिंताजनक विषय है। दूसरी ओर स्वयं यह भूकंप भी मानव द्वारा अचला को भीतरी–भीतर पोला करने के दुष्परिणाम हैं।

मानव अपने विकास–से आत्ममुग्ध एक छलावे में

जी रहा है; आत्म प्रवंचना ! इस झूठ–के अनृत–से जितनी शीघ्रता से बाहर निकला जा सके उतना अच्छा है अन्यथा पृथ्वी के अभ्यांतर होने वाले परिवर्तन मानवीय अस्तित्व को इतिहास बना सकते हैं। कोरोना इसका साक्षात उदाहरण है। निश्चित ही यह बात तय है कि पर्यावरण रक्षा के लिए हमें अपनी लाभवादी, अवसरवादी सोच में परिवर्तन लाना होगा शेष कारकों पर स्वतः नियंत्रण हो जाएगा। जब मानव अपनी सोच सात्विक रखेगा तब वह ऐसा कोई कार्य नहीं करेगा जो प्रकृति विरुद्ध हो। इसी प्रकार कृषि और वानस्पतिक विकास भी इस दिशा मे मील का पत्थर सिद्ध होगा और प्राणहिता बन प्रकृति की रक्षा सुनिश्चित करेगा।

भारत जैसे संस्कृति पोषक राष्ट्र में प्रकृति को लोक जीवन की देवी माना जाता है। यहाँ तीन प्रमुख देवियाँ हैं। पर्वतों की देवी पार्वती, जल–धन की देवी लक्ष्मी एवं धरती की देवी सीता। यहाँ तो तीज–त्योहार भी वनस्पति आश्रित होते हैं; जैसे–तिल की फ़सल के साथ मकर सक्रांति। आम की मंजीरी के साथ बसंत पंचमी और सरस्वती पूजा। बेर के आगमन के साथ महाशिवरात्रि। पलाश फलने के साथ होली का उत्सव। पीपल, नीम की पूजा के रूप में शीतला माता पूजा, गुड़ी पड़वा। कृषि परिवर्तन के साथ आखा तीज। वर्षा काल में हरतालिका तीज। वन देव के रूप में श्री गणेश पूजन इत्यादि।

बड़ी शुरूआत की आवश्यकता नहीं है हम जहाँ हैं अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग कर सकते हैं। एक उदाहरण प्रशंसनीय है, सकारात्मक सोच के व्यावहारिक क्रियान्वयन के लिए सिवनी निवासी कपिल पाण्डेय एवं इनके साथियों ने एक प्रयास प्रारंभ किया। ये पर्यावरण सेवी, लोगों को घर पर सीमित साधनों के साथ, सीमित स्थान पर कृषि करने की विधि बात रहे हैं, जिसके माध्यम से दैनंदिन जीवन में उपयोग के लिए सब्जी–भाजी मिल सके और घर मे शुद्ध–वायु संचरण बढ़े। इसी के साथ इनकी टीम सब्जी–भाजी और फलों के पौधों में थ्री–डी कटिंग के माध्यम से उत्पादन क्षमता वृद्धि में मदगार साबित हो रही है।

एक माँ जो हम को जन्म देती है और दूसरी

माँ जो जीवन पर्यंत हमारे रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति करती है यहाँ तक कि अंतिम विदा काल में अपनी क्रोड़ में स्थान देती है। अतः हमारा दायित्व दोनों के प्रति

समान होना चाहिए। माँ तुल्य पूजित नदियाँ, प्रथाओं, मान्यताओं के अतिवादी सोच के अंधविश्वास के कारण दूषित हो कर करुण विलाप कर रही हैं। यहाँ कवयित्री प्रतिमा की पंक्तियाँ उनकी व्यथा चित्रित करती हैं–

'हमसे–तुमसे ठेस लगी है
सोमसुता रानी को।
पीड़ा से कम होते देखा नदियों के
पानी को।।

एक दूसरा भयावह दृश्य यह है कि मानवीय जनसंख्या वृद्धि अनियंत्रित हो रही है। परिणामतः अब स्थिति यह है कि इंसान रहवासी भूमि की खोज में वन्य जीवों के घरों पर अतिक्रमण कर रहा है। वन! जो जलवायु संतुलन के महत्वपूर्ण साधन हैं, मानव की अमानवीयता का ग्रास बन रहे हैं जिस प्रकार वनों की कटाई हो रही है, वह दिन भी दूर नहीं है कि नक्शे और काग़ज़ में तो वन–दर्शन होंगे; परंतु सैटेलाइट चित्र इसके विपरीत वन–विहीन दिखेंगे। यहाँ पुनः कवयित्री प्रतिमा की पंक्तियाँ वनों का प्रतिनिधित्व करती कुछ यूं कहती हैं–

'अचला के श्रृंगार महीधर के हैं
मित्र अभिन्न
हरित इनके परिधानों को कौन
कर रहा छिन्न
महामेघ–से हिल्लोलित ये जीवन पाते हैं।
बैठो इनके पास तनिक जंगल बतियाते हैं।'

स्मरण आ रहा है अमृता देवी और उनके परिवार के साथ पूरे विश्नोई समाज का वह आत्मोत्सर्ग जिन्होंने खेजड़ी पेड़ की रक्षा में अपने प्राण गवाँ दिए। कितना तेज था उनके सिद्धांत में–

'सिर साटे रूख रहे तो भी सस्तो जाण।' इसी आंदोलन से प्रेरित हो सुंदरलाल बहुगुणा ने भी चिपको आंदोलन चलाया।

पर्यावरण संरक्षण की जागरूकता बढ़ाने के लिए

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1972 में 5 जून–से 16 जून तक विश्व पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया गया। अगले वर्ष 5 जून 1973 को प्रथम विश्व पर्यावरण दिवस मनाया गया। हर वर्ष पर्यावरण की थीम अलग–अलग होती है। वर्ष 2020 की थीम है प्रकृति के लिए समय इसका उद्देश्य पृथ्वी और मानव विकास पर जीवन का समर्थन करने वाले आवश्यक बुनियादी ढाँचे को प्रदान करने पर ध्यान दिया जाए। निश्चित ही इस वर्ष अखिल जगत में पर्यावरण शुद्धता स्वतः बढ़ी है क्योंकि प्रदूषण फ़ैलाने वाला धरती का तथाकथित श्रेष्ठतम जीव, मानव एक ऐसी वैश्विक महामारी कोरोना जो स्वयं उसी के कुकृत्यों का दुष्परिणाम है, से अपनी जान बचाने के लिए घरों मे बंद है। लेकिन स्थिति भी स्पष्ट है कि यह धरती हमारी निजी संपति नहीं कि हम कुछ भी करें। हम तो इसके आश्रित हैं और जब भी हम अपनी मर्यादा का उल्लंघन करेंगे भोगना भी हमें ही पड़ेगा। सकल लॉकडाउन ने जहाँ स्वच्छता निर्मित करी वहीं अनलॉकडाउन आते ही इंसान अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है। केरल मे एक गर्भवती हथनी को बारूद–से भरा फल खिलाना, यह प्रकृति विरोधी अधम घटना है। पवित्र हुए नदी तट पुनः अंध भक्ति के शिकार होने लगे भाँति–भाँति के बहानों के साथ वह प्रकृति की शुद्धता को पुनः खंडित करने की तैयारी करता दिख रहा है। समय प्रहार के बाद भी मूढ़ कृत्य करता मूर्ख मानव...!

अंततः पुनः वही बात निकल कर सामने आई कि इंसानी सोच ही असल मे प्रकृति के प्रदूषण को जन्म देती है। अतः चाहे समझा–बुझा के, चाहे ताड़ना–से, पर इस कुबुद्धि–भावों पर रोक ही सर्वबाधा उपचार है। सुन्दर काण्ड में भी लिखा है–

''बिनय न मानत जलधि जड़,
गए तीनि दिन बीत।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होई
न प्रीति।।''

धरती माँ के धानी आँचल को मैला करने वाले हर हाल में ताड़ना के अधिकारी हैं।

पर्यावरण संरक्षण के चिंतन के पश्चात कुछ महत्वपूर्ण विचारणीय बिंदु निष्कर्षतः दृष्टि–सीमान्तर्गत होते हैं जिनका क्रियान्वयन वांछनीय हैं; यथा–

1) मानव में मानवीय भावना के संचरण के लिए भावना प्रधान प्रयास किए जाएँ; जैसे–टेली फ़िल्म, विज्ञापन, साहित्य लेखन।

2) प्रदूषण उत्सर्जक हर चीज़ पर कठोर वैधानिक बंध लगाया जाए।

3) पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय दायित्व सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

4) शिक्षा में ऐसे सकारात्मक पाठ जोड़े जाएँ जिससे शालेय स्तर–से बच्चों के मन मे पर्यावरण संरक्षण के प्रति सम्मान जगे।

5) पर्यावरण नियंत्रण के महत्वपूर्ण प्रयासों में एक महत्वपूर्ण कार्य जनसंख्या नियंत्रण है।

6) घर मे परिजन अपने कृतित्व–से ऐसा वातावरण निर्मित करें कि उनकी आने वाली पीढ़ी उनका अनुकरण कर पर्यावरण के प्रति अनुशासित हो सकें।

आइए मित्रों, प्रण करें कि प्रकृति स्वच्छता के लिए हम हर संभव प्रयास करेंगे। हम मानव हैं तो पूरा करेंगे अपने मानव धर्म को मन–से, वचन–से, कर्म–से और सोच–से यही तो पर्यावरण की प्राणहिता है, जो प्रकृति की निराश मुस्कुराहट को सुआस–से भर दे।

वंदे...!

लोक परम्पराओं में पर्यावरण

शशि खरे

वन, वृक्ष, पशु–पक्षी सभी में संवेदनाओं, हर्ष–शोक को समझने की क्षमता को आदिकाल से स्वीकारने वाले भारतीय जनमानस ने धरती, आकाश, जल, वायु, नदी, पहाड़, जंगल, वृक्ष, पशु–पक्षी किसी को अकारण हानि न पहुँचे, अकारण जीवन–क्षरण न हो, इसकी चिन्ता को खून में मिला लिया है। दिन–दिन विकसित होती सभ्यता,. समृद्ध होती संस्कृति ने कभी भी, कहीं भी प्रकृति की अनदेखी, अवहेलना नहीं की है।

नगरी सभ्यता तेजी से फिसलती हुई फैलती है किन्तु लोकप्रथाओं में पकड़ होती है, वे स्थायी होती हैं। विज्ञान सम्मत यह तथ्य कि पेड़ भावनाओं को समझता है ग्रामीण जीवन में सदियों से मानी जा रही है। जंगल में लकड़ी काटने गई स्त्री को देखकर काँपते – सहमते पेड़ों को वह एक एक कर छोड़ती जाती है यह समझकर तुम तो पुरखा हो, तुम देव हो,

एक वन झाँकू, दूसरे वन झाँकू, तीसर में पीपर बिराजे / हरिल छबि साजे।

पीपर का बिरवा थरई–थर काँपे थरई थर काँपे। हो रामा, तुम तो हो पुरखा राजे ।।

पर्यावरण, प्रदूषण आदि के लिए अभी बोलियों में, गाँव–देहात की भाषा में कोई शब्द नहीं मिलता है।

किन्तु धर्म और प्रथाओं में प्रकृति के प्रत्येक घटक के लिए सावधानी और सुरक्षा की व्यवस्था है। पुरानी पीढ़ी नयी पीढ़ियों को सिखाती है।

नदी में पहला पाँव रखते ही, नदी के जल को माथे से लगाकर नमन करना है। नदियों, घाटों, तालाबों की स्वच्छता पवित्रता का ध्यान रखना इस तरह मस्तिष्क में रच–बस जाता है कि व्यक्ति एकांत में भी नियम भंग करने की नहीं सोचता।

वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों के कारण पूरे विश्व में ताप बढ़ रहा है। इस वैश्विक तपन के कारण हो रहे जलवायु परिवर्तन का दुष्प्रभाव संपूर्ण जीव जगत पर हो रहा है तथा इससे और अधिक अनिश्चित अतिवादी मौसम की संभावना है। भूकंप, बाढ़, भूस्खलन, सूखा, जल संकट व जलवायु परिवर्तन बड़ी चुनौती के रूप में सामने आये हैं।

ये चुनौतियां पहले भी थीं, किन्तु तब दुनिया में कम जनसंख्या थी तथा इनका इतना विकराल रूप पहले न था।

1980 के आसपास पर्यावरण की दो गंभीर चुनौतियाँ सामने आईं। क्षतिग्रस्त ओजोन परत और जलवायु परिवर्तन की समस्या।

देखा जाये तो पर्यावरण की तमाम समस्याएँ मनुष्य ने स्वयं निर्मित की हैं।

लाखों वर्ष पहले गुफाओं का निवास और कच्चे आहार से बढ़कर, प्रकृति के तीनों रूपों–ठंड, गर्मी, बरसात के भीषण रूप से आराम पाने के लिए मानव ने जो कदम बढ़ाये ...तो विवेक के साथ संतुलन का ध्यान नहीं रखा। विज्ञान का दूसरा सिरा एक बन्द गली है। सभी चिन्तक, वैज्ञानिक, शोधकर्ता और दार्शनिक सभी जानते हैं फिर भी विकास नाम के लक्ष्य के पीछे सारे शक्तिशाली देश, मँझले और छोटे सभी दौड़ते गये उसे परिभाषित किये बिना।

बिगड़े पर्यावरण की चिन्ता का आकाश छूता प्रेत, जो हमारे काबू से बाहर हो गया है ,बोतल में ही बन्द रहता जैसा सन् साठ–सत्तर तक था, यदि सीधी सरल लोकप्रथाओं का चलन बना रहता। हमारे लोगों में संतोष, उदारता और परहित की भावना थी उन्हें उपेक्षित किया जाने लगा और वे अपनी जिम्मेदारियों से मुँह फेरने लगे। स्वार्थ और लालच ने वातावरण ही बदल दिया।

यह प्रश्न मन में उठना स्वाभाविक है कि लोकप्रथाओं में पर्यावरण की क्या व्यवस्था हो सकती है, जबकि लोक बोलियों में तो ये शब्द तक नहीं हैं। पृथ्वी पर पाये जाने वाले जल, वायु, मिट्टी, पेड़–पौधे एवं जीव–जन्तुओं का समूह जो हमारे चारों ओर है, पर्यावरण कहलाता है। सामान्य अर्थ में यह हमारे जीवन को प्रभावित करने वाले सभी जैविक व अजैविक तथ्यों प्रक्रियाओं, घटनाओं के समुच्चय से निर्मित इकाई है। यह हमारे चारों ओर व्याप्त है। अजैविक संघटकों में जीवन रहित तत्व और उनसे

जुड़ी प्रक्रियाएँ आती हैं—चट्टानें, पर्वत, नदी, हवा, जलवायु के तत्व..। उपरोक्त सभी घटकों को सम्मान और उनकी सुरक्षा, बचाव के लिए उपयोगी नियम, आदतें लोक परम्पराओं में बनाई गई थीं जिन्होंने सदियों तक मिट्टी, हवा, पानी सभी को शुद्ध रखा और पर्यावरण की रक्षा की।

मिट्टी भारतीय जनमानस में मिट्टी को सर्वोपरि सम्मानीय स्थान प्राप्त है। यद्यपि मिट्टी प्रदूषित न हो उसके लिए कोई स्पष्ट अलग से रिवाज नहीं मिलता। कारण यह है कि रासायनिक खादें, प्लास्टिक, सीमेंट, डिटर्जेंट, एसिड आदि न उपयोग में आते थे न मिट्टी प्रदूषित होती थी ।

वायु ...न कचरा इतना होता था कि समस्या बन जाये। फिर भी बहुत सी चीजों को जलाने का निषेध था जैसे उन्ना यानि कपड़ा। हरी भरी डाल और पत्तियाँ जलाना मना था। अनाज भले ही सड़ गया हो, उसे जलाकर नष्ट करना अपशकुन था।

इन तमाम बातों का ध्यान रखने से हवा शुद्ध बनी रहती थी।

जल .. पानी की पवित्रता, शुद्धता का ध्यान तो पूरे भारत के जन जीवन में रखा गया है। पानी को अमृत का आदर दिया गया है और बिना पानी के तो पूजा भी नहीं होती। इसलिये संरक्षण और रख रखाव को व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों स्तर पर अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है।

घरों में जूठे, अस्वच्छ हाथों से पानी छूना, कुंए से निकालना कड़ाई से मना होता है।

नदी के घाट पर, तालाब में नहाने के नियम होते हैं जो बचपन से ही सिखा दिये जाते हैं।

बुंदेलखंड में अत्यंत उपयोगी नियम था कि स्नान से पूर्व पाँच मुट्ठी ..गाद, मिट्टी, रेत जो भी हो उसे बाहर फेंकना है, यह नदी का कर्ज है जो हमें चुकाना है। यदि प्रतिदिन सौ लोगों ने भी पाँच सौ मुट्ठी रेत, गाद निकाल कर बाहर फेंकी तो घाट और तालाब उथले नहीं होते। तालाब या घाट पर साबुन लगाकर नहाना मना होता है। पानी में थूकना या अन्य गन्दगी भयंकर पाप माना गया है।

हजारों वर्षों से सामान्य जनता अपने लिए पानी का प्रबंधन—संग्रहण, नदी, तालाब, कुओं की सफाई, रख—रखाव मिल—जुलकर, करती आई है।

अनुपम मिश्र के अनुसार पाँचवी सदी से पन्द्रहवीं सदी तक देश के इस कोने से उस कोने तक लाखों तालाब बनते आये हैं। अट्ठारहवीं—उन्नीसवीं सदी के अन्त तक थोड़े बहुत तालाब बनते ही रहे। अकेली रीवा रियासत में पाँच हजार तालाब थे। मैसूर राज्य में लगभग चालीस हजार तालाब थे। तालाब खुदवाना हमारे यहाँ सबसे महान समाज—सेवा, मोक्षदायिनी भक्ति से बढ़कर था।

एक धारणा दृढ़ता से प्रचलन में थी कि यदि गड़ा हुआ धन मिला तो तालाब बनवाना ही है।

खर्च बड़ी समस्या नहीं थी क्योंकि इस काम के लिए लोग स्वेच्छा से स्वतः प्रेरित होकर श्रमदान करते थे। किसान अमावस और पूनम को खेत में काम नहीं करते थे तो यह समय तालाब आदि की देखरेख में लगाया करते थे। कई राज्यों में यह प्रथा थी कि यदि कोई तालाब खुदवाता है तो उसे भूमि लगान नहीं देना होगा।

बुंदेलखंड में किसी गंभीर अपराध की सजा के तौर पर भी यह काम मिलता था तालाब खुदवाने का अपनी पूँजी और श्रम से।

आज प्रत्येक काम के लिए सरकार और व्यवस्था का मुँह जोहने की आदत है।

हजारों, लाखों तालाबों को पाट कर उन पर काँक्रीट के मकान खड़े कर लिए गए हैं। जेटपम्प घर घर में दैनिक जरूरत का पानी निकालने की सुविधा का इतना दुरुपयोग हुआ कि जमीन के नीचे पानी के भंडार समाप्ति की ओर हैं।

तालाब से गाद निकालना अब खर्चीला बोझ बन गया है।

पहले कई क्षेत्रों में तालाबों और घाटों की सफाई एक उत्सव के रूप में आयोजित की जाती थी। छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और दक्षिण प्रदेशों में बरसात के पहले सारे ग्रामवासी मिलकर, गाते—गाते तालाब साफ कर डालते थे और गाद अपने अपने खेतों में डाली जाती थी। अब सरकार के माथे यह काम खर्चीला लगता है। इसीलिए इस तरह के अनिवार्य कामों को धर्म और प्रथाओं से जोड़कर आदमी को मानसिक रूप से तैयार रखा जाता था।

कार्तिक स्नान का बड़ा महत्व है उत्तर व मध्य भारत में।

बुंदेलखंड की एक कथा है, एक स्त्री आलसी थी। नदी में पहले पाँच मुट्ठी तलछट गाद या रेत निकाल कर ही स्नान किया जाता था। उस स्त्री ने नदी से कहा मैं कार्तिक स्नान समाप्ति के बाद इकट्ठी तीस दिन की गाद निकाल दूँगी तीस दिन बाद उसने अपना काम निकल जाने के बाद नदी को ठेंगा दिखा दिया तीस बार।

उसके हाथों में तीस अँगूठे ऊग आये। एक तरफ ये कथायें लोगों को अपना कर्तव्य बिना आलस्य के निभाने की प्रेरणा देतीं हैं, दूसरी तरफ पर्यावरण रक्षा का संदेश भी।

पेड़–पौधे.. पेड़–पौधों के साथ तो मानव जीवन का संबंध आदिकाल से है और सभ्यता का रुख कहीं भी मुड़ा हो, कितने भी आगे बढ़ा हो वन और वृक्षों का साथ कहीं नहीं छूटा। जन्म से लेकर मृत्यु तक लकड़ी के रूप में वृक्ष साथ रहता है।

भारत भर में यह प्रचलित है कि सूरज डूबते ही पेड़ सो जाते हैं फिर उन्हें छूकर परेशान नहीं करना। पौधों तक से फूल और पत्ती, रात में तोड़ना बुरा माना जाता है। सभी विशाल वृक्ष किसी न किसी देव का निवास माना जाता है। पौधों को जड़ी बूटियों को नक्षत्रों और तारों से सम्बद्ध किया गया है।

अनेक व्रत, पूजा पेड़ पौधों से जुड़ी है। वटवृक्ष सावित्री कथा से, केला विष्णु से। बेलवृक्ष में लक्ष्मी का निवास।

नदी व तालाब के किनारे लगाये हुए वृक्ष बाढ़ को रोकते हैं। तालाबों के किनारे पीपल, बरगद, साल, गूलर, आम, जामुन के पेड़ लगाये जाते थे। ये तालाब के पानी को पाल तोड़कर बहने से रोकते थे।

छत्तीसगढ़ में तालाबों में शीतला माता का वास माना जाता है अतः नीम उसके किनारे अवश्य लगाये जाते हैं।

मैथिल कवि विद्यापति अपने गीत में दूल्हे को गम्हार का पीढ़ा देते हैं। बुन्देलखण्ड में आम का पीढ़ा शादी में काम में लाया जाता है। केले का मण्डप, आम का बंदनवार।

लोक जीवन के हर पल में वृक्षों से गहरा नाता है।

इस प्रेम ने वृक्षों और जंगलों की रक्षा की। जबसे मनुष्य और पेड़ों के बीच दूरी बढ़ी है तभी से पर्यावरण भी संकट में है और धरती पर जीवन भी–

बाबा निबिया के पेड़ जनि काटहु।
निबिया चिरइया बसेर
सबतें चिरइया उड़ि उड़ि जइहें
रही जइहें निबिया अकेल।

पर्यावरण और विकास

प्रवीर दुबे
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

जल स्रोत हो रहे कम
हर जगह प्रदूषण का वास है
ये कैसा विकास है
ये कैसा विकास है ।

हवा में घुल रहा जहर
बिसलेरी में ढूंढता तू प्यास है
ये कैसा विकास है
ये कैसा विकास है।

इमारतें गगनचुंबी शहर में
तारों बिन सूना दिखता आकाश है
ये कैसा विकास है
ये कैसा विकास है।

पेड़ों को काटते चले
धरती की देखो टूटती अब सांस है
ये कैसा विकास है
ये कैसा विकास है।

आकांक्षाओं को कम करके
भावी पीढ़ी को कुछ देते चलो
यही बाकी बची कुछ आस है
शायद यही विकास है
शायद यही विकास है।

पर्यावरण का आवरण

विकास शर्मा
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

नदियों का पानी कारा क्यूँ,
सागर का पानी भारी क्यूँ,
सोचा है कभी अपने लालच के बारे में,
सोचा है कभी अपनी जरूरत के परे जाके भी।

चादर डाली थी कर्ताधर्ता ने,
पर्यावरण दिया था नाम उसे तुमने,
हवा, जल, आभूषण क्या नहीं था उसमें,
और तो और ज्ञान का बेतहाशा भंडार भी था इसमें।

चादर को मैला कर डाला है,
कहीं कहीं तो छेद भी कर डाले हैं,
रंगरूप दुःदर्शनीय कर डाला है,
लालच और स्वार्थ से
बस तार तार कर डाला है।

समय रहते हमें चेतना होगा,
चादर में रफू करना होगा,
आँखों की सफाई भी करना होगा,
इन नाखूनों को हमें काटना भी होगा।

जीवन में एक संकल्प लेना होगा,
पर्यावरण का आवरण सँवारना होगा,
अंत नहीं तो अब दूर होगा,
कोरोना तो बस बानगी भर है,
अंत को बस हमें बदलना होगा।

पर्यावरण में प्लास्टिक प्रदूषणः कारण एवं निदान

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा
उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान,
जबलपुर, मध्य प्रदेश

आज हर जगह प्लास्टिक दिखता है जो पर्यावरण को दूषित कर रहा है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में लगभग 10 से 15 हजार यूनिट पॉलिथीन का उत्पादन हो रहा है। 1990 के आंकड़ों के मुताबिक देश में इसकी खपत बीस हजार टन थी जो अब तीन से चार लाख टन तक पहुंच गई है–यह भविष्य के लिए एक अशुभ संकेत है। चूंकि पॉलीइथिलीन परिसंचरण में आया तो सभी पुराने पदार्थ अप्रचलित हो गए क्योंकि कपड़ा, जूट और पेपर को पॉलिथीन द्वारा बदल दिया गया था। पॉलिथीन निर्मित वस्तुओं का उपयोग करने के बाद फिर से इनका उपयोग नहीं किया जा सकता इसलिए उन्हें फेंक दिया जाना चाहिए। ये पाली–निर्मित वस्तुएं घुलनशील नहीं हैं यानी वे जीव–निष्पादित पदार्थ नहीं हैं।

जहां कहीं प्लास्टिक पाए जाते हैं वहां पृथ्वी की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है और ज़मीन के नीचे दबे दाने वाले बीज अंकुरित नहीं होते हैं तो भूमि बंजर हो जाती है। प्लास्टिक नालियों को रोकता है और पॉलिथीन का ढेर वातावरण को प्रदूषित करता है। चूंकि हम बचे खाद्य पदार्थों को पॉलीथीन में लपेट कर फेंकते हैं तो पशु उन्हें ऐसे ही खा लेते हैं जिससे जानवरों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है यहां तक कि उनकी मौत का कारण भी।

जमीन या पानी में प्लास्टिक उत्पादों के ढेर को प्लास्टिक प्रदूषण कहा जाता है जिससे मनुष्य, पक्षी और जानवरों के जीवन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। प्लास्टिक प्रदूषण का वन्यजीव, वन्यजीव आवास और मनुष्य पर खतरनाक प्रभाव पड़ता है। प्लास्टिक प्रदूषण भूमि, वायु, जलमार्ग और महासागरों को प्रभावित करता है।

प्लास्टिक मुख्य रूप से पेट्रोलियम पदार्थों से उत्सर्जित सिंथेटिक रेजिन से बना है। रेजिन में प्लास्टिक मोनोमर्स अमोनिया और बेंजीन का संयोजन करके बनाया जाता है। प्लास्टिक में क्लोरीन, फ्लोरीन, कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और सल्फर के अणु शामिल हैं ।

आज दुनिया में हर देश प्लास्टिक प्रदूषण की विनाशकारी समस्याओं से जूझ रहा है। हमारे देश का विशेषकर शहरी वातावरण प्लास्टिक प्रदूषण से बुरी तरह प्रभावित हुआ है। शहरों में गाय और अन्य जानवरों के साथ बड़ी संख्या में पक्षी प्लास्टिक की थैलियों का उपभोग करने की वजह से मारे जा रहे हैं। चूंकि यह स्वाभाविक रूप से अवक्रमित नहीं है इसलिए यह प्रकृति में बना रह सकता है जो किसी भी सक्षम माइक्रो बैक्टीरिया के अभाव के कारण प्रकृति में स्थायी रूप से बने हुए हैं। यह गंभीर पारिस्थितिकी असंतुलन की ओर जाता है। पानी में अघुलनशील होने के कारण इसे नष्ट नहीं किया जाता है। यह भारी जल प्रदूषण को बढ़ावा देता है और धरती पर जल प्रवाह को रोकता है जिसके कारण ऐसा प्रदूषित जल मक्खियों, मच्छर और जहरीले कीटों का उत्पादन करता है जो मलेरिया और डेंगू जैसे रोगों को फैलाते हैं।

अनुसंधान ने दिखाया है कि प्लास्टिक की बोतलों और कंटेनरों का उपयोग बेहद खतरनाक है। एक प्लास्टिक के पैकेट में गर्म भोजन या पानी होने से कैंसर हो सकता है। जब अत्यधिक सूरज की रोशनी या तापमान के कारण प्लास्टिक गर्म हो जाता है तो उसमें हानिकारक रासायनिक डाईऑक्सीजन का रिसाव शरीर को भारी नुकसान पहुंचाता है।

40 माइक्रोन से कम सामान्य तापमान पर प्लास्टिक बैग बायोडिग्रेडेबल नहीं हैं। वे हमेशा के लिए पर्यावरण में बने रहेंगे। लंबे समय तक अपर्याप्त नहीं होने के अलावा प्लास्टिक के कई दुष्प्रभाव भी होते हैं जो कि मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। उदाहरण के लिए पाइपों, खिड़कियों और दरवाजों के निर्माण में इस्तेमाल पीवीसी विनाइल क्लोराइड के पोलीमराइजेशन द्वारा बनाई गई है। इसकी संरचना में इस्तेमाल रसायन मस्तिष्क और यकृत का कैंसर पैदा कर सकता है। मशीनों की पैकिंग बनाने के लिए बेहद कठोर पोलीकार्बोनेट प्लास्टिक फोस्जिन बिस्फेनोल यौगिकों के संतृप्त से प्राप्त किया जाता है। ये घटक अत्यधिक जहरीली और नम गैस उत्पन्न करती हैं। कई प्रकार के प्लास्टिक के निर्माण में फार्मलाडेहाइड का उपयोग किया जाता है। यह रसायन

त्वचा पर चकत्ते पैदा कर सकता है। कई दिनों तक इसके संपर्क में रहने से अस्थमा और श्वसन रोग हो सकते हैं।

कई कार्बनिक यौगिकों को प्लास्टिक में लचीलेपन पैदा करने के लिए जोड़ा जाता है। कई प्रकार के पॉलिथीन गैसीकरण कैसिनोजेनिक यौगिक हैं। प्लास्टिक में पाए जाने वाले ये जहरीले पदार्थ प्लास्टिक के गठन के दौरान उपयोग किए जाते हैं। तैयार (ठोस) प्लास्टिक के बर्तन में अगर भोजन सामग्री को लंबे समय तक रखा जाता है या शरीर की त्वचा लंबे समय तक प्लास्टिक के संपर्क में होती है तो प्लास्टिक में छुपे रसायन कहर बरपा सकते हैं। इसी तरह प्लास्टिक का कचरा जिसे कूड़ेदान में फेंक दिया जाता है वह पर्यावरण के लिए कई जहरीले प्रभाव छोड़ सकता है।

प्लास्टिक अपशिष्ट कई जहरीली गैसों का उत्पादन करता है। नतीजतन गंभीर वायु प्रदूषण का उत्पादन होता है जो कैंसर को बढ़ावा देता है, शारीरिक विकास को रोकता है और भयंकर बीमारी का कारण बनता है। प्लास्टिक के उत्पादन के दौरान एथिलीन ऑक्साइड, बेंजीन और जाईलीन जैसी खतरनाक गैसें उत्पन्न होती हैं। डाईऑक्सीन भी इसे जलाने पर उभरता है जो बहुत ही जहरीला है और कैंसर पैदा करने वाला तत्व है।

गड्ढों में प्लास्टिक के कारण पर्यावरण खराब हो जाता है, मिट्टी और भूजल विषाक्त हो जाते हैं और धीरे–धीरे पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ना शुरू हो जाता है। प्लास्टिक उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों के स्वास्थ्य की भी एक सीमा होती है जो विशेष रूप से उनके फेफड़े, किडनी और तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करती है।

प्लास्टिक अपशिष्ट जलाने से आमतौर पर कार्बन डाइऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड गैसों का उत्सर्जन होता है जो श्वसन नालिका या त्वचा की बीमारियों का कारण बन सकता है। इसके अलावा पॉलीस्टाइन प्लास्टिक के जलने से क्लोरो–फ्लोरो कार्बन का उत्पादन होता है जो वायुमंडल के ओजोन परत के लिए हानिकारक होता है। इसी तरह पोलिविनाइल क्लोराइड के जलने से क्लोरीन और नायलॉन का उत्पादन होता है और पॉलीयोरेथन नाइट्रिक ऑक्साइड जैसे विषाक्त गैसें निकलती हैं।

प्लास्टिक को फेंकने और जलाने दोनों से ही पर्यावरण को समान रूप से हानि पहुँचती है। प्लास्टिक जलने पर एक बड़ी मात्रा में रासायनिक उत्सर्जन होता है जो श्वसन प्रणाली पर इनफ़्लिंग का कारण बनता है। चाहे प्लास्टिक को जमीन में डाल दें या पानी में फेंक दें इसके हानिकारक प्रभाव कम नहीं होते हैं।

यद्यपि प्लास्टिक निर्मित सामान गरीब और मध्यम वर्ग के लोगों की जिंदगी की गुणवत्ता में सुधार करने में सहायक होते हैं पर साथ ही वे इसके लगातार उपयोग से उत्पन्न खतरे से अनजान हैं। प्लास्टिक एक ऐसी वस्तु बन गई है जो पूजा, रसोईघर, बाथरूम, बैठक कमरे और पढ़ने के कमरे में इस्तेमाल होने लगा है। इतना ही नहीं अगर हमें बाजार से राशन, फलों, सब्जियां, कपड़े, जूते, दूध, दही, तेल, घी और फलों का रस आदि जैसे किसी भी वस्तु को लेकर आना पड़े तो पॉलीथीन का व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाता है। आज की दुनिया में बहुत सारे फास्ट फूड है जिन्हें पॉलिथीन में पैक किया जाता है। आदमी इतना प्लास्टिक का आदी बन गया है कि वह जूट या कपड़े से बने बैग का उपयोग करना भूल गया है। दुकानदार भी हर प्रकार के पॉलिथीन बैग रखते हैं क्योंकि ग्राहक ने पॉली को रखना अनिवार्य बना दिया है। ऐसा चार से पांच दशक पहले नहीं था जब बैग कपड़े, जूट या कागज से बने बैग इस्तेमाल में लाये जाते थे जो पर्यावरण के लिए फायदेमंद थे।

प्लास्टिक कैरी बैग ने आधुनिक सभ्यता में एक बड़ी समस्या पैदा की है। उनके निपटान की कोई ठोस व्यवस्था नहीं होने के कारण वे पर्यावरण के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं। एक छोटे से शहर में पांच से सात क्विंटल बैग बेचे जाते हैं। प्रदूषण की प्रक्रिया तब शुरू होती है जब उपयोग के बाद कचरे में ले जाने वाले सामान को कूड़े के रूप में फेंक दिया जाता है। बायोडिग्रेडेबल होने के कारण प्लास्टिक के बैग कभी भी सड़ते नहीं हैं और पर्यावरण के लिए खतरा बन जाते हैं। कैरी बैग कृषि क्षेत्रों में फसलों के प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में बाधा डालते हैं।

प्लास्टिक की पैकिंग में लिपटे हुए खाद्य और ड्रग्स रासायनिक प्रक्रिया को शुरू कर इसे दूषित और ख़राब करते हैं। ऐसे भोजन की खपत मानव जीवन की समस्या को बढ़ाता है क्योंकि इससे भयानक रोग होते हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण पर्यावरण के लिए एक गंभीर खतरा है। वैज्ञानिक वर्षों से इसके प्रतिकूल प्रभावों के बारे में चेतावनी देते रहे हैं। यह समस्या इसलिए भी विशेष रूप से गंभीर है क्योंकि विभिन्न व्यापक–प्रचारित स्वच्छता अभियान के बावजूद प्लास्टिक कचरे से कुछ भी अछूता नहीं है। इसने गांवों, कस्बों, शहरों, महानगरों यहां तक कि देश की राजधानी को भी नहीं छोड़ा बावजूद इस तथ्य के यह कि पॉलीथीन का उपयोग निषिद्ध है। इस संबंध में राष्ट्रीय ग्रीन ट्रिब्यूनल ने बार–बार अपनी नाराजगी व्यक्त की है। उसने राज्य सरकारों को पूरे देश में प्लास्टिक के अंधाधुंध इस्तेमाल पर फटकार लगाई है।

जहां भी मानव ने अपने कदम रखें वहीं पॉलिथीन प्रदूषण को फैलाया। यह हिमालय घाटियों को भी दूषित कर रहा है। यह इस स्तर तक बढ़ गया है कि सरकार भी इसके रोकथाम के लिए प्रचार कर रही है। पिकनिक या सैर–सपाटे के सभी स्थान भी इससे पीड़ित हैं।

अध्ययनों से पता चलता है कि प्लास्टिक अपशिष्ट के कारण जलीय प्राणी सुरक्षित नहीं हैं। सूक्ष्मदर्शी जैसे खतरनाक तत्व आमतौर पर कचरे के इस्तेमाल से उत्पन्न होते हैं जैसे कि प्लास्टिक बैग, बोतल ढक्कन, कंटेनर में जल प्रवाह, पराबैंगनी किरणों के उत्सर्जन, सौंदर्य प्रसाधन और टूथपेस्ट में इस्तेमाल होने वाली बड़ी मात्रा में रोगाणुओं का उत्सर्जन। सूक्ष्म प्लास्टिक खतरनाक रसायनों को अवशोषित करता है और जब पक्षी और मछली इसे खाते हैं तो यह उनके शरीर में जाता है। आर्कटिक सागर का नवीनतम अध्ययन साबित करता है कि मछलियों या अन्य जलीय प्रजातियों की तुलना में अगले तीन दशकों में प्लास्टिक अधिक होगा।

सागर में विभिन्न जगहों से कई सालों तक प्लास्टिक के कई छोटे–छोटे टुकड़े आने से वे बहुत बड़ी मात्रा में एकत्रित हो गए हैं। इनकी मात्रा का अनुमान लगभग 100 से 1200 टन है। वे ग्रीनलैंड के समुद्र में प्रचुर मात्रा में हैं। यह आशंका है कि आर्कटिक महासागर में तेजी से बढ़ते प्लास्टिक के कारण आसपास के देशों के समुद्र प्रदूषित हो सकते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि लाखों टन प्लास्टिक अपशिष्ट दुनिया के महासागरों में अपना रास्ता मिल गया है और यह दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है जो एक खतरनाक संकेत है।

यह समाज का कर्तव्य है कि वे इस कहावत को सही साबित करें कि प्रकृति भगवान का अनोखा उपहार है। इसलिए लोगों को पॉलीथीन की वजह से प्रदूषण को रोकने के लिए आगे आना होगा और हर किसी को अपने स्तर पर इसका निपटान करने में शामिल होना होगा। चाहे वह बच्चा हो या बुजुर्ग, शिक्षित हो या अशिक्षित, समृद्ध हो या गरीब, शहरी हो या ग्रामीण सभी को प्लास्टिक के खतरे से छुटकारा पाने के लिए कड़ी मेहनत करनी होगी। परिवार के पुराने सदस्यों को पॉलीथीन का उपयोग नहीं करना चाहिए और अन्य सभी सदस्यों को इसका प्रयोग करने से भी रोकना चाहिए। इसके अलावा यदि आप इसके बारे में लोगों को उचित जानकारी प्रदान करते हैं तो यह पॉलीथीन के इस्तेमाल को रोकने का सबसे बड़ा कदम होगा। जब आप बाजार में खरीदारी करते हैं तो अपने साथ कपड़े से बना एक जूट या बैग ले लीजिए और अगर दुकानदार पॉली बैग देता है तो उसे पेश करने से प्रबल होता है। अगर उपभोक्ताओं ने इसे बंद कर दिया है तो इसकी आवश्यकता दिन–प्रति दिन कम हो जाएगी और एक समय आएगा जब पर्यावरण से पॉलिथीन का सफाया हो जाएगा। सरकारी मशीनरी को भी पॉलीथीन के निर्माण में लगे इकाइयों को बंद करना होगा।

प्लास्टिक अपशिष्ट के अन्य समाधानों में से एक इसका रीसाइक्लिंग है । रीसाइक्लिंग का अर्थ है प्लास्टिक की बर्बादी से प्लास्टिक वापस लेकर प्लास्टिक की नई चीजों को बनाना। प्लास्टिक रीसाइक्लिंग को पहली बार 1970 में कैलिफोर्निया फर्म द्वारा तैयार किया गया था । इस फर्म ने प्लास्टिक स्पिल्स और प्लास्टिक की बोतलों से जल निकासी के लिए टाइल तैयार की थी लेकिन प्लास्टिक की रीसाइक्लिंग के काम अपनी सीमाएं है क्योंकि रीसाइक्लिंग की प्रक्रिया काफी महंगी है और अधिक प्रदूषण के भार से लदी हुई है ।

तथ्य की बात करें तो अधिकांश प्लास्टिक जैविक रूप से गैर–अवक्रमणीय हैं। यह मुख्य कारण है कि आज का उत्पादित प्लास्टिक कचरा सैकड़ों हजारों साल तक चलेगा जो हमारे जीवन और पर्यावरण के लिए यूँ ही परेशानी बनाए रखेगा। ऐसी स्थिति में हमें प्लास्टिक के उत्पादन और निपटान के बारे में गंभीरता से विचार करना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पृथ्वी पर कम

प्लास्टिक होगा तो यह कम मात्रा में समुद्र तक पहुंचेगा। इसलिए समुद्र में प्लास्टिक को कम करने के लिए हमें पृथ्वी पर इसका उपयोग कम करना होगा। चूंकि समुद्र प्रदूषण पृथ्वी के प्रदूषण का विस्तार है इसलिए यह दुनिया के प्रदूषण से कहीं अधिक खतरनाक हो सकता है। उस स्थिति में जब विश्व प्लास्टिक अपशिष्ट के ढेर में बदल जाएगा तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब समुद्र प्रदूषण मुक्त हो तो ही समुद्र साफ रहेगा। इस संबंध में प्लास्टिक प्रमुख कारकों में से एक है।

स्वार्थी और उपभोक्तावादी मानव ने पर्यावरण को पॉलीथीन के अंधाधुंध उपयोग से क्षति पहुंचाई है। आज के भौतिकवादी युग में हमारा समाज, पॉलिथीन के दूरगामी प्रतिकूल प्रभावों और विषाक्तता से अनजान रह इसके प्रयोग से बहुत दूर हो गया है मानो कि जीवन इसके बिना अपूर्ण है।

यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि हम पॉलीथीन या प्लास्टिक के युग में रह रहे हैं। हर कोई जानबूझकर पॉलिथीन के दुष्प्रभावों से अनजान हो जाता है जो कि एक प्रकार का जहर है जो अंततः पर्यावरण को नष्ट कर देगा। अगर हम भविष्य में प्लास्टिक से छुटकारा चाहते हैं तो इससे पहले कि बहुत देर हो जाए और पूरा वातावरण दूषित हो जाए। हमें समय पर सही कदम उठाने होंगे।

परागण सेवाएं एवं जलवायु परिवर्तन

अखिल कुमार एवं दृष्टि शर्मा
हिमालयन वन अनुसंधान संस्थान, शिमला

भूमिका–

फूल, पौधों, फलों और बीजों के विकास के लिए परागण प्रजनन में एक आवश्यक कदम है; इसके बिना पौधे फूलों के बीज उत्पादन करने में असमर्थ हैं। वैज्ञानिक प्रमाण इसकी पुष्टि करते हैं कि परागण से फसलों जैसे फल, सब्जी के बीज, मसाले, तिलहन और चारा फसलों की उपज और गुणवत्ता में सुधार होता है। कीट परागणकर्ता वैश्विक फसलों के लिए एक महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र का कार्य करता है। पौधों के प्रजनन और मानव कल्याण के लिए एक प्रमुख पारिस्थितिकी तंत्र सेवा में पोलीनेशन एक आवश्यक प्रक्रिया है। कई खाद्य फसलें, अनाज को छोड़कर, एंटोमोफिलस हैं। विश्व की लगभग 73 प्रतिशत खेती की फसलों में से मधुमक्खियों द्वारा 19 प्रतिशत, चमगादड़ों द्वारा 6.5 प्रतिशत, 5 प्रतिशत ततैया द्वारा, भृंग द्वारा 5 प्रतिशत पक्षी द्वारा 4 प्रतिशत, और तितलियों और पतंगों द्वारा 4 प्रतिशत परागित की जाती हैं जिसके बदले में परागणकर्ता, नेक्टर एवं पुष्पों के पराग कण इत्यादि संसाधन प्राप्त करके लाभान्वित होते हैं। भारत का सौभाग्य है कि सभी चार प्रमुख मधुमक्खियों की प्रजातियां यहाँ पायी जाती है।

परागणकर्ता और शहद उत्पादक के रूप में मधुमक्खियां, भारतीय कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है परंतु हाल ही में मधुमक्खियों की प्राकृतिक आबादी में गिरावट चिंता का विषय बनी हुई है जिससे बागवानी की फसलों में आने वाले विगत वर्षो में गिरावट की संभावना है। मधुमक्खियों की प्राकृतिक आबादी में गिरावट के विभिन्न कारण है जैसे निवास स्थान का नुकसान, रासायनिक गहन कृषि, जलवायु परिवर्तन को सबसे बड़ा कारण माना गया है। इस सदी के अंत तक एक अनुमानित तापमान वृद्धि 1.1–6.4 इंटर–गवर्नमेंटल पैनल जलवायु परिवर्तन (आईपीसीसी) द्वारा रिपोर्ट की गयी है, जो की परागण सेवाओं के संबंध में एक चिंता का विषय है। जलवायु परिवर्तन के प्रमुख परिणामों में आईपीसीसी ने बर्फ और बर्फ के आवरण में कमी, और बारिश की आवृत्ति एवं तीव्रता में अस्थिरता दर्शाई है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ते हुए तापमान ने प्लांट–पॉलिनेटर इंटरेक्शन के संबंध में महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। जहां एक ओर कीट परागणकर्ताओं की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण है वहीं दूसरी ओर वे नकारात्मक रूप से प्रभावित भी होते हैं। अन्य कारकों मे से, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव आजकल एक प्रमुख मुद्दा

है जो परागण करने वाले कीटो को नकारात्मक रूप से नुकसान पहुंचा रहा है।

जलवायु परिवर्तन और मधुमक्खियां

पांच प्रमुख वैश्विक परिवर्तन दबावों के परिणामस्वरूप पोलिनेटर्स की संख्या में गिरावट आयी है– जलवायु परिवर्तन, परिदृश्य परिवर्तन, कृषि गहनता, गैर–देशी प्रजातियां और रोगजनकों का प्रसार। जलवायु परिवर्तन मधु मक्खियों को अलग–अलग तरीके से प्रभावित कर सकता है। इसका उनके व्यवहार और शरीर क्रिया विज्ञान पर सीधा प्रभाव पड़ सकता है। अत्यधिक तापमान से परागण प्रक्रिया में मधुमक्खियों के व्यवहार की प्रतिक्रियों पर काफी दुष्प्रभाव पड़ सकता है। तापमान में वृद्धि के कारण परागणकर्ता में ओवर हीटिंग का खतरा बना रहता है। जलवायु परिवर्तन से फूलों की प्रजातियां, जिस पर मधुमक्खियां भोजन के लिए निर्भर रहती हैं उनके वितरण में भी दुष्प्रभाव पड़ा है। मधु मक्खियों की कॉलोनियों में सक्रिय गतिविधि और विकास, फूलों के विकास, पराग उत्पादन और नेक्टर पर निर्भर करती है। अत्यधिक शुष्क जलवायु न केवल पराग उत्पादन को कम करती है अपितु इसकी पौष्टिक गुणवत्ता को भी प्रभावित करती है, जिसके परिणाम स्वरूप उस निवास स्थान की मधुमक्खियों को भी प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, वसंत ऋतु में, जब मौसम हल्का गर्म हो जाता है, तो रानी मधुमक्खी अंडे देना शुरू कर देती है और कॉलोनी विकसित हो जाती है और श्रमिक आबादी का आकार भी बढ़ जाता है किन्तु एक शीतलहर से मधुमक्खियां फोर्जिंग के लिए बाहर जाने में असमर्थ हो जाती है। जलवायु परिवर्तन के कारण मधुमक्खियों की प्रतिरक्षा प्रणाली जहां एक ओर उन्हें कमजोर कर रही है वहीं दूसरी ओर से उन्हें रोगजनकों के लिए अतिसंवेदनशील बना रही है जिससे उनका जीवनकाल छोटा हो रहा है। मधुमक्खियां कई रोगजनकों परजीवी और कुछ विशिष्ट शिकारी कीटों के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं। इन परजीवी एवं रोगों के प्रसार में जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में मधुमक्खियों पर गहरा प्रभाव हो सकता है। प्रभावी फसल परागण, फसल और उसके परागणकर्ताओं के जैविक समय पर बहुत हद तक निर्भर है, फसलें जैसे आम, लीची, कॉफ़ी इत्यादि अपेक्षाकृत कम समय में बड़े पैमाने पर खिलती हैं और इस समय परागणकर्ताओं की आवश्यकता होती है, किन्तु समय पर मधुमक्खियों का वहाँ न होना पोलीनेशन प्रक्रिया पर प्रभाव डाल सकता है। जलवायु परिवर्तन इन घटनाओं के समय पर गहरा प्रभाव डालता है। उच्च वायुमंडलीय कार्बन का सीधा प्रभाव मधु और पौधे पर कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा पर प्रभाव डालता है किन्तु इसका अनुमान लगाना मुश्किल है। अप्रत्यक्ष रूप से, उच्च वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड पौधों के ऊतकों में कार्बन और नाइट्रोजन के अनुपात को संशोधित करती है जिससे संभवतः नेक्टर रचना में भी परिवर्तन आता है। इसके अलावा, वातावरण में बढ़ती कार्बन डाइऑक्साइड से C3 और C4 पौधों की संरचना में भी बदलाव संभव है।

निष्कर्ष

मधुमक्खियों पर जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों का हल निकालने से पूर्व हमें इस परिवर्तन का मधुमक्खियों कि गतिविधियों एवं फसलों के साथ उनकी परस्पर क्रिया के बारे में बारीकी के साथ अध्ययन करना होगा। हालांकि जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों के बारे में चर्चा कि गयी है किन्तु इस विषय पर वैज्ञानिक साहित्य की कमी है जो वास्तव में ये बताता हो कि मित्र किट कैसे प्रभावित होते हैं। एपिस मेलिफेरा ने जलवायु परिवर्तन के अनुकूल अपनी आनुवंशिक परिवर्तनशीलता का उपयोग करते हुए अत्यधिक विविध जलवायु में भी विश्व के विभिन्न स्थानो पर अपनी जगह बनाई है, इसके विपरीत, एशियाई प्रजाति सिर्फ एशिया तक ही सीमित है, जो उसके विभिन्न वातावरण में कम अनुकूलनशीलता का संकेत देती है। अभी हमें जलवायु परिवर्तन के तहत फसल परागण में बुनियादी पारिस्थितिकी पर हमारे ज्ञान को और अधिक बढ़ाने के लिए निरंतर अध्ययन की आवश्यकता है।

पश्चिमी हिमालय में बंजर भूमि सुधार हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रजातियां

डॉ. गिरीश चंद्र सिंह नेगी
गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान,
कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

पृथ्वी पर जीवन की विविधता को बनाए रखने एवं मानव और प्रकृति के बीच स्वस्थ पारिस्थितिक संबंध स्थापित करने के लिए बंजर भूमि का वृक्षारोपण द्वारा पारिस्थितिक सुधार आवश्यक है। बंजर भूमि सुधार से प्राप्त होने वाली पारिस्थितिकी सेवायें जैसे – ईंधन की लकड़ी और चारा, खाद्य फल–फूल, जैव विविधता संरक्षण, मृदा सुधार, जलागम संरक्षण, कार्बन संचय, वायु एवं जल शुद्धिकरण इत्यादि पृथ्वी पर मानव के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण हैं। हमें ज्ञात है कि पारिस्थितिक तंत्र के क्षरण का पारिस्थितिकी सेवाओं, जैव विविधता एवं सामुदायिक आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार वैश्विक स्तर पर लगभग 2 अरब हेक्टेयर क्षेत्र भू–क्षरण से प्रभावित है एवं प्रतिवर्ष लगभग 5–7 मिलियन हेक्टेयर भूमि भू–क्षरण के कारण नष्ट हो जाती है। भारत में विभिन्न मापदंडों के अनुसार भूमि क्षरण से प्रभावित भूमि अनुमानतः 53 से 188 मिलियन हेक्टेयर है। वृक्षारोपण बंजर भूमि की पुनर्स्थापना के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। तीव्र वृद्धि व उच्च उत्पादकता वाली देशी अग्रणी वृक्ष प्रजातियों को बंजर भूमि की पुनर्स्थापन के प्रारंभिक चरणों के लिए अनुशंसित किया जाता है। ये वृक्ष प्रजातियां भावी वनस्पतियों की लंबे समय तक जीवित रहने वाली प्रजातियों की बंजर भूमि स्थापना को सुविधाजनक बनाने में मदद करती हैं जिनके अंतिम उत्पाद अधिक मूल्यवान होते हैं। बंजर भूमि में वृक्षारोपण हेतु वरीयता, सदैव स्थानीय प्रजाति के वृक्षों को दी जानी चाहिए क्योंकि वे बाह्य प्रजातियों से अधिक उपयुक्त होती हैं, क्योंकि (1) ये प्रजातियां प्रायः स्थानीय पर्यावरणीय परिस्थितियों में बेहतर अनुकूलित रहते हैं, (2) इनके बीज पुनर्जनन हेतु अधिक उपलब्ध हो सकते हैं एवं (3) स्थानीय निवासियों को आमतौर पर इन्हें उगाने व उपयोग के बारे में जानकारी होती हैं। इसके अलावा, स्वदेशी वृक्ष आनुवंशिक विविधता को संरक्षित करने और स्थानीय जीवों के आवास एवं खाद्य पदार्थ उपलब्धता में भी मदद करते है। एक सफल वृक्षारोपण हेतु पौधों की साधारण आवश्यकताओं में मृदा की उर्वरता में बढ़ोत्तरी, सूखा प्रतिरोध, कीट और रोग प्रतिरोध क्षमता, वृक्षों की शाखाओं की कटाई–छंटाई सहने की क्षमता, बीज उत्पादन एवं पौंधशाला विकास इत्यादि के बारे में जानकारी आवश्यक है। कई क्षेत्रों में मिश्रित प्रजातियों का वृक्षारोपण प्रयोगों से यह स्पष्ट हुआ है कि मिश्रित पद्धति, एकल प्रजाति विशेष पद्धति की तुलना में अधिक उत्पादक एवं बहुउपयोगी हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त, मिश्रित वृक्षारोपण विविध वन उत्पादों का उत्पादन तथा वन्य जीव–संरक्षण में भी योगदान करते हैं।

हिमालयी क्षेत्रों में भू–क्षरण प्रभावित क्षेत्र सम्पूर्ण भारत की तुलना में लगभग दो गुना है। क्योंकि, मुख्य रूप से भारतीय हिमालयी क्षेत्र में भूमि या तो बर्फ से ढ़की है या चट्टानी है जिसमें किसी प्रकार की वनस्पतियां उग नही सकती हैं। हिमालय क्षेत्र में भारत के बंजर भूमि मानचित्र (2011) के अनुसार बंजर भूमि की 23 श्रेणियों में से सर्वाधिक बर्फ से ढका क्षेत्र (37%) और चट्टानी क्षेत्र (28%) बंजर भूमि के अंतर्गत शामिल हैं। इस क्षेत्र में कुल बंजर भूमि का 18% क्षेत्र झाड़ियों, के तहत वर्गीकृत किया गया है। विरल झाड़ी वाले वन (7%) और झूम खेती कुल बंजर भूमि के 5% के अन्तर्गत है। बंजर भूमि एटलस (2011) के अनुसार भारतीय हिमालयी क्षेत्र के 12 राज्यों में से जम्मू–कश्मीर में मुख्यतः बंजर चट्टानों और बर्फ से ढके क्षेत्र के उच्च अनुपात के कारण अपने कुल भौगोलिक क्षेत्र का अधिकतम भूमि तुलनात्मक रूप से सर्वाधिक (74%) बंजर है। अन्य राज्यों में बंजर भूमि के अंतर्गत कुल भौगोलिक क्षेत्र का क्रमशः सिक्किम (46%:), हिमांचल प्रदेश (40%), नागालैंड (32%), मणिपुर (25%), उत्तराखंड (24%) और मिज़ोरम (23%) क्षेत्र शामिल हैं।

हिमालयी क्षेत्र के बंजर भूमि सुधार में ढालू भूमि की अस्थिरता, मिट्टी की अल्प गहराई, मिट्टी की शुष्कता एवं निम्न उर्वरता आदि चुनौतियाँ हैं। साथ ही अत्यधिक चराई, वनों की कटाई तथा उथले मिट्टी के आवरण तथा अतिवृष्टि से प्राकृतिक अपरदन के कारण भी भूमि अवनतिकरण की प्रक्रिया में हैं। ऐसी भूमि की उत्पादन क्षमता कम होती है जिसके पुनर्वास के लिए निम्न उपायों

का सामंजस्य होना चाहिएः (i) जैविक हस्तक्षेपों से सुरक्षा; (ii) मृदा और जल संरक्षण के उपाय; (iii) मृदा उर्वरकता में वृद्धि; (iv) बहुउद्देशीय ईंधन और चारा प्रजातियों का चयन; और (v) पुनर्जनन की विधियां। इसके अतिरिक्त जन भागीदारी से समन्वित प्रबंधन बंजर भूमि विकास के महत्वपूर्ण पहलुओं में एक है।

भारत के पश्चिमी हिमालयी पर्वतीय क्षेत्र में (उत्तराखण्ड), सीमान्त कृषि, स्थानीय निवासियों की आजीविका का मुख्य आधार है। वनों पर आधारित इस कृषि हेतु पशुओं के लिए चारा तथा बिछावन, ईंधन, कृषि उपकरणों एवं सूक्ष्म निर्माण कार्यों के लिए लकड़ी की आवश्यकता होती है। यद्यपि इस क्षेत्र के 63% भौगोलिक क्षेत्र को वन भूमि के रूप में वर्गीकृत किया गया है तथापि केवल 40 प्रतिशत क्षेत्र ही वनाच्छादित है जिसमें से केवल 16.6% क्षेत्र ही घनें वनों से आच्छादित है। मानव बस्तियों और पशुधन चराई के दबाव से वनों एवं वनस्पतियों के पुनर्जनन की रफ्तार अत्यन्त धीमी है जिसके फलस्वरूप मानव बस्तियों के चारों ओर बंजर भूमि बढ़ रही है। औसतन हिमालयी राज्यों में प्रत्येक हेक्टेयर खेती योग्य भूमि पर लगभग एक हेक्टेयर बंजर भूमि मौजूद है। इस प्रकार, वनों के विभिन्न पारिस्थितिक लाभों को बढ़ाने के लिए बंजर भूमि और निम्न गुणवत्ता वाले वनों को पुनर्जीवित करना आवश्यक है।

इस क्षेत्र में कई बहुउद्देश्यीय वृक्ष प्रजातियां प्राकृतिक रूप से जंगलों और कृषि योग्य भूमि में उगते हुए पायी जाती है। उनमें से कुछ वृक्ष प्रजातियां छोटी ऊंचाई एवं विरल छत्रक धारण करती है, जो कृषि फसलों के साथ–साथ उगाई जा सकती है। कुछ वृक्षों में पतझड़, रबी फसलों के अंकुरण और वृद्धि के साथ–साथ होती हैं। बसन्त व ग्रीष्म ऋतु के दौरान जब वृक्षों में पत्ती, फूल और फल आना शुरू हो जाता है, तब उनमें पोषण और मृदा से नमी की तीव्र आवश्यकता होती है, जिससे वे वर्षा ऋतु के खरीफ फसलों की पैदावार को कम प्रभावित करती है। इन वृक्षों में से कुछ उच्च कटाई–छटाई को सहन करते हैं तथा उनमें गहरी जड़ प्रणाली होती है अतः ये वृक्ष पानी और पोषक तत्वों के लिए खाद्य फसलों के साथ बहुत कम प्रतिस्पर्धा करते है। इन प्रजातियों को गोविन्द बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा उत्तराखण्ड के पौड़ी, अल्मोड़ा, चम्पावत, नैनीताल इत्यादि के 6 विभिन्न पर्वतीय क्षेत्रों में 1000–1500 मी. ऊँचाई की बंजर भूमि में रोपण किया गया। इन बंजर क्षेत्रों की पारिस्थितिकी भिन्न–भिन्न प्रकार की थी जिसमें स्थानीय निवासियों की मद्द से बहुद्देशीय वृक्ष प्रजातियों का रोपण किया गया (तालिका 1)। उपरोक्त बंजर भूमि रोपित स्थलों में मृदा क्षरण एवं वनस्पतियों के आवरण अवक्रमण की विभिन्न अवस्थाओं में मौजूद थे। मानव जनित कारकों में पशुओं द्वारा चराई, आग एवं वनस्पतियों के ईंधन एवं चारा कटान के कारण भी उक्त वृक्षारोपण स्थल काफी प्रभावित थे। इन क्षेत्रों में रोपित वृक्षों की वृद्धि और उत्तरजीविता पर चार वर्षों के लिए एकत्र आंकड़ों को संकलित और संश्लेषित किया गया ताकि बंजर भूमि की पुनर्स्थापना के लिए उपयुक्त बहुद्देशीय वृक्ष प्रजातियों को सुझाया जा सके।

तालिका 1. पश्चिमी हिमालय में बंजर भूमि में वृक्षारोपण हेतु उपयुक्त कृषि–वानिकी वृक्ष एवं उनके बहुउद्देशीय उपयोग।

क्रम संख्या	प्रजाति	मुख्य उपयोग	साधारण उपयोग	कच्चा प्रोटीन (%)	प्रमुख उपयोग का मौसम
अ	गैर नाइट्रोजन स्थिरीकरण वाले वृक्ष				
1.	बौहिनिया वेरिगाटा (कचनार)	FD, FR	AG, F	18.1	शरद
2.	सेल्टिस ऑस्ट्रेलिया (खडिक)	FD, FR	AG	8.2	ग्रीष्म
3.	ग्रेविया ऑप्टिवा (भीमल)	FD, FR	F	26.1	शरद
4.	मेलिया अजेडरक (बकैन)	MT, FR	FD	18.4	वर्षा
5.	प्रूनस सेरासोइड्स (पयां)	SC, S	FR, FD	–	वर्षभर
6.	क्वेरकस ल्यूकोट्रिकोफोरा (बांज)	FD,FR,SC	AG	–	वर्षभर

7.	मोरस अल्बा (शहतूत)	FD, FT	FR	—	ग्रीष्म
ब	गैर–नाइट्रोजन स्थिरीकरण वाले वृक्ष				
1.	एल्बिजिया लेबेक (सिरिस)	FR	FD	15.0	ग्रीष्म
2.	अलनस नेप्लेन्सिस (उतीस)	SC	FR, FD	12.6	वर्षभर
3.	डालबर्जिया सिसो (शीशम)	T	FD	9.1	ग्रीष्म
4.	ओजीनिया डेलबर्जियोइड्स (सांदण)	FD, AG	M	18.2	ग्रीष्म

FD = चारा, FR = ईंधन लकड़ी, SC = मृदा एवं जल संरक्षण, S = पवित्र, T = ईमारती लकड़ी, AG = कृषि योग" उपकरण, F = रेशा, M = औषधी, FT = फल

इन आंकड़ो से स्पष्ट होता है कि उतीस (अलनस नेपलेनसिस) (नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता के साथ भूस्खलन से क्षरित ढलानों का एक प्रारंभिक कोलोनाईजर) ऊंचाई वृद्धि (241 सेमी) और उत्तरजीविता (74%) दोनो की दृष्टि से प्रमुख सफल प्रजाति रही जो कि इन सभी बंजर भूमि में रोपण हेतु उपयुक्त पाई गई। इसी प्रकार सिरिस की दोनों प्रजातियां (अल्बीजिया लेबेक व डालबर्गिया सिसो) प्रजातियों ने भी उच्च उत्तरजीविता और ऊंचाई वृद्धि दर्ज की। यह तीनों प्रजातियां वायुमंडल की नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड को मिट्टी में अपनी सूक्ष्म जड़ों की गाठों में उपस्थित बैक्टीरिया द्वारा स्थिरीकरण करती है। उतीस की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण (27–117 कि.ग्रा./हेक्टेयर) तक आकलन किया गया है एवं यह प्रजाति भू–स्खलन को स्थिर करने में मद्द करती है। अन्य प्रजातियों में शहतूत (मॉरस मोरस अल्बा), बांज (क्वेरकस ल्यूकोट्रिकोफोरा), फल्यांट (क्वेरकस ग्लॉका) और बकैन (मेलिया अजेडारक) की ऊँचाई में वृद्धि 82–125 सेमी तथा उत्तरजीविता 56–78% तक दर्ज की गई। बाकी प्रजातियों की ऊंचाई में वृद्धि 50 सेमी से कम रही, हालांकि उनकी उत्तरजीविता अन्य प्रजातियों के ही बराबर थी। क्षेत्र विशिष्ट जलवायु और विषम मृदा परिस्थितियों में इन पौधों के प्रदर्शन के आधार पर यह बताया जा सकता है कि उतीस, सिरिस, शहतूत, बांज वृक्ष प्रजातियों को पश्चिमी हिमालय में बंजर भूमि पुनर्स्थापना के लिए बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण हेतु लोकप्रिय किया जा सकता है। यह पांच प्रजातियों चारा, ईंधन और अन्य बहु–उत्पादों का उत्पादन करते हैं शहतूत की पत्तियां रेशम कीड़ों के लिए भोजन प्रदान करती है और इनका खाद्य फलों के रूप में भी उपयोग किया जाता है। बांज को मिट्टी और जल संरक्षण एवं जैव विविधता आवास के लिए सबसे अच्छा माना जाता है।

पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र में अनउपजाऊ बंजर भूमि में कई शोधकर्ताओं ने बहुद्देशीय वृक्षों के वृक्षारोपण की आवश्यकता पर जोर दिया है। उदाहणार्थ नैनीताल जिले के गौला जलागम में 1400–1500 मीटर पर स्थित पांच गांवों के सामुदायिक बंजर भूमि में 18 बहुद्देशीय वृक्ष प्रजातियों के रोपण के दो साल बाद 47% औसत उत्तरजीविता दर्ज की गयी। उतीस द्वारा लम्बाई में वृद्धि सर्वाधिक (234 सेमी) एवं मणिपुरी बांज द्वारा न्यूनतम (23 सेमी) ऊंचाई दर्ज की गई। इसी प्रकार गढ़वाल हिमालय में 1400 मीटर की ऊंचाई पर वृक्षारोपण के तीन साल बाद उतीस की लम्बाई सबसे ज्यादा (262 सेमी) दर्ज की गई। हालांकि अधिकतम उत्तरजीविता भीमल के लिए (77%) दर्ज की गई लेकिन इसकी वृद्धि केवल 64 सेमी दर्ज की गई। भीमल गर्मियों के दौरान गुणवत्ता वाले चारे (प्रोटीन–26%) व ईंधन की लकड़ी, रस्सी बनाने के लिए रेसा प्रदान करता हैं। यह प्रजाति भारी मात्रा में शाखाओं की कटाई–छटाई सहन करती है। इन बहुद्देशीय प्रजातियों की ऊंचाई वृद्धि और उत्तरजीविता के अलावा ग्रामीण इनसे कई अन्य उपयोगों से भी जुडे हैं। उदाहरण के लिए, सिरिस एवं बकैन की इमारती लकड़ी अधिक मूल्यवान है। कचनार के फूलों की कलियों का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है, सांदण की लकड़ी कृषि औजार (हल आदि) के लिए सबसे उत्तम है, और पायॉ एक पवित्र प्रजाति का वृक्ष है जिसका इस्तेमाल धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है। ये सभी प्रजातियां यदि बंजर भूमि में मिश्रित वन के तौर पर रोपित की जाय तो साल

भर ताजा चारा प्रदान कर सकती हैं। ये सभी स्थानीय वृक्ष प्रजातियां होने के कारण इनके बीजों को एकत्र करके पौधशाला विकास एवं बंजर भूमि में रोपण हेतु पौधों की उपलब्धता स्थानीय स्तर पर महिलाऐं आसानी से कर सकती है।

अतः उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र के कई इलाकों में बड़े पैमाने पर बंजर भूमि में यदि इन स्वदेशी वृक्ष प्रजातियों का रोपण किया जाए तो यह बंजर भूमि उद्धार और पांच 'एफ' (ईंधन, चारा, भोजन, रेशा, उर्वरक) प्रदान करने की क्षमता रखते हैं। हालांकि, बंजर भूमि उद्धार कार्यक्रम की सफलता के लिए, स्थानीय पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणीय मुद्दों की समझ और स्थानीय परंपराओं एवं संसाधन प्रबंधन प्रथाओं के अनुरूप क्रियान्वयन आवश्यक है।

कैर के प्रसंस्करण, संरक्षण और पैकेजिंग के नवीनतम तरीके एवं उनका पोषक तत्वों पर प्रभाव

माला राठौड़
वन अनुसंधान संस्थान, न्यू फॉरेस्ट, देहारादून

प्राचीन काल से शुष्क क्षेत्रों में कैर (Capparis decidua) के फल सामाजिक अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाते रहे है। यह जंगल के फल सदियों से सब्जी एवं अचार के रूप में इस्तेमाल किए जा रहे हैं। कैर की कीमत उनके आकार के अनुरूप निर्धारित होती है; छोटे आकार के फल महंगे और बड़े फल सस्ते होते हैं। सूखे फलों की कीमत 500 रूपये से 1000 रुपये तक होती है। कैर एक झाड़ी है जिस में एक साल में औसतन दो से तीन बार फल लगते हैं। जंगलों एवं खेत से एकत्रित कैर के फल मिश्रित आकार की श्रेणी के होते हैं। कैर की काँटेदार झाड़ियों से फल एकत्रित करके उन्हे हाथों द्वारा अलग किया जाता है। इस कठिन प्रक्रिया में अधिक समय लगता है। कैर फल स्वाद में कड़वे होते हैं। इसलिए इस फल को अचार बनाने या उपयोग करने से पहले पारंपरिक तरीके से नमकीन पानी में भिगो कर संसाधित किया जाता है। वर्ष के अन्य समय में उपयोग के लिए फलों को सुखाकर भण्डारित किया जाता है। सुखाने से पहले सामान्यतः इन्हें उबाला जाता है और फिर धूप में सुखा लिया जाता है। फिर इनको किसी मिट्टी या धातु के पात्र में सुविधानुसार भविष्य में इस्तेमाल के लिए भण्डारित कर लिया जाता है।

आफरी (पूरा नाम लिखें) में डीएसटी, नई दिल्ली, से वित्तीय सहायता प्राप्त एक प्रोजेक्ट के अंतर्गत कैर फलों के प्रसंस्करण के विभिन्न पहलुओं और इनका उसके पोषक तत्वों पर प्रभाव के ऊपर शोध किया गया। पहले इनको व्यास के आधार पर ग्रेड किया गया। बाज़ार से अलग अलग नाप के छिद्रों वाली छलनी बनवाकर उनसे फलों को भिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। ये श्रेणियाँ निम्न प्रकार से है : श्रेणी 3, 6–8 मिमी, श्रेणी 4, 8–10 मिमी, श्रेणी 5, 10–12 मिमी, श्रेणी 6, 12 मिमी।

इन छलनियों से कैर का वर्गीकरण आसानी एवं जल्दी किया जा सकता है। श्रेणी 1 एवं 2 में मिट्टी, कंकरीट, सूखे फूल एवं अधिक छोटे कैर होते हैं जिनकी महत्ता ना के बराबर होती है। अतः हमारे द्वारा इनका संश्लेषण नहीं किया गया है। कैर फलों में मौसम और आकार के साथ पोषक तत्वों में परिवर्तन पाया गया है। अप्रैल सीज़न के फल प्रायः कम कड़वे होते हैं। इन में सबसे अधिक शर्करा और वसीय तेल की मात्रा पाई गई है। श्रेणी 4 (6–8 मिमी) फल को पोषण की स्थिति के दृष्टिकोण से सर्वश्रेष्ठ पाया गया। कड़वाहट कम करने की सर्वोत्तम प्रसंस्करण विधि को मानकीकृत करने के लिए ताजा कैर फलों को विभिन्न प्रकार के घोलों में रखा गया और उनकी शर्करा और प्रोटीन का अध्ययन किया गया। यह देखा गया कि सभी घोलों में फलों को भिगोने के 10 वें दिन तक शर्करा बढ़ी और फिर धीरे–धीरे इसमें गिरावट आई। जबकि प्रोटीन में भिगोने के पहले दिन से ही गिरावट आने लगी। छाछ में भीगे कैर में शर्करा और प्रोटीन दोनों उच्चतम पाये गए। परिणामों से पता चला कि केवल पानी और नमक में भिगोने की तुलना में, छाछ में भिगोने से कैर की पोषण गुणवत्ता बनी रहती है। इसके अलावा भिगोने की अवधि केवल 8–10 दिनों के बीच होनी चाहिए।

फलों को परंपरागत तरीके से सुखाने के परिणामस्वरूप धूल और गंदगी से यह दूषित हो जाते है। इस विधि में समय भी ज्यादा लगता है। उबले हुए कैर को सुखाने के लिए दो प्रकार के सोलर ड्रायर (CAZRI द्वारा डिज़ाइन) का उपयोग किया गया : ईंक्लाइंड (inclined) और प्रीहीटेड सोलर ड्रायर। सोलर ड्रायर्स में सुखाना प्रभावी था क्योंकि यह तीव्र और आसान तरीका था। इसने कैर की पोषण गुणवत्ता को भी बनाए रखा। यह भी पाया गया कि प्रीहीटेड सोलर ड्रायर में सूखे फलों में ईंक्लाइंड की तुलना में शर्करा और प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। इन फलों के भंडारण के लिए सर्वोत्तम कंटेनर का निर्धारित करने के लिए ताकि उनकी पोषण गुणवत्ता भी बनी रहे, विभिन्न कंटेनरों/थैलियों में संग्रहीत फलों का अध्ययन किया गया। रासायनिक विश्लेषण के परिणामों से पता चला कि स्टील कंटेनर में रखे गए फल दो साल के बाद सबसे अच्छी स्थिति में और पोषण से बेहतर रहे, इसके बाद मिट्टी के बर्तन, प्लास्टिक और कांच के कंटेनर इस्तेमाल किए जा सकते हैं। क्लॉथ बैग लंबे समय के भंडारण के लिए जूट बैग की तुलना में बेहतर थे ।

कैर फलों से स्वादिष्ट सब्जी (पंचकुटा या त्रिकुटा) की अधिक मांग और बढ़ती रुचि के कारण कैर फलों को दूर दराज के स्थानों पर पहुंचाना पड़ता है। जिसके लिए उपयुक्त विधि पर कार्य किया गया। यह पाया गया की पिलो पैकेजिंग या वैक्यूम पैकेजिंग द्वारा सूखे कैर फलों को लंबे समय तक संरक्षित और सुरक्षित रख आसानी से परिवहन के लिए पैक किया जा सकता है। नाइट्रोजन में फ्लश किए गए नमूनों की तुलना में वैक्यूम पैक नमूनों में उच्च शर्करा और प्रोटीन पाई गई है। इसके अलावा किसी भी नमूने में कोई भी संक्रमण नहीं देखा गया था और वह दो साल से अधिक समय के बाद भी अच्छी स्थिति में थे। हरे फलों को नमक में और सिरका में डाल कर संरक्षित किया जा सकता है। विश्लेषण से पता चला कि सिरका में संग्रहित फलों ने अपने पोषण मूल्य को बनाए रखा। इसलिए यह विधि हरे फलों के संरक्षण के लिए सर्वोत्तम है।

इस तरह से कैर फलों का संग्रह करने का सही समय और मौसम की जानकारी एवं उच्च प्रसंस्करण विधि अपनाकर दोनों किसान और व्यापारी उच्च गुणवत्ता वाले इन शुष्क क्षेत्र के महत्वपूर्ण जंगली फलों का सतत दोहन करते हुये बाज़ार से उचित राजस्व प्राप्त कर सकेंगे।

कोविड–19 लॉकडाउन की स्थिति में पर्वतीय क्षेत्र में वायु प्रदूषण का स्तरः एक आकलन

जगदीश चन्द्र कुनियाल,
शीतल चौधरी एवं प्रशान्त कुमार चौहान
गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान,
कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

वातावरणीय वायु हमारे पर्यावरण का अभिन्न घटकों में से एक हैं। पृथ्वी पर हमारे जीवन को संभव बनाने के लिए वायु की उपस्थिति अति आवश्यक हैं। मानव आबादी की बढ़ती गतिविधियों के कारण इसकी गुणवत्ता ख़राब होती जा रही हैं। जिस कारण हवा में हमारा सांस लेना कठिन होता जा रहा है तथा जिससे जीवन भी प्रभावित हो रहा हैं। वायु प्रदूषण, मानवजनित गतिविधियों द्वारा विभिन्न प्रकार के प्रदूषक पदार्थों को ताज़ी हवा में छोड़ती हैं। आमतौर पर वायु प्रदूषण को बड़े शहरी पर्यावरण की ही प्रमुख समस्या माना जाता था लेकिन आज हिमालय भी इस समस्या से अछूता नहीं हैं। प्राकृतिक एवं मानवनिर्मित दोनों ही प्रक्रियाओं के लिए हिमालय आश्चर्यजनक रूप से संवेदनशील हैं। पारिस्थितिक एवं स्थलाकृतिक रूप से हिमालय की स्थिति विकट एवं अन्य पर्वत श्रृंखलाओं से भिन्न रही हैं। लेकिन फिर भी यह पारिस्थितिक रूप से संतुलित रहा हैं। यह मध्यम हस्तक्षेप जैसे क्षेत्र में मानव अन्वेषण एवं इससे संबंधित गतिविधियों के प्रभावों का सामना करने में समर्थ था लेकिन आज मानव हस्तक्षेप ने ये सभी सीमाएँ पार कर ली हैं।

हाल ही के वर्षों में विभिन्न पर्यटन प्रभावित क्षेत्रों में मानव हस्तक्षेप के कारण पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलित हुआ हैं। जिसके फलस्वरूप वातावरण के विभिन्न घटकों जैसे हवा, पानी, मिट्टी, भूमि, जंगल आदि पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा हैं। इनमें से हवा की गुणवत्ता को प्रभावित करने का मुख्य कारण पर्यटन हैं। वायुमंडल में अन्य प्रदूषकों की उपस्थिति और आपस में उनकी अभिक्रियाओं के कारण ही वायु प्रदूषकों का मात्रात्मक निर्धारण काफी महत्वपूर्ण हो गया हैं। राष्ट्रीय परिवेषी वायु गुणवत्ता मानक (NAAQS) ने वायु प्रदूषकों की सांद्रता की सीमा को निर्धारित किया हैं। प्रस्तुत अध्ययन कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा स्थित गोविन्द बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान (1225 मी. ऊँचाई) पर 01 जनवरी से 20 मार्च 2020 कोविड लॉकडाउन से पहले तथा 21 मार्च से 30 जून 2020 कोविड लॉकडाउन के दौरान वायु गुणवत्ता का आकलन किया गया। कोसी–कटारमल के आस पास के वनों में चीड़ की पेड़ो, मानवजनित कारणों से वनों में आग लगने का मुख्य कारण रहा है।

कणिका तत्व – पार्टिकुलेट मेटर (PM)

लॉकडाउन के दौरान वायुमंडल में विभिन्न मानवजनित गतिविधियों की कमी के कारण कणों के प्रदूषकों की सघनता में आई कमी को दिखाया गया है। जीवित जीवों के लिए सबसे बड़ी समस्या एक माइक्रोन के बराबर या उससे छोटे कणों से हैं क्योंकि ये फेफड़ों के साथ–साथ रक्त में भी घुल जाते हैं। अधिकतर ईधन के दहन स्रोत जैसे ऑटोमोबाइल, ट्रक और अन्य वाहन निकास के साथ–साथ जलते हुए बायोमास से पीएम 2.5 (PM2.5) से कम या उसके बराबर के कण उत्पन्न होते हैं। अल्मोड़ा में, लॉकडाउन से पूर्व (01 जनवरी–मार्च 20, 2020), टी. एस.पी. (TSP) की औसत अधिकतम सांद्रता 94-5±24 μg m-3, पीएम10 (PM10) 60-1±15 μg m-3] तथा पीएम 2-5 41-0±14 μg m–3 थी। जबकि लॉकडाउन (21 मार्च – 30 जून) के दौरान, टी.एस.पी. की औसत अधिकतम सांद्रता 63-2±24 μg m–3, पीएम 10 29-7±14 μg m–3, पीएम 2.5 17-9± 17-9 μg m–3 तक पहुँच गयी थी।

ब्लैक कार्बन (BC)

वैश्विक जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करने में दूसरा बड़ा योगदान ब्लैक कार्बन का है। ब्लैक कार्बन के कण सूर्य के प्रकाश को पूर्ण रूप से अवशोषित कर लेते हैं जिससे प्रकाश का परावर्तन नहीं हो पाता है परिणामस्वरूप ये कण काले दिखायी देते हैं। पार्टिकुलेट मैटर या पीएम जो कि एक वायु प्रदूषक है, इसमे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ब्लैक कार्बन उत्पादन मानवजनित गतिविधियों जैसे डीजल इंजन, स्टोव, लकड़ी और जंगल जलना आदि तथा प्राकृतिक रूप जैसे जीवाश्म ईंधन और बायोमास के अधूरे दहन के कारण होता हैं। कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) का एक लंबा

जीवनकाल है एवं इसके उत्सर्जन को स्थिर करने में दशकों लगते हैं। इन सभी गैसों का जलवायु पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है अतः इसके उत्सर्जन को कम करने की आवश्यकता हैं। ब्लैक कार्बन वायुमंडल में केवल कुछ सप्ताह ही अस्तित्व में रह पाता हैं। अतः इसके उत्सर्जन में कटौती करके तापमान में वृद्धि की दर को कम कर सकते हैं। ब्लैक कार्बन के ताज़ी हवा के संपर्क में नही आने से सार्वजनिक स्वास्थ्य लाभ होता है। कोसी (अल्मोड़ा) में लॉकडाउन से पहले फरवरी माह में ब्लैक कार्बन की औसत अधिकतम सांद्रता 1550±215 नेनोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर (μg m−3) थी जबकि लॉकडाउन के दौरान यह मई में 613±75 μg m−3 नापी गयी।

कोविड–19 लॉकडाउन में प्रतिशत दर परिवर्तन एवं वायु गुणवत्ता सूचकांक (AQI)

वायु गुणवत्ता सूचकांक में आये परिवर्तन को दो समय की अवधि के अंतर में जानना महत्वपूर्ण हैं। पहला, लॉकडाउन से पूर्व का समय जो कि एक सामान्य जीवन के रूप में लिया गया हैं तथा दूसरा लॉकडाउन के दौरान की अवधि, जिसमें मानव गतिविधियों पर निर्णायक रूप से रोक लगी। कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, में टीएसपी में सबसे अधिक परिवर्तन दर 51% हुआ, इसके बाद पीएम 2.5 में 41% और पी एम 10 मे 34% की कमी देखी गयी। वायु गुणवत्ता सूचकांक (AQI) के अनुसार कोसी (अल्मोड़ा) में लॉकडाउन से पहले वायु की गुणवता बहुत कम प्रदूषित थी तथा लॉकडाउन के दौरान वायु साफ सुथरी पाई गयी। परिवहन गतिविधियां, मानव आबादी तथा जंगलों की आग ब्लैक कार्बन, टीएसपी, पी एम 10 तथा पी एम 2.5 जैसे प्रदूषण के अस्तित्व के लिए उतरदायी हैं।

कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा में जंगल में भीषण आग का दृश्य (दाईं फ़ोटो), वनों में आग के बाद का दृश्य (केंद्र फ़ोटो), तथा वायु गुणवता आकलन सेट–अप (बाईं फ़ोटो) ।

निष्कर्ष

विश्व के सबसे जटिल और विविध वन क्षेत्रों में हिमालय का पारिस्थितिकी तंत्र सर्वोपरि है। पृथ्वी पर जीवन–यापन करने के लिए स्वच्छ वातावरण का होना अति आवश्यक है। वायुमण्डल एक जटिल गतिशील प्राकृतिक गैसीय प्रणाली हैं। परिणामस्वरूप लॉकडाउन अवधि में, क्षेत्र में इन पार्टिकुलेट और गैसीय प्रदूषकों की सांद्रता राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता, 2009 के मानकों के अनुसार अनुमेय सीमा के अंतर्गत है और मानव स्वास्थ्य के लिए संतोषजनक पाये गये।

आभार

लेखक गोविन्द बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान (NIHE) के निदेशक का संस्थान में सुविधाएं प्रदान करने के लिए हृदय से आभारी हैं। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद के माध्यम से इसरो–जी.बी.पी. एटी–सी.टी.एम (ISRO&GBP AT&CTM) के तहत वर्तमान अध्ययन को निष्पादित करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की गयी जिसका सभी लेखक धन्यवाद अदा करते हैं।

जैविक कीट नियंत्रण में परभक्षी कीट क्राईसोपरला कार्निया, (लेसविंग) की भूमिका

सुभाष चंद्र, नेहा शर्मा एवं भूमिका कंवर
हिमालयन वन अनुसंधान संस्थान
शिमला, हिमाचल प्रदेश

पर्यावरण को शुद्ध बनाए रखने तथा मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति ने हमें वनों के रुप में एक महत्वपूर्ण संसाधन प्रदान किया है। इन वनों को विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तु समय–समय पर हानि पहुंचाते रहते हैं। जिनमें कीट वर्ग सबसे ज्यादा हानि पहुंचाता है। इनकी रोकथाम के लिए प्रायः रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है। रासायनिक कीटनाशक, लक्ष्य कीट की रोकथाम के साथ साथ, आस पास के पर्यावरण लाभकारी जीवों को भी नुकसान पहुंचाते हैं, जिसके कारण प्रतिवर्ष लगभग 30% जैव विविधता की हानि होती रहती है। वहीं जैविक नियंत्रण पर्यावरण अनुकूल होने के साथ ही केवल लक्ष्य कीट की ही रोकथाम करता है। जैव विविधता पर इसका कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता अपितु यह पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में भी कारगर है। इसी कारण यदि कीटों के रोकथाम एवं प्रबंधन के लिए रासायनिक कीटनाशकों के स्थान पर जैविक नियंत्रण की विधि को अपनाया जाए तो रासायनिक कीटनाशकों के प्रकोप तथा दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है।

प्राकृतिक परभक्षियों (Predator) का शत्रु कीट नियंत्रण में प्रयोग किया जाना 'जैविक नियंत्रण' कहलाता है। वर्तमान में जैव नियंत्रण का कृषि के क्षेत्र में विश्व विख्यात उदाहरण है–क्राइसोपरला कार्निया। क्राइसोपरला एक हरे रंग का पारदर्शी पंखो वाला कीट है जो न्यूरोप्टेरा वर्ग के क्रिसोपिडी (Chrysopidae) परिवार का सदस्य है। न्यूरोप्टेरा (Neuroptera) वर्ग में लगभग 85 जीनस और 1300–2000 प्रजातियां पायी जाती हैं। इसके हरे रंग व पारदर्शी पंखों के कारण इसका प्रचलित नाम ग्रीन लेसविंग भी है।

ग्रीन लेसविंग हमारे लिए बहुत लाभकारी कीट है क्योंकि यह प्राकृतिक जैविक नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। यह प्रकृति में मौजूद हानिकारक कीटों का परभक्षी है। अधिकतर इसे गर्मी व वसंत ऋतु में जंगलों एवं फसलों के आसपास देखा जाता है। वर्तमान में रासायनिक कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से फसलों, वनों, जीव–जंतुओं व पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभाव को देखते हुए दुनिया के अधिकतर देश जैविक नियंत्रण का रुख अपनाने के साथ–साथ इसका व्यवसायीकरण भी कर रहे हैं। ग्रीन लेसविंग के जैविक नियंत्रण में अच्छे परिणामों व रख–रखाव में सरलता के कारण कृषि व वानिकी में दिन–प्रतिदिन इसके उपयोग का विस्तार हो रहा है।

इसकी चार अवस्थाएँ होती हैं– अंडा, इल्ली, कुकून तथा वयस्क

अंडाः– इसका अंडा हल्के हरे रंग का होता है, मादा अपने अंडे अकेले या छोटे समूहों में देती है। यह अपने अंडे, आधे इंच पतले बाल जैसे डंठल की नोक पर देती हैं। यह इल्ली से साथी अंडे के कैनिबेलिज़्म (Cannibalism) को कम करता है।

इल्लीः– इसकी इल्ली भूरे सफेद रंग की होती है। इसकी इल्ली को एफिड लायन भी कहा जाता है क्योंकि यह उनकी परभक्षी कीट है। इल्ली से कुकून अवस्था तक 10–15 दिन लग जाते हैं। यह अपने पूरे इल्ली अवस्था में 250–300 अंडों का भक्षण कर लेती है। यह सभी प्रकार के नरम शरीर वाले कीटों का भक्षण कर लेती है।

कुकूनः– इसका कुकून गोलाकार व सफ़ेद रंग का होता है। कुकून से वयस्क बनने की अवधि 10–12 दिन की होती है।

वयस्कः– इसका वयस्क हरे रंग का होता है, यह कमजोर उड़ान भरने वाला कीट है। यह अधिकतर फूलों का रसपान करता है तथा यह परभक्षी नहीं होता। मादा का जीवनकाल 30–35 दिन का होता है। वहीं नर का जीवनकाल 25–28 दिन का होता है। एक मादा अपने जीवनकाल में 200–250 अंडे देती है। यदि इस परभक्षी कीट का उपयोग वानिकी एवं कृषि क्षेत्र में समय रहते किया जाए तो कीटनाशकों के दुष्प्रभाव व हानिकारक कीटों के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

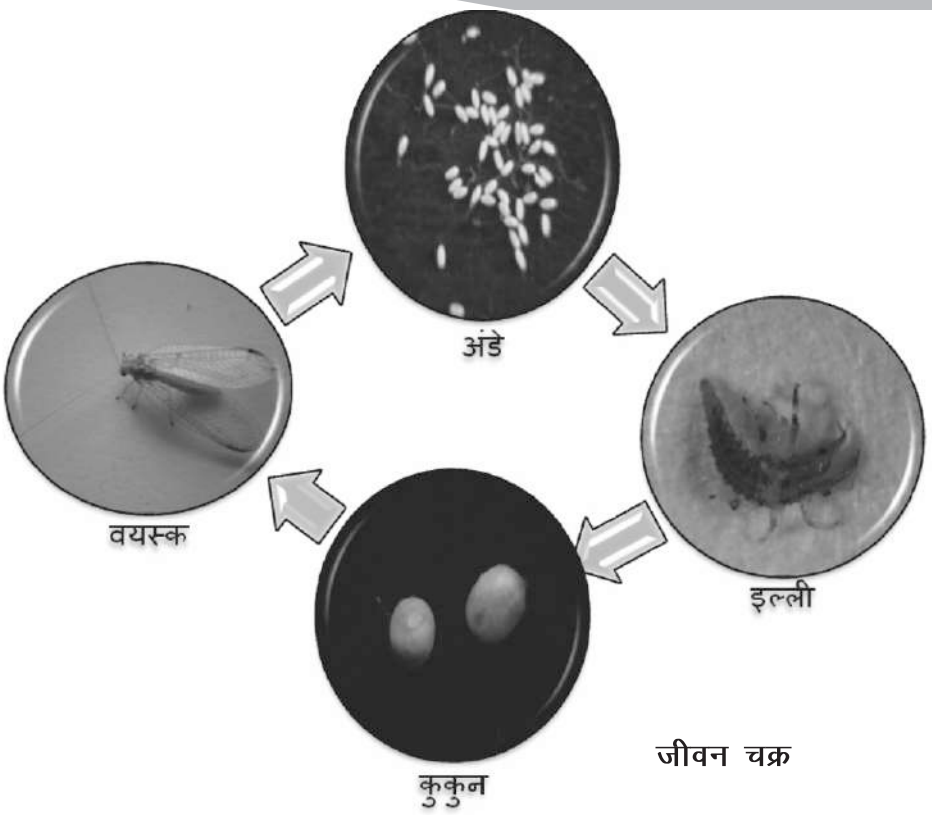

जीवन चक्र

विभिन्न हानिकारक कीटों के नियंत्रण में इसका उपयोगः

कृषि विश्वविद्यालय, फैज़ाबाद में परिवेशी प्रयोगशाला स्थितियों में एफिड (Myzus persicae) के विभिन्न अवस्थाओं पर क्राइसोपरला कार्निया लार्वा की भक्षण करने की क्षमता की जांच की गई, जिसमें क्राइसोपरला लार्वा भक्षण की क्षमता 413.9± 0.07 एफिड प्रति लार्वा पायी गयी। (Muhammad Farhan] et al., 2019)। वर्तमान अध्ययन के परिणामों से यह ज्ञात होता है कि इस परभक्षी कीट में एफिड के जैविक नियंत्रण की काफी संभावनाएं हैं।

क्राइसोपरला, व्हाइटफ्लाय और एफिड का सर्वभक्षी कीट है। शोध के अनुसार यह पाया गया कि कपास फसल के नाशी कीट के मिलने के तुरंत बाद क्राइसोपरला को कपास के खेतों में रिकॉर्ड किया गया। यह पाया गया है कि क्राइसोपरला ने अपनी लार्वा अवस्था में एफिड का अधिक भक्षण किया। क्राइसोपरला के पहले इंस्टार ने व्हाइटफ्लाय (Bemisia tabaci) के 5 इल्लियों जबकि एफिड (Aphis gossypii) के 22 निंफ का भक्षण किया। क्राइसोपरला के तीसरे इन्स्टार ने एफिड के तीसरी अवस्था के 67 एफीडों का भक्षण किया। भक्षण की सक्रियता तीसरे इन्स्टार तक बढ़ती रही (Manjunatha DK et al-, 2018)।

अतः इन परिणामों से यह तथ्य निकलता है कि क्राइसोपरला कार्निया केवल कृषि क्षेत्र में ही नहीं अपितु भविष्य में वानिकी के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस परजीवी का उपयोग हानिकारक कीटों के नियंत्रण करने व कीटनाशकों के उपयोग को कम कर पर्यावरण को शुद्ध बनाए रखने में लाभकारी सिद्ध होगा।

प्रयोगशाला में क्राइसोपरला इल्ली द्वारा विभिन्न हानिकारक कीटों का भक्षण

सारस जैवविविधता केंद्र

स्थानीय समुदाय द्वारा पक्षी संरक्षण में सार्थक प्रयास

डॉ. मनोज कुमार शर्मा
क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, भोपाल
डॉ. संगीता राजगीर एवं मो. खालिक
भोपाल बर्ड्स कंजर्वेशन सोसाइटी, भोपाल

सारस विश्व का सबसे विशाल उड़ने वाला पक्षी है। इस पक्षी को क्रौंच के नाम से भी जानते हैं। पूरे विश्व में भारतवर्ष में इस पक्षी की सबसे अधिक संख्या पाई जाती है। सबसे बड़ा पक्षी होने के अतिरिक्त इस पक्षी की कुछ अन्य विशेषताएं इसे विशेष महत्व देती हैं। उत्तर प्रदेश के इस राजकीय पक्षी को मुख्यतः गंगा के मैदानी भागों और भारत के उत्तरी और उत्तर पूर्वी और इसी प्रकार के समान जलवायु वाले अन्य भागों में देखा जा सकता है। भारत में पाए जाने वाला सारस पक्षी यहां के स्थाई प्रवासी होते हैं और एक ही भौगोलिक क्षेत्र में रहना पसंद करते हैं।

सारस पक्षी का अपना विशिष्ट सांस्कृतिक महत्व भी है। विश्व के प्रथम ग्रंथ रामायण की प्रथम कविता का श्रेय सारस पक्षी को जाता है। रामायण का आरंभ एक प्रणयरत सारस–युगल के वर्णन से होता है। प्रातःकाल की बेला में महर्षि बाल्मीकि इसके द्रष्टा हैं तभी एक आखेटक द्वारा इस जोड़े में से एक की हत्या कर दी जाती है। जोड़े का दूसरा पक्षी इसके वियोग में प्राण दे देता है। ऋषि उस आखेटक को श्राप देते हैं। लाइनस के द्विपद नाम वर्गीकरण में इसे ग्रस एंटीगोन कहते हैं। वर्ग गुइफॉर्मस का यह सदस्य श्वेताभ–स्लेटी रंग के परों से ढका होता है। ऊपरी गर्दन और सिर के हिस्सों पर गहरे लाल रंग की थोड़ी खुरदरी त्वचा होती है। इनका औसत भार 7.3 किलो ग्राम तक होता है। इनकी लंबाई 176 सेमी (5.6–6 फीट) तक हो सकती है। इनके पंखो का फैलाव 250 सेमी (9.85 फीट) तक होता है। इस विशाल शरीर के कारण इसको धरती के सबसे बड़े उड़ने वाले पक्षी की संज्ञा दी गई है।

पूरे विश्व में इसकी कुल आठ प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से चार भारत में पाई जाती हैं जबकि पांचवी साइबेरियन क्रेन भारत में से सन 2002 में ही विलुप्त हो चुकी हैं। भारत में सारस पक्षियों की कुल संख्या लगभग 8000 से 10000 तक है। इनका वितरण भारत के उत्तरी, उत्तर–पूर्वी, उत्तर–पश्चिमी एवं पश्चिमी मैदानो में और नेपाल के कुछ तराई इलाको में है। विशेषतः गंगीय प्रदेशों के मैदानी भाग इनके प्रिय आवासीय क्षेत्र होते हैं। इनके मुख्य निवास स्थान दलदली भूमि, बाढ़ वाले स्थान, तालाब, झील, परती जमीन और मुख्यतः धान के खेत इत्यादि हैं। ये मुख्यतः 2 से 5 तक की संख्या में रहते हैं। अपने घोसले छिछले पानी के आस–पास में जहां हरे–भरे पौधों (मुख्यतः झाड़ियां और घास) की बहुतायत होती है वहीं बनाना पसंद करते हैं। ये मुख्यतः शाकाहारी होते हैं और कंदो, बीजों और अनाज के दानों को ग्रहण करते हैं। कभी–कभी ये कुछ छोटे अकशेरुकी जीवों को भी खाते हैं। नर और मादा युगल एक दूसरे के प्रति पूर्णतः समर्पित होते हैं। एक बार जोड़ा बनाने के बाद ये जीवन भर साथ रहते हैं। मुख्यतः वर्षा ऋतु इनका प्रजनन काल है। इनके प्रणय का आरंभ नृत्य से होता है। नृत्य के आरंभ से पहले ये पक्षी अपनी चोंच को आसमान की ओर कर के विशेष तीव्र ध्वनियां निकालते हैं। ध्वनि के समय नर अपनी चोंच और गर्दन को आसमान की तरफ सीधा रखता है और पंखो को फैलाता है। मादा केवल गर्दन और चोंच को सीधा रखती है और ध्वनि निकालती है।

मादा एक बार में दो से तीन अंडे देती है। इन अंडो को नर और मादा बारी–बारी से सेते हैं। नर सारस मुख्यतः सुरक्षा की भूमिका अदा करता है। लगभग एक महीने के पश्चात उसमें से बच्चे बाहर आते हैं। बच्चों के बाहर आने के बाद माता–पिता 4.5 सप्ताह तक उनका पोषण नन्हे कोमल जड़ों, कीटों, सूंडियों और अनाज के दानो इत्यादि से करते हैं। इतने समय के बाद बच्चे अपने माता–पिता के जैसे अपना आहार स्वयं प्राप्त करना सीख लेते हैं। बच्चे लगभग दो महीनों में अपनी प्रथम उड़ान भरने के योग्य हो जाते हैं। सारस पक्षी का संपूर्ण जीवन काल लगभग 18 वर्षों तक हो सकता है।

वैश्विक स्तर पर इसकी संख्या में हो रही कमी को देखते हुए इसे संकटग्रस्त प्रजाति घोषित किया गया है और इसकी वर्तमान संरक्षण स्थिति को निरूपित किया गया है। यहां यह उल्लेखनीय है कि मलेशिया, फिलीपींस और थाइलैंड में सारस पक्षी की यह जाति पूरी तरह से विलुप्त

हो चुकी है। भारत वर्ष में भी कथित रूप से विकसित स्थानों में से अधिकांश स्थानों पर सारस पक्षी विलुप्तप्राय हो चुके हैं। इसकी घटती संख्या के अनेक कारण हैं जैसे खेती की कम होती भूमि, सिमटते जंगल, कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग और मानवों की बढ़ती आबादी इसके मुख्य कारण हैं। यह देखा गया है कि सारस उन्ही जगहों पर अधिक पाए जाते हैं जहां पर थोड़ा कम विकास हुआ है। शहरीकरण और औद्योगीकरण से दूर के स्थानों पर ये ज्यादा फलते–फूलते हैं।

वर्ष 2008 में एक घायल सारस इन ग्रामों में चर्चा का विषय बना जो इनके संरक्षण की दिशा का पहला कदम था। उस सारस के संरक्षण के बाद भोपाल बर्ड्स संस्था, भोपाल द्वारा इन ग्रामों में सारस संरक्षण जागरूकता कार्यक्रम को व्यापक स्तर पर चलाया गया। इन जागरूकता कार्यक्रमों में ग्राम के बच्चे, युवाओं, वृद्धों एवं महिलाओं ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया एवं सारस व अन्य जैवविविधता के महत्त्व को जाना। इन कार्यक्रमों द्वारा उन्होंने कीटनाशक, अत्यधिक जल एवं मछली के दोहन, जल प्रदुषण के दुष्परिणामों एवं जलीय जंतुओं एवं पक्षियों पर खतरों को जाना व इन्हें कम करने में सहयोग किया। समुदाय के इन सारस मित्रों की बढ़ती रूचि ने वन कटाई व अवैध शिकार की रोकथाम के साथ ही पक्षियों के घोसलों की सुरक्षा भी की जिसके सकारात्मक परिणाम दिखाई देने लगे एवं सारसों की संख्या दो जोड़े से बढ़कर वर्ष 2019 में लगभग 350 तक दिखाई देने लगी तथा समय–समय पर पूर्व रिकॉर्ड से हटकर पक्षी प्रजातियां जैसे ग्रेटर फ्लेमिंगो, ग्रे लेग गीज़, कॉमन क्रेन जैसी प्रजातियां दिखाई देने लगी है। सारस व पक्षियों के प्रति बढ़ती रूचि एवं संरक्षण की प्रबल भावना से कृषकों ने अपनी कृषि भूमि के कुछ हिस्सों में भोपाल बर्ड्स संस्था, भोपाल के सहयोग से जैवविविधता जागरूकता केंद्र स्थापित किया। इन केंद्रों में अवकाश के समय स्थानीय समुदाय बैठकर पक्षियों एवं जैवविविधता संरक्षण की चर्चा करते हैं तथा विद्यार्थियों एवं आमजन के लिए जागरूकता कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते हैं। इन केंद्रों के माध्यम से शहरी निवासी भी भोज वेटलैंड के आस–पास फैली जैवविविधता को समझते हैं तथा इनके संरक्षण में समुदाय का सहयोग भी करते हैं। भोपाल बर्ड्स संस्था, भोपाल द्वारा आयोजित इन जागरूकता कार्यक्रमों में पौधों, पशु पक्षियों, जैविक कृषि एवं विभिन्न पर्यावरण संरक्षण विषयों की जानकारी दी जाती है वहीं शहरी व्यक्तियों को स्थानीय समुदाय के देशज ज्ञान का लाभ मिलता है। इन केंद्रों के माध्यम से संयुक्त रूप से भोज वेटलैंड संरक्षण हेतु कचरा सफाई अभियान, पक्षी जागरूकता कार्यक्रम, वृक्षारोपण, खरपतवार उन्मूलन, कृत्रिम घोसलों द्वारा पक्षी संरक्षण इत्यादि कार्यक्रम चलाये जाते हैं जिसके सार्थक परिणाम दिखाई देने लगे हैं। इन केंद्रों की सार्थकता को देखते हुए भविष्य में और अधिक केंद्रों की स्थापना करने का प्रयास है जिससे पर्यावरण, पारिस्थितिकी, वन्यजीव, पशु–पक्षी इत्यादि का संरक्षण एवं संवर्धन हो सके।

जंगल की फरियाद

सुशील कुमार चौरे
क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, भोपाल

कौन कहता है कि
जंगल बोलते नहीं
जंगल वो बोलते है
जो तुम सुनने के आदी नहीं हो
यकीन न हो तो
जाओ उनकी
सिसकियों के समुद्र में
जो चुपचाप खड़े
तुम्हें कुछ बताने की
चाहत रखते हैं
समझने की कोशिश करो
जंगल की विनय वेदना
हवा में मिले
पेड़ों के करूण स्वर
इन स्वरों में
कहीं तुम्हारा आने वाला
समय नजर आयेगा
जो तुम्हारे आधुनिकता
के नजरिये को
खोखला साबित ना कर दें।
अभी भी वक्त है
जंगल के मित्र बनो
मित्र रूपी जीवन के आधार
की वेदना सुनो
कुल्हाड़ी की चोट से उन्हें भी दर्द होता,
आह निकलती है
शाखा कटने से
हाथ खोने का अहसास होता है
अब तो जंगल की ओर
मित्रता के दो कदम बढ़ाओं
मित्र की फरियाद सुनो
जंगल की फरियाद सुनो

इको–लेबलिंग प्रमाणन –भारत में "ईकोमार्क"

स्माइली
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

कई अध्ययनों से पता चला है कि उपभोक्ताओं को विभिन्न प्रकार के इको–लेबल के बारे में कम या सीमित ज्ञान है। उपभोक्ता शायद ही किसी भी पर्यावरण लेबलिंग योजनाओं और उनके बीच अंतर को बता सकते हैं। यह लेख पर्यावरण लेबल के बारे में एक सामान्य जागरूकता प्रदान करता है, वर्गीकरण से लेकर कार्यान्वयन तक।

आम तौर पर इको–लेबल पर्यावरणीय उत्कृष्टता के एक लेबल का संकेत देता है, जो समग्र मूल्यांकन देता है, अर्थात् कच्चे माल की खरीद से लेकर विनिर्माण तक और एक ही श्रेणी के अन्य पारंपरिक उत्पादों के सापेक्ष उत्पाद की पर्यावरणीय गुणवत्ता के अंतिम निपटान तक। इको–लेबल की भूमिका उपभोक्ताओं और खरीददारों को पर्यावरण के प्रति सचेत खरीद का अभ्यास करने और उन उत्पादों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए मार्गदर्शन करना है जो उत्पाद कम पर्यावरणीय बोझ से जुड़े हैं। इको–लेबलिंग योजना पहले उपभोक्ता का ध्यान आकर्षित करती है और फिर पर्यावरणीय अनुकूल उत्पादों के लिए उनकी आवश्यकताओं को बढ़ाती है। यह उपभोक्ता की इच्छा व उसके खरीद के प्रति व्यवहार को भी प्रभावित करती है। जो उपभोक्ता पहले से ही उत्पादों को खरीद रहें है, वे उत्पादकों को उनके उत्पादों की उपयुक्त सूचना देते है और अपने अनुभवों को बताते है। नतीजतन, उत्पादक उपभोक्ताओं की मांगों और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने उत्पादों में सुधार करने के लिए प्रोत्साहित होते है। यह एक सतत सुधार प्रक्रिया है जिसका अंतिम लक्ष्य टिकाऊ उपभोग और उत्पादन को प्राप्त करना है। किसी भी इको–लेबलिंग योजना की सफलता उत्पादकों और उपभोक्ताओं दोनों के योगदान पर निर्भर करती है। दुनिया भर के 199 देशों के 25 उद्योग क्षेत्रों में लगभग 456 इको–लेबल सम्मिलित हैं। उदाहरण के तौर पर – जर्मनी, ब्लू एंजेल (1978), कनाडा, पर्यावरण विकल्प कार्यक्रम (1988), जापान, इकोमार्क (1989), अमेरिका, ग्रीन सील (1989)

पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल उत्पादों को मान्यता देने के लिए भारत सरकार ने भी एक इको–लेबलिंग योजना– इकोमार्क की (1991) शुरुआत की थी। यह उपभोक्ताओं के लिए टिकाऊ खपत व्यवहार को आगे बढ़ाने के साथ–साथ उद्योगों के लिए पर्यावरण के अनुकूल प्रक्रियाओं या उत्पादन विधियों को अपनाने और लागू करने की दृष्टि से एक अहम कदम है। इकोमार्क योजना के लिए "लोगो"–'एक मिट्टी का बर्तन', यह दर्शाता है कि जिस उत्पाद पर यह "लोगो" होता है वह पर्यावरण को कम से कम नुकसान पहुंचाता है।

इकोमार्क "लोगो"–'एक मिट्टी का बर्तन'

इस योजना के विशिष्ट उद्देश्य इस प्रकार हैं:–

- उत्पादों के प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए उत्पादनकर्ताओं को बढ़ावा देना।
- कंपनियों के उत्पादों के प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए उनके द्वारा की गई पहल को पुरस्कृत करना।
- उपभोक्ताओं के खरीद सम्बन्धी निर्णयों में पर्यावरणीय मानकों को ध्यान में रखने की जानकारी प्रदान करके उन्हें उनके दैनिक जीवन में सचेत बनाने में मदद करना।
- नागरिकों को ऐसे उत्पाद खरीदने के लिए प्रोत्साहित करना जो पर्यावरण अनुकूल हों।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय राष्ट्रीय स्तर पर इस योजना का प्रबंधन करता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इकोमार्क नियमन को

प्रभावी ढंग से लागू किया गया है। किसी उत्पाद श्रेणी को ईकोमार्क प्रदान करने के लिए तीन चरणों की प्रक्रिया निम्नानुसार हैं:–

1. संचालन समिति जो कि पर्यावरण और वन मंत्रालय में स्थापित है, स्कीम के तहत आने वाली उत्पाद श्रेणियों के निर्धारण के लिए तथा स्कीम कार्यप्रणाली के संवर्धन, कार्यान्वयन, भावी विकास व सुधार की नीतियों के निर्माण में योगदान करती है ।
2. तकनीकी समिति, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड में है, जो चुनें जानें वाले विशिष्ट उत्पाद और अपनाये जाने वाले अलग–अलग मापदंड, तथा एक से अधिक मापदंड होने पर उनके बीच यथासंभव पारस्परिक प्राथमिकता को अभिनिर्धारित करती है।
3. भारतीय मानक ब्यूरो (बीआईएस) उत्पादों के मूल्यांकन व प्रमाणन के लिए तथा लेबल की अनुमति देने के लिए विनिर्माताओं के साथ एक संविदा तैयार करता है जो कि एक शुल्क भुगतान के बाद दी जाती है।

उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय द्वारा नामित बीआईएस एक स्वायत्त और निष्पक्ष संगठन है, जो राष्ट्रीय स्तर पर इकोमार्क योजना को लागू करने और आवेदकों से किसी भी प्रश्न के लिए पहला संपर्क स्थान है। वे विशेष रूप से आवेदनों का आकलन करते हैं और उन उत्पादों के लिए इकोमार्क लेबल प्रदान करते हैं जो उनके लिए निर्धारित मानदंडों को पूरा करते हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार हैं कि सत्यापन प्रक्रिया सुसंगत, व विश्वसनीय तरीके से की गई है।

भले ही औद्योगिक विशेषज्ञों, सक्षम निकायों और अन्य हितधारकों सहित अन्य दलों द्वारा ईकोमार्क मापदंड के विकास या संशोधन की शुरुआत की गई हो, किन्तु मंत्रालय, तकनीकी समिति की टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए मापदंड दस्तावेजों के अंतिम मसौदे को तैयार करता है। अन्ततः संचालन समिति द्वारा मानदंडों का समर्थन करने और अनुमोदित किए जाने के बाद मंत्रालय प्रत्येक उत्पाद समूह के लिए इकोमार्क मापदंड अपनाता है।

पैकेजिंग सामग्री / पैकेज वास्तुशिल्पीय पेंट्स तथा पाउडर कोटिंग्स बैटरी

बिजली व इलेक्ट्रॉनिक सामान

खाद्योजक

लकड़ी के विकल्प

प्रसाधन सामग्री

एरोसोल प्रषोदक

प्लास्टिक उत्पाद वस्त्र अग्निशामक चमड़ा

नारियल रेशा व नारियल के रेशे से बने उत्पाद

अब तक भारत सरकार ने इकोमार्क के तहत सत्रह उत्पाद श्रेणियों (1991–2021) को अधिसूचित किया है। जिनमें प्रसाधन साबुन व प्रक्षालक (डिटर्जेंट), कागज, खाद्य मदें, स्नेहक तेल, पैकेजिंग सामग्री/पैकेज, वास्तु शिल्पीय पेंट्स तथा पाउडर कोटिंग्स, बैटरी, बिजली व इलेक्ट्रॉनिकी सामान, खाद्ययोजक, लकड़ी के विकल्प, प्रसाधन सामग्री, एरोसोल प्रणोदक, प्लास्टिक उत्पाद, वस्त्र, अग्निशामक, चमड़ा और नारियल रेशा व नारियल के रेशे से बने उत्पाद शामिल हैं। ईकोमार्क मापदंड विनिर्माताओं को उन उत्पादों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं जो टिकाऊ, मरम्मत करने में आसान और पुनः प्रयोज्य हों।

हालाँकि भारत का ईकोमार्क अन्य देशों के इको–लेबल से कई मायनों में समान है, लेकिन इसकी मुख्य विशेषता यह है कि प्रमाणन के लिए आवेदन करने से पहले उत्पाद को पर्यावरण और गुणवत्ता दोनों मानदंडों को पूरा करना होता है। पर्यावरणीय अनुकूल उत्पादों को खरीदने की दिशा में किसी भी इको–लेबल की प्रभावशीलता एक–स्वपर्यावरण प्रेरणा पर निर्भर करती है, दूसरी बात, उपभोक्ताओं को इको–लेबल के बारे में पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए और अंत में, पर्यावरणीय अनुकूल उत्पादों की उपलब्धता को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। इको लेबल को तभी बढ़ावा दिया जा सकता है और प्रोत्साहित किया जा सकता है, जब लोगों के पास इसके बारे में पर्याप्त ज्ञान हो व "लोगो" को पहचानकर इसकी उपस्थिति को जानते हों। पर्यावरणीय लेबल एक पर्यावरण नीति के नजरिए से तभी उपयोगी होते हैं जब उपभोक्ता उन्हें अपने उत्पाद खरीद सम्बन्धी निर्णय लेने में उपयोग करें। यदि इकोमार्क लेबल वाले सामान उपभोक्ताओं द्वारा किए गए सकारात्मक विकल्पों के माध्यम से बाजार में एक बढ़ी हुई हिस्सेदारी देना शुरू करते हैं, तो यह कदम उद्योगों को मानदंडों को पूरा करने के लिए अपनी प्रक्रिया/उत्पाद लाइन को संशोधित करने और जनता की प्राथमिकताओं को पूरा करने के लिए एक प्रोत्साहन प्रदान करेगा। अब समय आ गया है कि उपभोक्ता विनिर्माताओं को स्वच्छ और पर्यावरण के अनुकूल तकनीकों को अपनाकर उत्पाद बनाने के लिए प्रेरित करें और सुरक्षात्मक दृष्टिकोणों के माध्यम से उपयोग किए गए उत्पादों का सुरक्षित रूप से निपटान करने में योगदान दें।

राष्ट्रीय प्राणी उद्यान की पक्षी विविधता

रमेश कुमार पांडेय (भा.व.से.),
विभव श्रीवास्तव एवं प्रियंका चौधरी
राष्ट्रीय प्राणी उद्यान

राष्ट्रीय प्राणी उद्यान देश की राजधानी के हृदय क्षेत्र में अवस्थित है, और यह राष्ट्र का एकमात्र प्राणी उद्यान है जिसका निर्माण एवं संचालन भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा किया गया है। यह प्राणी उद्यान 1952 में बनना शुरू हुआ और 1959 में बन कर पूर्ण हुआ। खास बात ये है कि इस प्राणी उद्यान की संरचना और इसके आधारभूत ढांचे को बनाने के लिए जर्मनी में प्राणी उद्यानों की संरचना के लिए विख्यात कार्ल हेगेनबेक को बुलाया गया था। कार्ल हेगेनबैक 'एनिमल पार्क' नामक प्राणी उद्यान चलाते थे और उस प्राणी उद्यान की विशेषता ये होती थी कि वो एक मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता था जिसमें ऐसा प्रतीत होता था कि जानवर सींखचों के बीच ना होकर खुले वातावरण में रहे और ऐसी ही संरचना को कार्ल हेगेनबेक ने दिल्ली प्राणी उद्यान में प्रतिरूपित किया। दिल्ली प्राणी उद्यान के जानवरों के बाड़े बड़े खुले हुए और मोट वाले हैं जो उचित विसर्जन (Immersion Approach) का बहुत ही अच्छा उदाहरण है। साथ ही यहाँ पर जल मार्ग, जल से भरे हुए तालाब की भी संरचना की गयी और यही कारण रहा कि कालांतर में इन तालाबों और जल मार्गों में उपलब्ध जल के कारण विभिन्न प्रकार के पक्षी खासकर प्रवासी पक्षी यहाँ आने लगे हैं।

आवासीय विविधताः

प्राणी उद्यान का कुल क्षेत्रफल लगभग 188.62 एकड़ है और इसकी संरचना कुछ इस तरह से की गयी है की यह विभिन्न स्वछन्द विचरण करने वाले पक्षियों एवं वन्य जीवों को प्राकृतिक आवास प्रदान करता है। प्राणी उद्यान की वनस्पति विविधता काफी समृद्ध है और यहाँ पर कुल 405 विभिन्न प्रजातियों के पौधे पाए जाते हैं जिनमे करीब 150 प्रजातियां वृक्षों की है। इन वृक्षों में अधिकतर वृक्ष ऐसी प्रजातियों के हैं जो भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। ये वृक्ष और अन्य वनस्पतियां विभिन्न प्रजातियों के पक्षियों के लिए आवास, खाद्य पदार्थ एवं घोंसले इत्यादि बनाने का सामान उपलब्ध कराते हैं। राष्ट्रीय प्राणी उद्यान में पाए जाने वाले कुल वृक्षों की प्रजातियों में से 12 प्रजातियां फ़ाइकस की हैं। इनमें से पीपल, बरगद, पिलखन एवं गूलर प्रमुख प्रजातियां हैं जिन पर पक्षी बहुतायत में संयोजन करते हैं। फ़ाइकस के फल पोषण की दृष्टि से काफी लाभकारी होते हैं, इनमें कीटों की उपस्थिति की वजह से इनकी प्रोटीन की तादाद बढ़ जाती हैं जिससे इन्हें पक्षियों के साथ –साथ अन्य जीव भी चाव से खाते हैं।

प्राणी उद्यान में विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र हैं जो इसकी जैव विविधता को और समृद्ध करते हैं। वैसे तो पूरा प्राणी उद्यान जल मार्ग से जुड़ा हुआ है, पर यहाँ चार प्रमुख तालाब हैं जिनमें हर तालाब में एक छोटे द्वीप की संरचना कुछ ऐसे की गयी है जिससे यह मानव निर्मित न लग कर प्राकृतिक रूप से बना हुआ लगे। इसमें लगे विभिन्न प्रजातियों के वृक्ष पक्षियों के घोसले एवं बसेरों के लिए पूर्णतया उपयुक्त हैं। इन मानव निर्मित आर्द्रभूमि का परिस्थितिक तंत्रवेडर पक्षियों तथा अन्य जल पक्षियों के लिए अत्यंत उपयुक्त आवास प्रदान करते हैं। कुछ खुले क्षेत्र और पशुओं के बाड़े घास एवं पेड़ों का मिश्रित पारिस्थितिक तंत्र बनाते हैं, जिन्हे हम सवाना बोलते हैं, ये भूमि पर रहने वाले पक्षियों की विविधता के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। वृक्षों से आच्छादित वन क्षेत्र पेड़ों पर रहने वाले पक्षियों को आवास प्रदान करते हैं। प्राणी उद्यान में आवारा पशुओं से सुरक्षा और मनुष्यों की कम आवाजाही भी पक्षी विविधता बढ़ने का एक कारण है।

राष्ट्रीय प्राणी उद्यानः संकटग्रस्त एवं अन्य पक्षियों का प्रजनन क्षेत्र

जब हम राष्ट्रीय प्राणी उद्यान की पक्षी विविधता की बात करते हैं तो जंघिल या पेंटेड स्टोर्क (Mycteria leucocephala) का नाम सबसे पहले आता है। दिल्ली एवं आसपास के क्षेत्रों में प्राणी उद्यान ही वो जगह हैं जहाँ पर ये पानी के पास रहने वाले पक्षी बड़ी संख्या में अपना घोंसला बनाते हैं तथा अंडे देते हैं। जंघिल एक 93–100 सेंटीमीटर ऊंचाई वाला खूबसूरत स्टोर्क हैं, वयस्क

पक्षियों के पृष्ठ भाग पर गुलाबी रंग के पंख होते हैं जिसकी वजह से इसका नाम पेंटेड स्टोर्क पड़ा, ये पंख अवयस्क पक्षियों में विकसित नहीं होते हैं। राष्ट्रीय प्राणी उद्यान में ये पक्षी स्थानीय प्रवासी हैं जो की अगस्त के महीने में यहाँ अपने घोसले बनाने आते हैं, ये औपनिवेशिक घोसले बनाने के लिए जाने जाते हैं और प्रत्येक घोसलों में एक से लेकर पांच अंडे तक देते हैं। प्राणी उद्यान में इनके अंडो एवं विकसित होते हुए चूज़ों को कभी कभी ब्लैक काइट या कौवे अपना आहार बनाते हैं, मगर उसके बावजूद भी इनके काफी बच्चे वयस्क हो कर आने वाले सालों में प्रजनन एवं घोसला बनाने के लिए प्राणी उद्यान में सैकड़ों की तादाद में आते हैं। इस वर्ष इनके घोसलों एवं बच्चों की गणना अक्टूबर एवं नवंबर माह में की गयी थी जिसमें 220 घोसले, 354 चूजे एवं 450 वयस्क पक्षी गिने गए।

(प्राणी उद्यान में जंघिल के घोसले एवं उनके चूज़े)

सामान्य चील या ब्लैक काइट (Milvus migrans) भी प्राणी उद्यान में बड़ी तादाद में मिलते हैं। ब्लैक काइट Accipitridae कुल की सदस्य है और ये इस कुल के सबसे ज्यादा तादाद में मिलने वाले सदस्य भी हैं। इनकी आबादी मनुष्यों की आबादी के सापेक्ष बढ़ती हैं और ये शहरी पर्यावरण के सबसे प्रमुख मांसभक्षी पक्षी हैं जहाँ ये मनुष्य जनित कूड़ा करकट एवं मृत पशु पक्षियों को अपना आहार बनाते हैं। ये पक्षी प्रमुखतः वृक्षों पर अपना घोसला बनाते है पर शहरी पर्यावरण में ये अपने घोसले मनुष्य द्वारा निर्मित इमारतों में भी बनाते हैं। राष्ट्रीय प्राणी उद्यान यमुना नदी के किनारे स्थित होने और अनगिनत वृक्षों से आच्छादित होने की वजह से इन पक्षियों का एक प्रमुख प्रजनन क्षेत्र है। प्राणी उद्यान में इनका प्रजनन काल सितम्बर से अप्रैल तक होता है और ये अपने घोसले 7 से लेकर 30 मीटर की ऊंचाई तक के पेड़ों पर बनाते हैं। सामान्यतया ये दो अंडे देते हैं पर कभी कभी इनके घोसलों में तीन अंडे भी देखे गए हैं। अंडे को सेने का कार्य मुख्य रूप से मादा करती है पर नर का भी इसमें सहयोग होता है, नर का मुख्य कार्य भोजन इकठ्ठा करना होता है। शोध के दौरान ऐसा पता चला है की 62 प्रतिशत समय मादा अंडो को सेती है और नर 33 प्रतिशत, बाकि के बचे समय में अंडे के पास न तो नर ना मादा कोई नहीं होता है। अंडे सेने का समय करीब 24 से 27 दिन होता है उसके पश्चात् अंडो से चूज़े फरवरी और मार्च के दौरान निकलते हैं।

(लाल पट्टी धारक तोता एवं भारतीय मोर)

प्राणी उद्यान में मोरों की भी अच्छी आबादी है, जो की दिल्ली के अन्य क्षेत्रों से काफी बेहतर स्थिति में है। भारतीय मोर (Pavo cristatus) की प्रजाति भारतीय उपमहाद्वीप की मूल निवासी है। IUCN द्वारा इसे कम चिंता वाली प्रजाति घोषित किया गया है पर भारतवर्ष का राष्ट्रीय पक्षी होने की वजह से इन्हें भारतीय वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के अंदर सर्वोच्च संरक्षण मिला हुआ है। ये पक्षी भी प्राणी उद्यान में काफी संख्या में प्रजनन करते हैं, प्रजनन काल जो की जनवरी से लेकर सितम्बर तक होता है के पश्चात् मादा 3 से 8 अंडे देती है जिसे वो तिनकों, सूखी पत्तियों एवं शाखाओं से जमीन पर बने घोसले में रखती है, इन अण्डों से चूज़ों के निकलने में करीब 28 दिन लगते हैं। घनी झाड़ियों एवं वृक्षों से ढंके वन क्षेत्र प्राणी उद्यान में मोरों के प्रजनन के लिए उचित वातावरण एवं सुरक्षा प्रदान करते हैं।

हवासील या ग्रेट वाइट पेलिकन एक खूबसूरत जल पक्षियों की प्रजाति है जो आकार में अपने परिवार के दूसरे सबसे बड़े सदस्य हैं। इनके पंखों का आकार 7.5 फ़ीट से लेकर 11.8 फ़ीट हो सकता है। इनके नर व मादा के आकार एवं वजन में फर्क होता है, जहाँ नर करीब 10 किलोग्राम वजनी होते हैं तथा आकार में बड़े होते हैं वहीं मादा सिर्फ 7 किलोग्राम की तथा नर से आकार में छोटी होती है, इनके नर व मादा में इनकी चोंच के आधार पर भी अंतर किया जा सकता है नर की चोंच लम्बी और आगे से थोड़ी मुड़ी हुई होती है और मादा की चोंच छोटी और सीधी होती है। प्राणी उद्यान में ये करीब 20–25 की संख्या में पाए जाते हैं। इनका प्रजनन काल फरवरी से शुरू होकर अप्रैल तक होता है। प्रजनन काल के समय इनमें कुछ बदलाव दिखते हैं जिसमें प्रमुख हैं इनकी चोंच के नीचे लटकती थैली का रंग चमकीला पीला हो जाना, साथ ही आँखों के चारों ओर गुलाबी रंग की त्वचा का हो जाना, तथा सिर पर एक शिखा जैसी संरचना बन जाना इत्यादि। ये अपना घोसला जमीन पर सफ़ेद पंखों को इकट्ठा कर के बनाते हैं, इनकी मादा एक समय में 1 से लेकर 4 अंडे तक दे सकती है पर समान्यतया दो अंडे ही

(हवासील एवं अंधा बगुला प्राणी उद्यान के तालाबों में अच्छी तादाद में पाए जाते हैं)

पाए जाते हैं। दिल्ली शहर में ग्रेट वाइट पेलिकन सिर्फ प्राणी उद्यान में पाए जाते हैं।

उपरोक्त पक्षियों के अतिरिक्त प्राणी उद्यान में कई अन्य पक्षियों को भी बड़ी संख्या में प्रजनन करते एवं घोसला बनाते देखा गया है जिनमें से प्रमुख हैं, तोता, बुलबुल, टिटहरी, दर्ज़ी चिड़िया, मैना, बड़ा बसंता इत्यादि।

राष्ट्रीय प्राणी उद्यान में सलीम अली पक्षी गणना (Salim Ali Bird Count):

महान पक्षीविद श्री सलीम अली की जयंती के अवसर पर राष्ट्रीय प्राणी उद्यान ने एक सप्ताहपर्यन्त पक्षियों की गणना का कार्यक्रम आयोजित किया जिसमें दिल्ली एवं आसपास के क्षेत्रों से पक्षी विशेषज्ञों को आमंत्रित किया गया। इस पूरे कार्यक्रम के दौरान राष्ट्रीय प्राणी उद्यान की एक समर्पित बर्ड वॉचर्स की टीम इन विशेषज्ञों के साथ–साथ थी। इस दौरान जो भी पक्षियों की प्रजातियों को देखा गया या सुना गया उसका डाटा मोबाइल के E-Bird App में प्रविष्ट किया गया।

यह गणना 5 नवंबर 2020 से शुरू होकर दिनांक 12 नवंबर 2020 को ख़त्म हुई। इस दौरान कुल 57 प्रजातियों के पक्षियों को देखा और सुना गया इनमें से 45 प्रजातियां स्थानीय निवासी एवं 12 प्रजातियां प्रवासी पक्षियों की थीं। इस गणना में कुछ ऐसी भी प्रजातियों को पाया गया जिनका जिक्र पहले बनी हुई प्राणी उद्यान के पक्षियों की चेकलिस्ट में नहीं था।

प्राणी उद्यान का पक्षी गृहः

प्राणी उद्यान देशी एवं विदेशी पक्षियों के अस्वस्थाने संरक्षण के लिए भी जाना जाता है। प्राणी उद्यान में कुल 40 प्रजातियों के करीब 430 पक्षी हैं जो कि संरक्षित रूप से पक्षी गृह के आवास में पर्यटकों के देखने के लिए रखे हुए हैं। इन पक्षियों में कुछ प्रजातियां संकटग्रस्त हैं, इन्हीं संकटग्रस्त प्रजातियों में से एक प्रमुख प्रजाति है जिसे लाल जंगली मुर्गा (Gallus gallus) के नाम से जाना जाता है। ये प्रजाति प्राकृतिक रूप से तराई, शिवालिक, विंध्य एवं सतपुड़ा के जंगलों एवं गंगा के मैदानों में कभी बहुतायत में पायी जाती थी, पर अंधाधुंध शिकार एवं प्राकृतिक आवास के विनाश के चलते अब इसकी आबादी खतरे में है। राष्ट्रीय प्राणी उद्यान के उचित प्रबंधन रिकॉर्ड

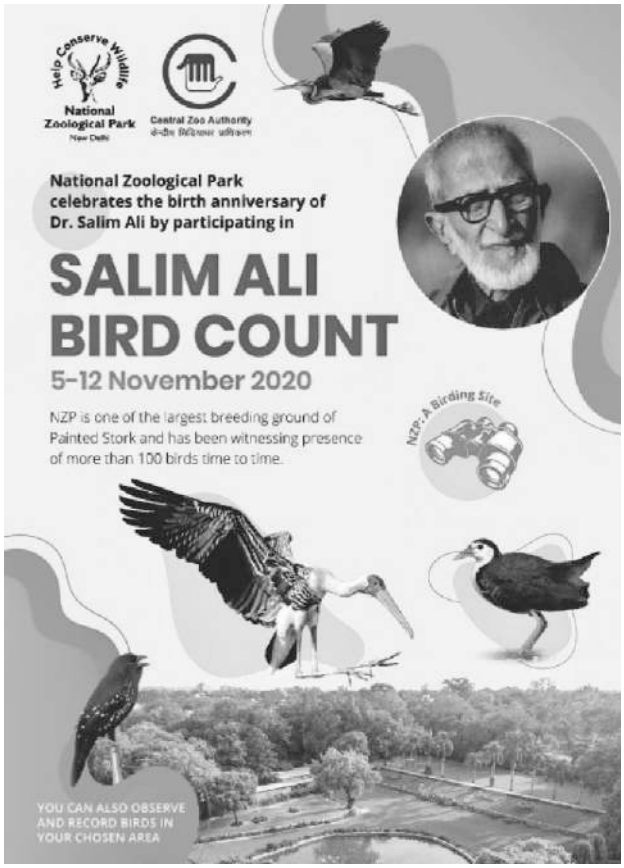

को देखते हुए केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण ने इस संकटग्रस्त प्रजाति के संरक्षित प्रजनन के लिए इस प्राणी उद्यान को चुना है। उचित पर्यावरण एवं संरक्षण प्रयास की वजह से इनकी आबादी दिल्ली चिड़ियाघर में उत्तरोत्तर बढ़ रही है और बीते वर्षों में काफी संख्या में इन्हें दूसरे प्राणी उद्यानों में एक्सचेंज प्रोग्राम के तहत भेजा गया है।

इसके अतिरिक्त कई अन्य प्रजातियों के पक्षी भी प्राणी उद्यान में पक्षी गृह के सुरक्षित वातावरण और उचित प्रबंधन की वजह से बड़ी संख्या में प्रजनन करते हैं, जिनमें से पेंटेड स्टोर्क्स, सिल्वर फीसेंट, ईमू, मकाउ, हिरामन तोता तथा लाल पट्टी धारक तोता इत्यादि प्रमुख हैं ।

राष्ट्रीय प्राणी उद्यान की पक्षी विविधता का रिकॉर्ड विभिन्न ऋतुओं में विशेषज्ञों के द्वारा समय–समय पर किया जाता है जिस से कम होती प्रजातियों एवं नयी प्रजातियों के बारे में जानकारी उपलब्ध रहती है जो प्राणी उद्यान के प्राकृतिक रहवास के उचित प्रबंधन में मददगार साबित होती है।

उपरोक्त कथनों से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय प्राणी उद्यान एक प्रमुख पक्षी क्षेत्र है जहाँ विभिन्न प्रजातियों के पक्षी स्वछन्द विचरण करते हैं और सफलतापूर्वक प्रजनन भी करते हैं। वर्तमान में प्राणी उद्यान प्रबंधन पक्षियों के प्राकृतिक रहवास के रख रखाव एवं उनके उचित प्रबंधन के लिए अभिनव प्रयास कर रहा है जिस से आने वाले समय में अन्य प्रजातियों के पक्षियों को भी यहाँ प्रवास के लिए आकर्षित किया जा सके और प्राणी उद्यान को एक बेहतर और महत्वपूर्ण पक्षी क्षेत्र के रूप में विकसित किया जा सके।

राष्ट्रीय प्राणी उद्यान में पाए जाने वाले कुछ प्रमुख पक्षियों की सूचीः

क्रम संख्या	सामान्य नाम	वैज्ञानिक नाम
1.	चील	*Milvus migrans*
2.	शिकरा	*Accipiter badius*
3.	छोटा किलकिला	*Alcedo atthis*
4.	किलकिला	*Halcyon smyrnensis*
5.	नकटा	*Sarkidiornis melanotos*
6.	छोटी मुर्ग़ाबी	*Anas crecca*
7.	सींख पर बत्तख	*Anas acuta*
8.	टोकरवाला	*Anas clypeata*
9.	गुगराल	*Anas poecilorhyncha*
10.	सिलकहि	*Dendrocygna javanica*
11.	ताड़ी अबाबील	*Cypsiurus balasiensis*
12.	करचिया बगुला	*Egretta garzetta*
13.	सुरखिआ बगुला	*Bubulcus ibis*
14.	अंधा बगुला	*Ardeola grayii*
15.	अंजन बगुला	*Ardea cinerea*
16.	तार बगुला	*Nycticorau nycticorau*
17.	धनेश	*Tockus birostris*
18.	बड़ा बसंत	*Megalaima zeylanica*
19.	छोटा बसंत	*Megalaima haemacephala*
20.	टिटहरी	*Vanellus indicus*
21.	बरसीरी	*Burhinus oedicnemus*
22.	ज़िर्दी	*Vanellus malabaricus*
23.	जंघिल	*Mycteria leucocephala*
24.	काली फुटकी	*Prinia socialis*
25.	कबूतर	*Columba livia*
26.	हरियल	*Treron phoenicoptera*
27.	ढोर फाख्ता	*Streptopelia decaocto*
28.	नीलकंठ	*Coracias benghalensis*
29.	महालत	*Dendrocitta vagabunda*
30.	कौवा	*Corvus splendens*
31.	कोयल	*Eudynamys scolopacea*

32.	महोका	*Centropus sinensis*
33.	पपिया	*HierococcyÛ varius*
34.	कोतवाल	*Dicrurus macrocercus*
35.	तेलिया मुनिया	*Lonchura punctulata*
36.	लाल मुनिया	*Amandava amandava*
37.	पचानक	*Lanius vittatus*
38.	पतरिंगा	*Merops orientalis*
39.	कलचुरी	*SaÛicoloides fulicata*
40.	सात बहनी	*Turdoides straita*
41.	थिरथीरा	*Phoenicurus ochruros*
42.	गुलाब चश्म	*Chrysomma sinense*
43.	फूल सूंघी	*Nectarinia asiatica*
44.	पीलक	*Oriolus oriolus*
45.	गौरैया	*Passer domesticus*
46.	हवासील	*Pelecanus onocrotalus*
47.	पन डुब्बी	*Anhinga rufa*
48.	पन कौवा	*PhalacrocoraÛ niger*
49.	सफ़ेद तीतर	*Fracolinus pondicerianus*
50.	भारतीय मोर	*Pavo cristatus*
51.	कठफोड़वा	*Dinopium benghalense*
52.	बया	*Ploceus philippinus*
53.	दुबडुबी	*Tachybaptus ruficollis*
54.	हिरामन तोता	*Psittacula eupatria*
55.	टुइया तोता	*Psittacula cyanocephala*
56.	तोता	*Psittacula krameri*
57.	बुलबुल	*Pycnonotus cafer*
58.	जल मुर्गी	*Gallinula chloropus*
59.	दसारी	*Fulica atra*
60.	दवाक	*Amaurornis phoenicurus*
61.	गज़ पाओं	*Himantopus himantopus*
62.	जंगली चोघाड़	*Glaucidium radiatum*
63.	चोघाड़	*Athene brama*
64.	गंगा मैना	*Acridotheres ginginianus*
65.	ब्रह्मिनी मैना	*Sturnus pagodarum*
66.	मैना	*Acridotheres tristis*
67.	अबलक मैना	*Sturnus contra*
68.	गुलाबी मैना	*Pastor roseus*
69.	काला बाज़ा	*Pseudibis papillosa*
70.	हुदहुद	*Upupa epops*
71.	बबूना	*Zosterops palpebrosa*

सूखी ही बहने को मजबूर नदियाँ

डॉ. अनूप चतुर्वेदी
क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल

दुनिया में ज्यादातर नदियां अपने तटवर्ती क्षेत्रों के लिए जीवनदायिनी रही हैं। यह भी कटु सत्य है कि सभ्यताओं का विकास ही नदियों के विलोपन का कारण भी बन रहा है। यह किसी से छुपा नहीं है, लेकिन विकास की अंधी दौड़ में आज नदियों का अस्तित्व खतरे में है। अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह का कारण, नदी से मिलने वाली रेत व जलराशि है।

बीसवीं सदी के पहले कालखण्ड तक भारत की अधिकांश नदियाँ बारहमासी थीं। हिमालय से निकलने वाली नदियों को बर्फ के पिघलने से अतिरिक्त पानी मिलता था। पानी की आपूर्ति बनी रहती थी अतः उनके सूखने की गति अपेक्षाकृत कम थी। नदी के कछार के प्रतिकूल भूगोल तथा भूजल के कम रीचार्ज या विपरीत कुदरती परिस्थितियों के कारण, उस कालखण्ड में भी भारतीय प्रायद्वीप की कुछ छोटी–छोटी नदियाँ सूखती थीं। इस सब के बावजूद भारतीय नदियों का सूखना सामान्य घटना नहीं था।

यह भी उल्लेखनीय है कि पिछले 50–60 सालों से भारत की सभी नदियों खासकर भारतीय प्रायद्वीप की नदियों के प्रवाह में गम्भीर कमी आ रही है। हिमालयी नदियों को छोड़कर भारतीय प्रायद्वीप या जंगलों तथा झरनों से निकलने वाली बहुत सारी नदियाँ लगभग मौसमी बनकर रह गई हैं। हिमालयी नदियों सहित भारतीय प्रायद्वीप की नदियों के प्रवाह की कमी/सूखने के लिये अलग–अलग कारण हो सकते हैं। उन कारणों को प्राकृतिक कारण और मानवीय हस्तक्षेप वर्ग में वर्गीकृत किया जा सकता है।

मुख्य प्राकृतिक कारण

भूजल स्तर की मौसमी घट–बढ़ से सभी परिचित हैं। सभी जानते हैं कि हर साल, वर्षाजल की कुछ मात्रा धरती में रिस कर एक्वीफरों में भूजल का संचय करती है। उसे भूजल का रीचार्ज कहते हैं।

यह रीचार्ज भले ही असमान से होता है पर होता पूरी नदी घाटी के लिए है।

विदित है कि भूजल के रीचार्ज के कारण भूजल का स्तर सामान्यतः अपनी पूर्व स्थिति प्राप्त कर लेता है व नदियों के बहाव में सहायक होता है। विदित है कि एक्वीफरों में संचित पानी स्थिर नहीं होता, वह ऊँचे स्थान से नीचे स्थान की ओर प्रवाहित होता रहता है। इसलिये जैसे ही बरसात खत्म होती है, एक्वीफर को पानी की आपूर्ति बन्द हो जाती है, एक्वीफर में जल संचय होना रुक जाता है और निचले इलाकों की ओर संचित जल के बहने के कारण भूजल स्तर घटने लगता है। इस कारण सूखे दिन आते ही भूजल स्तर कम होने लगता है।

नदियों के सूखने का दूसरा प्राकृतिक कारण ग्लोबल वार्मिंग है। उसके कारण बारिश की मात्रा, वितरण तथा वर्षा दिवसों में बदलाव हो रहा है। औसत वर्षा दिवस कम हो रहे हैं तथा बरसात की मात्रा और अनियमितता बढ़ रही है। इस कारण भूजल की प्राकृतिक बहाली के लिये कम समय मिल पा रहा है। समय कम मिलने के कारण अनेक इलाकों में भूजल का प्राकृतिक संभरण घट रहा है। उसकी पर्याप्त बहाली नहीं होने के कारण नदी में प्राकृतिक बहाव में कमी आ रही है। प्राकृतिक बहाव के

कम होने के कारण प्रभावित इलाकों में गर्मी आते–आते अनेक छोटी–छोटी नदियाँ विलुप्त हो जाती हैं और सूखी ही बहने को मजबूर होती हैं।

अन्य प्राकृतिक कारण मिट्टी का कटाव है। विदित है कि मिट्टी का कटाव प्राकृतिक प्रक्रिया है। उसे पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता। कैचमेंट के वानस्पतिक आवरण में कमी होने से भी मिट्टी का कटाव भी बढ़ जाता है और मिट्टी की परतों की मोटाई घट जाती है। फलस्वरूप पानी रीचार्ज करने की उनकी भूजल संचय क्षमता भी घट जाती है। इस कारण भी नदी का प्रवाह कम हो रहा है व नदियों के सूखने की सम्भावनाएँ बढ़ रही हैं।

मानवीय हस्तक्षेप

नदियों के सूखने का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कारण नदी कछार में भूजल का अनियंत्रित दोहन है। उसके प्रभाव से नदी कछार के भूजल स्तर में गिरावट आती है तथा भूजल का स्तर कम होते रहने से भी नदियाँ सूखी ही बहने को मजबूर होती हैं।

देश की अनेक नदियों से विभिन्न उपयोगों के लिये पानी पम्प कर लिया जाता है। कई बार नदियों से नहरें निकाल कर बसाहटों की पेयजल आपूर्ति तथा सिंचाई की जाती है। अधिक संख्या में नहरों से पानी के उपयोग के कारण भी नदी के प्रवाह में कमी हो जाती है ओर नदियां सूखने लगती हैं।

एक अन्य कारण है नदी मार्ग पर बाँधों का बनना। उल्लेखनीय है कि बाँधों के बनने के कारण नदी का मूल प्रवाह न केवल अवरुद्ध होता है वरन नदी के निचले मार्ग में घट भी जाता है। यदि घटते प्रवाह में भूजल दोहन का कुप्रभाव जुड़ जाता है तो प्रवाह और भी कम हो जाता है। उसके असर से कभी–कभी नदियाँ सूख भी जाती हैं और सूखी ही बहने को मजबूर होती हैं। अन्य कारणों में छोटी नदियों पर बड़ी संख्या में चैकडेमों का बनना है। कई बार भण्डारण क्षमता के अधिक होने तथा संचित पानी के उपयोग में लिये जाने के कारण सारा प्रवाह उनमें रुक जाता है नतीजतन नदी सूख जाती है।

आधुनिक युग में प्रवाह की कमी के कारण नदी के पानी की विषाक्तता बढ़ रही है। इसके दो मुख्य कारण हैं, पहला लगातार कम होता मानसूनी प्रवाह और दूसरा अनुपचारित जल का नदी तंत्र में प्रवाह। रासायनिक खेती में उपयोग होने वाले कीटनाशक व अधिक मात्रा में उर्वरक का उपयोग भी नदी के प्रदूषण का मुख्य कारण है। इन कारणों से नदी और कछार का क्षेत्र लगातार प्रदूषित होता रहता है तथा धीरे–धीरे जल में कार्बनिक पदार्थों की अधिक मात्रा जमा हो जाती है तथा नदी तंत्र पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खनिज विभाग और बालू के कारोबार में लिप्त व्यापारी मिलकर नदियों का बालू लूट रहे हैं। भारी–भरकम पोकलैंड मशीनें नदी का सीना चीरकर बालू निकाल रही हैं। मिट्टी तक बालू खनन करने से पानी का ठहराव कम होता जा रहा है, जिससे जलस्तर नीचे जा रहा है और नदी सूखी ही बह रही है। हालत यह है कि जो नदी पूरे शहर को बिना किसी दिक्कत के पानी पिला रही थी वे खुद आज पानी को मोहताज है। आज उसी के पानी में जीवन पाने वाली मछलियों, अन्य जीव–जन्तुओं का जीवन खतरे में है। दिन–रात बालू खनन से नदी की

धारा सूख रही है। कई स्थानों पर नदी का पानी रोक लेने से यहां जलापूर्ति पर खासा असर पड़ा है।

नदी को अकाल मौत से बचाने के लिए सामाजिक संगठन, किसान, पत्रकार भी सक्रिय होते नजर आ रहे हैं। नदी में अंधाधुन्ध बालू खनन बन्द हो अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब सरस्वती की तरह अन्य नदियॉ भी धरती से लुप्त हो जाएगी और हम आने वाली पीढ़ियों की प्यास तक नहीं बुझा पाएंगें। नदियाँ किसी भी सभ्यता की जीवनरेखा होती हैं अगर जीवनरेखा ही नहीं होगी तो सभ्यता के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिन्ह लगेगा और नदियाँ भी सूखी ही बहने को मजबूर रहेंगी।

वन्य जीवों और जानवरों की तस्करी : कैसे लगे लगाम????

डॉ० पूर्णिमा शर्मा
केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली

पृथ्वी एकमात्र ऐसा ग्रह है, जहां जीवन संभव है। यहाँ पशु, पक्षी, पेड़–पौधे, मछलियां, सरीसृप, कीड़े और सबसे महत्वपूर्ण रूप से मानव एक व्यवस्था के रूप में रहते हुए एक तंत्र 'पारिस्थितिकी तंत्र' का निर्माण करते हैं। हमारा पारिस्थितिकी तंत्र जैविक और अजैविक दोनों तत्वों से मिलकर बना हुआ है। अगर एक भी तत्व असंतुलित होता है तो पूरे पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बिगड़ जाता है। पारिस्थितिकी तंत्र में एक छोटे से कवक से लेकर विशालकाय जीव और मानव सबकी ही अपनी भूमिका है। इतिहास साक्षी है कि जब–जब इस संतुलन मे अस्थिरता उत्पन्न हुई, तब बड़ी से बड़ी सभ्यताएँ काल के जाल में समा गयी। विशालकाय डायनासौर, जो जुरासिक काल में पृथ्वी पर अपना वर्चस्व कायम किए थे, उनका अंत का एक कारण संभवतः पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन भी था।

प्रस्तुत लेख, पारिस्थितिकी तंत्र के महत्वपूर्ण अंग वन्य जीवों से संबन्धित है। वन्य जीव जो हमारे वनों के पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित रखते है, उनका शिकार प्राचीन काल में मानव अपनी भूख मिटाने हेतु भोजन के रूप में करता था, परंतु आधुनिक काल में वन्य–जीवों का अंधाधुंध शिकार मानव अपनी लालसा और लालच को पूरा करने के लिए कर रहा है।

पिछले कुछ दशकों में मानव अपने जीवन यापन के लिए इतना लालची और विलासी हो गया है कि यह अन्य जीवों के जीवन को अपने उपयोग में लाने के लिए एक साधनमात्र समझने लगा है। इसी का एक रूप है वन्य जीवों और जानवरों का अवैध रूप से शिकार करना और उनकी तस्करी करना, जिसको 'वाइल्डलाइफ पोचिंग एण्ड ट्रेडिंग' के रूप में संबोधित किया जाता है। अवैध रूप से जानवरों का शिकार करने में जानवरों को जाल में फंसा कर उन्हे बेरहमी से मार दिया जाता है, और फिर उनके शरीर के अंगो को काटकर निकाल लिया जाता है। इन अंगो का उपयोग मांस, पारंपरिक औषधियां, आभूषण आदि बनाने में किया जाता है।

वन्य जीवों की तस्करी एक बड़ा व्यवसाय बन गया है। जो एक गंभीर अपराध की श्रेणी में आता है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क द्वारा वन्यजीवों के अंगों की तस्करी अवैध दवाओं और हथियारों के निर्माण करने हेतु की जाती है। हमारे देश में विविध उत्पाद को पाने के लिए विभिन्न जीवों का शिकार और फिर उनकी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तस्करी की जाती है, उदाहरण के तौर पर साँप की त्वचा, बाघ और तेंदुए के पंजे, हड्डी, खाल, मूंछ, हिरण के सींग, कछुए की खाल, हाथी के दाँत आदि।

वर्ष 2017 में भारतीय वन्यजीव संरक्षण सोसायटी के सर्वेक्षण के अनुसार 50 से अधिक बाघों का शिकार, 340 मोर और लगभग 37,267 कछुओं की तस्करी विदेशों में की गयी थी। पैंगोलिन, जो एक स्तनपायी जानवर है, उस पर आजकल तस्करों का खतरा मंडरा रहा है। चीन और वियतनाम जैसे पूर्वी एशियाई देशों में इसकी बहुत मांग है। इसका उपयोग कामोत्तेजक औषधि बनाने के लिए किया जाता है। इन अवैध व्यापार और अवैध शिकार ने प्रकृति में गंभीर असंतुलन पैदा किया है। यह सीधे तौर पर विभिन्न पारिस्थितिकी प्रणालियों की जैव विविधता को प्रभावित करता है। कुछ ऐसी प्रजातियाँ हैं जिनकी अधिक मांग के कारण उनका शिकार तेज़ी से होता जा रहा है। फलस्वरूप उनके प्राकृतिक आवास में उनकी आबादी में गिरावट देखी जा रही है। कई प्रजातियाँ अवैध शिकार के कारण संकटग्रस्त, विलुप्त होने की श्रेणी में आ गई हैं या विलुप्त ही हो गयी हैं।

नियम और कानून व्यवस्थाः

हमारी भारत सरकार ने निम्नलिखित कानून और नियम वन्यजीवों की सुरक्षा के लिए बनाए है :

1. पशुओं के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960
2. वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972

उपर्युक्त कानूनों के अलावा कई अन्य कानून हैं, जैसे–पशु परिवहन नियम, 1978; जानवरों पर प्रयोग (नियंत्रण और पर्यवेक्षण) नियम, 1968 आदि। पशु बलि अधिनियम, स्थानीय नगर निगम अधिनियम, पशुओं के प्रति क्रूरता

निवारण अधिनियम, 1960, वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आता है।

वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 के तहत जंगली जानवरों, पौधों की 1800 से अधिक प्रजातियों का व्यापार निषिद्ध किया गया है।

भारत 1976 के बाद से सीआईटीईएस (CITES—वन्यजीवों और वनस्पतियों की विलुप्तप्राय प्रजातियों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर संधि) का सदस्य भी है। CITES सरकारों के बीच एक अंतरराष्ट्रीय समझौता है जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि जंगली जानवरों और पौधों के नमूनों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार से उनके अस्तित्व को खतरा उत्पन्न नहीं हो।

उपसंहारः

यद्यपि, वन्य जीवों के अवैध शिकार और उनकी तस्करी को रोकने के लिए कई सारे नियम, कानून, और दंड का प्रावधान है, परन्तु यह व्यवसाय निरंतर रूप से निरीह बेजुबान जानवरों की जान लेता जा रहा है। कई अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय संगठनों ने मिलकर जीवों के अवैध शिकार और व्यापार पर लगाम कसने के लिए कई कदम उठाए हैं। लेकिन पिछले दशकों में वन्यजीव अपराधों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। इस निरंतर वृद्धि का कारण भ्रष्टाचार, दंतहीन कानून, कमजोर न्यायिक प्रणाली है, जिनकी आपसी मिलीभगत के कारण तस्कर वन्यजीवों को आसानी से मार कर और उनके बहुमूल्य अंगों का अपने निजी फायदे के लिए व्यापार करते हैं।

वन्य जीवों के अवैध शिकार और तस्करी के लिए कड़े से कड़े कानूनों और दंड का प्रावधान होना चाहिए। यह अत्यंत ही चिंता का विषय होना चाहिए कि यदि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र की कोई भी कड़ी विलुप्त हो जाएगी तो हमारी पूरी व्यवस्था धीरे—धीरे करके विलुप्त होने की दहलीज़ पर आ जाएगी। पेंगोलीन जानवर का संकटग्रस्त होना एक नवीन ज्वलंत उदाहरण है, यह जानवर चीटीयों को खाता है, अगर यह विलुप्त हो गया तो फसलों और अन्य जीवों को चीटीयों से बहुत नुकसान हो जाएगा। इसी तरह जैव मण्डल और मानव जीवन को इस धरा पर सुचारु रूप से चलायमान रहने के लिए अन्य जीवों की अपनी—अपनी भूमिका है।

अतः हमें सरकारी उपक्रमों के साथ—साथ अपने स्तर पर भी जीवों की सुरक्षा के लिए कदम उठाने चाहिए, जैसेः वन्य जीवों के अंगों से बनी वस्तुओं का उपयोग कम से कम या नहीं करना चाहिए। सरकारी कानूनों और नियमो का पालन करना चाहिए और लोगों को वन्य जीवों की महत्ता के प्रति जाग्ररूक करना चाहिए। अधोलिखित पंक्तियाँ इस लेख का समापन करने के उद्देश्य से हैः—

अपने दर्द को समझा तो क्या समझा,
बेजुबान की मौत पे कुछ समझ आया नहीं,
बस अपनी जिंदगी की विलासिता को
पूरा करने के लिए,
जानवरों की जिंदगी पर तरस आया नहीं।

स्वच्छ भारत अभियानः पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास की ओर बढ़ते कदम

कंचन पुरी, मीनाक्षी रावत,
रितेश जोशी एवं सतीश चंद्र गढ़कोटी
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

स्वच्छ भारत अभियान यानी पर्यावरण प्रबंधन एवम सरंक्षण का अभियान या फिर यू कहिये कि प्रत्येक नागरिक की सोच बदलने का अभियान। शायद समुचित विकास की ओर ले जाने वाला अभियान, बल्कि शायद नहीं अपितु पूर्ण रूप से यह अभियान भारत वर्ष को समृद्ध बनाने में अपनी अहम भूमिका का निर्वाह कर रहा है। वर्ष 2014 में व्यापक रूप से आरंभ हुए इस अभियान का प्रतिबिंब कहीं भी देखा जा सकता है। अभियान के केंद्र बिंदु पर अगर दृष्टि डाली जाए तो स्पष्ट होता है की प्रत्येक नागरिक इस अभियान में भागीदारी सुनिश्चित करने के साथ ही एक हरित सामाजिक ज़िम्मेदारी एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु हरित व्यवहार को भी उजागर करता है।

यह कहने में कदापि अचंभा नहीं होता कि हम में से हर एक सफाई का अर्थ भलीभांति जानता है, परन्तु इस हेतु हम स्वयं प्रतिदिन कितना समय अर्पित करते हैं इस पहलू से हम अछूते हैं। यही है स्वच्छ भारत अभियान की नींव। परमपिता महात्मा गाँधी जिन्हे लोग प्रेम से 'बापू' कह कर बुलाते है का एक कथन था "स्वच्छता ही सेवा है"। परमपिता महात्मा गाँधी का स्वच्छ भारत हेतु अभियान न केवल एक सोच थी अपितु प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है जिसने सम्पूर्ण विश्व को एक मंच पर लाकर खड़ा किया। गाँधी जी का कथन था कि स्वच्छता एक मजबूत एवं स्वस्थ्य पर्यावरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। 2 अक्टूबर 2014 में भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी की जयंती पर भारतवर्ष में स्वच्छ भारत अभियान का शुभारम्भ किया गया। उस वक्त अभियान का मुख्य उद्देश्य स्वच्छ भारत का लक्ष्य प्राप्त करना था। समय के साथ–साथ अभियान ने जोर पकड़ा और प्रत्येक नागरिक इस अभियान को समझने लगा और इससे जुड़ा। वास्तव में इस अभियान से नहीं अपितु वह अपने और आने वाली पीढ़ी के बेहतर कल हेतु इस अभियान को सार्थक बना रहा है। यही है सामाजिक जिम्मेदारी जिसमे हमें अपनी भागीदारी सुनिश्चित करनी है।

परिवेश पर्यटन यानि वह पर्यटन जो पर्यावरण को ध्यान में रख कर किया जाए, जो स्थानीय समुदाय के जीवनयापन को समृद्ध करे और जिसके माध्यम से पर्यटक पर्यावरण से जुड़े और पर्यटन स्थलों विशेषकर राष्ट्रीय पार्कों एवं वन्यजीव अभयारण्यों के सरंक्षण में अपनी भूमिका सुनिश्चित कर सकें। परिवेश पर्यटन भी वास्तव में हमें सफाई अभियान से ही जोड़ता है, दूसरे मायनो में अगर यह कहा जाए कि अगर एक पर्यटक वन्यजीव सफारी, ऐतिहासिक धरोहर, को देखने एवं समुद्र तटीय क्षेत्रों में घूमने जाता है और गंदगी न फैलाना सुनिश्चित करता है तो वह स्वच्छ भारत अभियान में अपनी भूमिका निर्वाह कर रहा है, एकदम उचित होगा।

यह सच है कि स्वच्छ भारत अभियान और सतत विकास के बीच एक गहरा संबंध है। स्वच्छ भारत अभियान से पर्यावरण की सुरक्षा, संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण होता है जो स्वतः ही जैवविविधता का संरक्षण करता है और साथ ही सभी प्राकृतिक संसाधनों को पुनर्जीवित भी करता है। स्वच्छ भारत अभियान के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण न केवल वर्तमान आवश्यकताओं को सम्पूर्ण करेगा बल्कि यह आने वाली भावी पीढ़ी की जरूरतों को भी सुरक्षित रखेगा।

भारत, सम्पूर्ण विश्व की भूमि क्षेत्र का केवल 2.4% धारण किये हुए है। जबकि विश्व भर मे पायी जाने वाली कुल प्रजातियों में लगभग 7–8% भारत में पायी जाती है जिनमे पेड़–पौधों की लगभग पचास हजार पशुओं की लगभग एक लाख प्रजातियाँ शामिल है। भारत उन कुछ देशों में भी है जिन्होंने संरक्षण योजना के लिए एक बायोग्राफिक वर्गीकरण विकसित किया है, और देश में जैवविविधता वाले क्षेत्रों का मानचित्रण किया है। 34 वैश्विक जैव विविधता वाले हॉटस्पॉट में से चार भारत में मौजूद हैं, जिनका प्रतिनिधित्व हिमालय, पश्चिमी घाट एवं, उत्तर–पूर्व क्षेत्र और निकोबार द्वीप समूह करते हैं।

स्वच्छ भारत अभियान से फायदे

स्वच्छता वैसे तो हमारे जीवन–यापन का एक अटूट अंग है परन्तु विगत दशकों के आकड़ों पर अगर नजर डाली जाए तो स्पष्ट होता है की जनसंख्या वृद्धि स्वच्छता हेतु एक अहम कारण है। विगत लगभग चार दशकों के आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि जहाँ भारतवर्ष में 1980 में जनसँख्या 69.68 करोड़ थी, वही वर्ष 2000 में 105.31 करोड़ एवं वर्ष 2020 में 138 करोड़ हो गई। तेजी से बढ़ती जनसँख्या के परिणामस्वरुप भौतिक आवश्यकताओं की मांग, समय और जगह की आवश्यकता, आदि ने स्वच्छ शब्द के मायने बढ़ाते हुए इसे एक चुनौती के रूप में ला खड़ा किया।

अगर विगत कुछ वर्षों के आंकडों का अवलोकन किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि देश भर में आज भी लगभग 64 मिलियन (जनगणना 2011 के अनुसार) जनसंख्या गन्दी बस्तियों में निवास करती है। आंकड़े यह भी स्पष्ट करते हैं कि देश में प्रत्येक वर्ष एक लाख से भी ज्यादा पांच वर्ष से कम आयु के बच्चे डाइयरिया से मरते है, जो मुख्यतः असुरक्षित पेयजल, गंदगी एवं सक्रमण के चलते होता है।

वर्ष 2014 में शुरुआत के साथ ही इस अभियान ने जोर पकड़ लिया था, परिणामस्वरूप वर्ष 2014 से 2020 के मध्य अभियान के तहत देशभर में लगभग 10.8 करोड़ शौचालयों का निर्माण किया गया। इसके अतिरिक्त 27 राज्यों के लगभग 5.5 लाख ग्रामीण क्षेत्रों को खुले में शौच मुक्त घोषित किया गया। पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय (अब जलशक्ति मंत्रालय के अंतर्गत) को स्वच्छ भारत अभियान का नोडल मंत्रालय बनाया गया था। इस कार्यक्रम को देशभर में सुचारु रूप से चलाने हेतु भारत सरकार के चार बड़े मंत्रालयों ने अहम भूमिका निभाई जिसमे क्रमशः ग्रामीण विकास मंत्रालय, शहरी विकास मंत्रालय, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, पेयजल और स्वच्छता विभाग हैं। प्रत्येक मंत्रालय/विभाग की एक 'स्वच्छता कार्य योजना' है और विभिन्न राज्यों में उसको लागू किया जा रहा है। 'स्वच्छता ही

सेवा' पखवाड़ा भी इस कार्यक्रम के तहत ही उजागर हुआ, जो आज एक बड़े जागरूकता अभियान के रूप में जाना जाता है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के अधीन आने वाले पर्यावरण (सरंक्षण) अधिनियम 1986, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 एवं वर्ष 2016 में लागू अपशिष्ट प्रबंधन नियम स्वच्छ भारत की ही पैरवी करते हैं। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड एवं राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की इस अभियान में बड़ी भूमिका है। वर्ष 2017 में पर्यावरण वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने स्वच्छ भारत अभियान को राज्यों में विस्तृत करने हेतु एक 'स्वच्छ और स्वस्थ भारत इकाई' का भी निर्माण किया था। मंत्रालय द्वारा चलाये जा रहे इस कार्यक्रम में विशेषकर स्कूल एवं कॉलेज स्तर के छात्र–छात्राओं को स्थान दिया गया है। मंत्रालय कि ही राष्ट्रीय हरित कोर योजना के तहत आज देशभर में लगभग एक लाख साठ हजार स्कूल के छात्र–छात्राएँ पर्यावरण जागरूकता अभियान में बढ़ चढ़ कर हिस्सा ले रहे हैं और स्वच्छ भारत अभियान में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर रहे हैं। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा हाल ही में लागू किया गया 'नेशनल क्लीन एयर प्रोग्राम' भी स्वच्छ भारत अभियान के बैनर तले ही साकार हो सकेगा।

विगत लगभग 3–4 वर्षो में कुछ– एक राज्यों में विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों (जिसमे प्रमुख्यतः सामान्य या कम आय अर्जित करने वाले लोग थे) से वार्तालाप किया गया और सामान्य रूप से स्वच्छ भारत अभियान के सन्दर्भ में उनकी राय जाननी चाही। सभी से बातचीत के बाद यह स्पष्ट हुआ कि जनजागरण पर भी स्वच्छ भारत अभियान का प्रभाव पड़ा है एवं वे एक स्वच्छ और स्वस्थ शहर एवं देश की कामना करते हैं और इस हेतु अपना योगदान दे रहे हैं। विशेष तथ्य था कि सभी ये मानते थे कि इस अभियान से 'फर्क तो पड़ा है'।

इकोक्लब कार्यक्रम में प्रतिभाग करने वाले स्कूल–स्तर के छात्र–छात्राओं द्वारा विभिन्न राज्यों में संचालित किए जा रहे स्वच्छता अभियान के कुछ छायाचित्र।

आज अगर हम भारतवर्ष के किसी भी भू–भाग में जायें तो इस अभियान कि झलक स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ती है चाहे वो रेलवे स्टेशन हो, हवाई अड्डे हो, बस स्टेशन हो, विद्यालय, विश्वविद्यालय, संस्थान अथवा कार्यालय हो या फिर शहर के बाज़ार। जगह–जगह कूड़ेदान उपलब्ध करवाने और कम करना, पुनः उपयोग, रिसाईकिल (Reduce, Reuse & Recycle) का अनुसरण करने को प्रेरित करने की मुहीम ने इस अभियान को बल दिया।

भारतवर्ष में पतित पावनी गंगा नदी को निर्मल बनाये रखने हेतु चलाई जा रही 'नमामि गंगे' परियोजना भी स्वच्छ भारत अभियान का ही एक अभिन्न अंग है जो वर्ष 2014 में शुरू की गई। जिसके अंतर्गत गंगा को स्वच्छ बनाया जा रहा है, उसके आस–पास वृक्षारोपण कार्य किया जा रहा है, औद्योगिक इकाइयों कि निगरानी की जा रही है, गंगा ग्रामों का निर्माण किया जा रहा है, नदी के आस–पास के क्षेत्रों हेतु विकास कार्य किये जा रहे है, जैवविविधता संरक्षण सुनिश्चित किया जा रहा है एवं जन जागरूकता कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है।

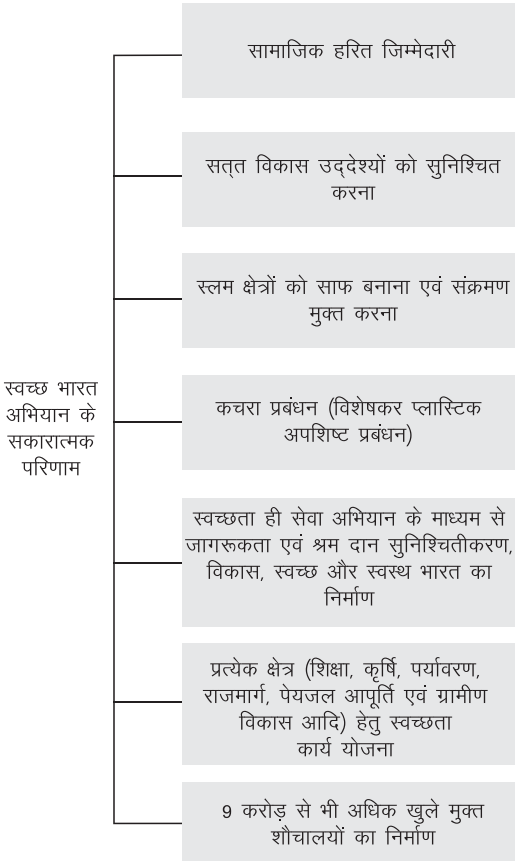

आंकड़े बताते हैं कि भारतवर्ष में प्रत्येक वर्ष लगभग 62 मिलियन टन कचरा उत्पन्न होता है, (पुनः उपयोगी अपशिष्ट एवं गैर–पुनः प्रयोज्य अपशिष्ट), जिसकी वार्षिक बढ़ोतरी दर 4% आंकी गई है। आकड़े यह भी स्पष्ट करते हैं कि 62 मिलियन टन में से मात्र 43 मिलियन टन कचरा एकत्रित किया जाता है, 11.9 मिलियन टन का निस्तारण और 31 मिलियन टन को गड्ढे भरने के स्थान में फेंक दिया जाता है।

कचरा प्रबंधन से सम्पन्नता की ओर

कचरा प्रबंधन एक ऐसा माध्यम है जिसके तहत हम विभिन्न कदमों के द्वारा कचरे को उत्पन्न होने से लेकर उसका विस्तारण कर सकते हैं इससे प्रमुखतः कचरे का संग्रह, ट्रांसपोर्ट, उपचार और निपटान शामिल हैं इसके अतिरिक्त नियमित रूप से निगरानी, कानूनी एवम नियामक कार्य योजना के माध्यम से भी कचरा प्रबंधन कर सकते हैं।

प्लास्टिक कचरे को सड़क बनाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इस विधि को सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय (Ministry of Road Transport and Highways) भी अपना रहा है। हाल ही में प्लास्टिक कचरे से राष्ट्रीय राजमार्ग 48 में धौला कुंआ के पास इस तरीके से कचरे के इस्तेमाल से सड़क बनाने का कार्य किया गया। स्लो सैंड फिल्टर तकनीकी के माध्यम से नाले के पानी की सफाई की जा सकती है इस प्रक्रिया से पानी की पारदर्शिता एवम रोगजनक जीवों को हटाया जा सकता है। सैंड फिल्टर पानी में 20–40 माइक्रोन से छोटे धूल–मिट्टी के कणों को हटा सकता है। घरेलू एवम औद्योगिक गंदे पानी को कुछ हद तक शुद्ध करने के लिए रूट जोन विधि का भी इस्तेमाल किया जाता हैं, ये तंत्र फिल्टर पैड जो कि रेत, मिट्टी आदि धारण किये हुए होते हैं, के सहयोग से लगाया जाता है। अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग करने हेतु ऊर्जा उत्पादन को भी बल दिया जा सकता है इसके अतिरिक्त प्लास्टिक कचरे से डीजल का निर्माण भी किया जा सकता है। हाल ही में भारतीय पेट्रोलियम संस्थान ने इस प्रकार के सफल प्रयोग किये जो कि प्लास्टिक कचरे से निपटने में अत्यंत सहायक है इसी तरह सूखे एवम इस्तेमाल किये हुए फूलों का प्रयोग भी हम कम्पोस्ट खाद बनाने में कर सकते हैं एवम शुष्क

अतरो का उपयोग भी सजावट सम्बन्धी चीजों को बनाने के लिए किया जा सकता है।

स्वच्छ भारत अभियान के कुछ सकारात्मक परिणाम

ऐसा नहीं हैं कि हम 'स्वच्छता' शब्द के मायने नहीं जानते अपितु आदि काल से ही मानव सभ्यता में हमें एक साफ़–सुथरे वातावरण की झलक मिलती है। आवश्यकता है तो महज इस बात की कि देश के प्रत्येक नागरिक को इस हेतु स्मरण कराया जाए। यह सच है कि 'स्वच्छ भारत अभियान' के उद्देश्य एवं परिणाम पर्यावरण संरक्षण में अहम भूमिका निभा रहे हैं, जिससे हम सतत विकास को सुनिश्चित करने में कामयाब भी हो रहे हैं। निश्चित ही यह ठोस एवं पर्यावरण हितैषी कदम देश को विकसित राष्ट्र की ओर ले जाएगा।

"पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास में हो हर नागरिक की भागीदारी, सिर्फ 'स्वच्छ भारत अभियान' से ही सम्पूर्ण हो सकेगी यह जिम्मेदारी"।

पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) और भारत में पर्यावरण मंजूरी प्रक्रिया

डॉ. आर. बी. लाल एवं
डॉ. सुजीत कुमार बाजपेयी
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

परिचय

भारत में पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा 27.01.1994 को पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के तहत जारी की गई विभिन्न गतिविधियों के लिए एक अधिसूचना के माध्यम से अनिवार्य किया गया था। उक्त ईआईए अधिसूचना 1994 के कार्यान्वयन के दौरान, कई छोटी–छोटी कमियां देखी गई और इन लघु कमियों को समय–समय पर संशोधन करने के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया गया। ईआईए का उपयोग पर्यावरण पर विकासात्मक परियोजनाओं के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने और समय पर, पर्याप्त, सुधारात्मक और सुरक्षात्मक शमन उपायों के माध्यम से सतत विकास को प्राप्त करने के लिए एक प्रबंधन उपकरण के रूप में किया जाता है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के तहत 14 सितंबर, 2006 को पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) अधिसूचना, 2006 को अधिसूचित किया है जो पूर्व पर्यावरण मंजूरी देने की प्रक्रिया से संबंधित है। यह अधिसूचना पर्यावरण पर अनियमित औद्योगिक गतिविधियों के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने और कम करने के लिए पूर्व पर्यावरणीय मंजूरी प्रदान करती है।

पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) प्रक्रिया एक तकनीकी उपकरण है जो किसी गतिविधि के प्रस्तावित पर्यावरणीय प्रभावों और प्रभावों (भौतिक/सामाजिक/सांस्कृतिक/स्वास्थ्य) की पहचान करने और भविष्यवाणी करने में मदद करता है (प्रस्तावित/विस्तार/आधुनिकीकरण/उत्पाद मिश्रण में परिवर्तन आदि) और कैसे पहचाने गए प्रभावों को कम किया जा सकता है।

ईआईए अधिसूचना, 2006 और उसके बाद के संशोधनों के अनुसार, अनुसूची में सूचीबद्ध सभी नई परियोजनाओं या गतिविधियों, अनुसूची में सूचीबद्ध मौजूदा परियोजनाओं या गतिविधियों के विस्तार और आधुनिकीकरण, किसी भी मौजूदा उत्पाद इकाई में उत्पाद–मिश्रण में परिवर्तन से संबंधित परियोजनाओं को प्राधिकरण वर्ग से पर्यावरणीय मंजूरी की आवश्यकता होती है। पर्यावरण मंजूरी देने से पहले कोई गतिविधि शुरू नहीं हो सकती है।

2006 के पर्यावरण प्रभाव आकलन अधिसूचना ने दो श्रेणियों, अर्थात श्रेणी 'ए' परियोजना और श्रेणी 'बी' में विकासात्मक परियोजनाओं को वर्गीकृत करके पर्यावरण मंजूरी परियोजनाओं को विकेंद्रीकृत किया है। श्रेणी 'ए' परियोजनाओं को केंद्रीय स्तर पर विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति (ईएसी) द्वारा और श्रेणी 'बी' परियोजनाओं को राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति (एसईएसी) द्वारा अनुमोदित किया जाता है। श्रेणी 'बी' प्रक्रिया को मंजूरी प्रदान करने के लिए राज्य स्तरीय पर्यावरण प्रभाव आकलन प्राधिकरण और राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति का गठन किया जाता है।

पर्यावरण मंजूरी प्रक्रिया में शामिल किए गए कदम

ईआईए एक प्रक्रिया है जिसमें निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण चरण शामिल हैं, स्टेज (1) स्क्रीनिंग, स्टेज (2) – स्कोपिंग – अर्थात विस्तृत पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन अध्ययन करने के लिए संदर्भ (टीओआर) की शर्तों को निर्धारित करते हुए, स्टेज (3) –पब्लिक इंटरएक्टिव संबंधित राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड/समिति, और स्टेज (4) द्वारा संचालित किया जाना है – विशेषज्ञ मूल्यांकन समितियों (ईएसी)/राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यांकन समितियों (एसईएसी) द्वारा। हालांकि, ईआईए प्रक्रिया विभिन्न चरणों के बीच बातचीत के साथ चक्रीय है।

- स्टेज (1) स्क्रीनिंग, निवेश, स्थान और प्रकार के विकास के पैमाने के लिए प्रस्ताव की जांच की जाती है और यदि परियोजना को वैधानिक मंजूरी की

आवश्यकता होती है। श्रेणी 'ए' परियोजनाओं को अनिवार्य पर्यावरणीय मंजूरी की आवश्यकता होती है और इस प्रकार वे स्क्रीनिंग प्रक्रिया से नहीं गुजरते हैं। श्रेणी 'बी' परियोजनाएं स्क्रीनिंग प्रक्रिया से गुजरती हैं और उन्हें दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है। श्रेणी 'बी' 1 परियोजनाएं (अनिवार्य रूप से ईआईए की आवश्यकता होती है)। श्रेणी 'बी'–2 परियोजनाओं (ईआईए की आवश्यकता नहीं है)। इस प्रकार, श्रेणी ए परियोजनाएं और श्रेणी 'बी'–1, परियोजनाएं पूरी ईआईए प्रक्रिया से गुजरती हैं जबकि श्रेणी 'बी'–2 परियोजनाओं को पूर्ण ईआईए प्रक्रिया से बाहर रखा गया है। स्क्रीनिंग मूल रूप से उन परियोजनाओं को स्क्रीन करती है जिन्हें ईआईए प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं होती है।

- स्टेज (2) स्कोपिंगः संभावित प्रभाव, प्रभावों का क्षेत्र, शमन संभावनाएं और प्रस्ताव की निगरानी के लिए आवश्यकता को स्कोपिंग के तहत मूल्यांकन किया जाता है। स्कोपिंग स्टेज में साइट क्लीयरेंस शामिल है। किसी अलग साइट की मंजूरी की आवश्यकता नहीं है।

- स्टेज (3) सार्वजनिक परामर्शः सभी हितधारकों सहित परियोजना स्थल के करीब रहने वाले सार्वजनिक को ड्राफ्ट ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद सूचित किया जाना चाहिए। सभी श्रेणी 'ए' और श्रेणी 'बी'–1 परियोजनाएं या गतिविधियां सार्वजनिक परामर्श का कार्य करेंगी, केवल कुछ को छोड़कर, जैसा कि ईआईए अधिसूचना और बाद के संशोधनों में वर्णित है। सार्वजनिक परामर्श में सामान्यतया दो घटक होंगे, जिसमें साइट पर या इसके निकटवर्ती जिले में एक जन सुनवाई शामिल है, परियोजना या गतिविधि के पर्यावरणीय पहलुओं में हिस्सेदारी से संबंधित स्थानीय प्रभावित व्यक्तियों की चिंताओं का पता लगाने और/या संबंधित व्यक्तियों से लिखित में प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

- स्टेज (4) मूल्यांकनः मूल्यांकन का अर्थ है पर्यावरणीय मंजूरी के लिए संबंधित नियामक प्राधिकरण को आवेदन की विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति या राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति द्वारा विस्तृत जांच और ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट जैसे अन्य दस्तावेजों, सार्वजनिक सुनवाई सहित सार्वजनिक परामर्शों के परिणाम, आवेदक द्वारा प्रस्तुत किए गए।

ईआईए अधिसूचना, 2006 तहत सामान्य शर्तें

ईआईए अधिसूचना, 2006 के तहत सामान्य स्थिति के अनुसार, श्रेणी 'बी' में निर्दिष्ट किसी भी परियोजना या गतिविधि को श्रेणी 'ए' के रूप में माना जाता है, अगर परियोजना की सीमा से 5 किमी के भीतर में स्थित है (i) वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 के तहत अधिसूचित क्षेत्र (ii) केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा समय–समय पर अधिसूचित रूप से प्रदूषित क्षेत्र, (iii) अधिसूचित इको–सेंसिटिव क्षेत्र, (iv) अंतर–राज्य सीमाएँ और अंतरराष्ट्रीय सीमाओं। इन परियोजनाओं को केंद्रीय स्तर पर EAC द्वारा मूल्यांकन किया जाता है।

ईआईए अधिसूचना, 2006 तहत परिवेश पोर्टल और निर्धारित विभिन्न फार्मों

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने पर्यावरण, वन, वन्य जीव और तटीय विनियमन क्षेत्र मंजूरी मुकदमों के लिए इंटरैक्टिव, सदाचारी और पर्यावरणीय एकल–खिड़की हब द्वारा 'परिवेश' – प्रो–एक्टिव और उत्तरदायी सुविधा नाम से एकल–खिड़की एकीकृत पर्यावरण प्रणाली शुरू की है। यह प्रणाली पूरी तरीके से स्वचालित और समयबद्ध तरीके से निर्णय की सूचना देने वाली प्रक्रिया और सुविधा है।

परियोजना की प्रकृति के अनुसार, विभिन्न प्रकार के प्रोजेक्ट आवेदक द्वारा परवेश पोर्टल पर भरे जा सकते हैं, जैसा कि नीचे वर्णित है:

- फॉर्म 1 – संदर्भ की शर्तें (टीओआर) के लिए आवेदन
- प्रपत्र 1 ए – अनुसूची के मद 8 के तहत सूचीबद्ध निर्माण परियोजनाओं के लिए आवेदन

- फॉर्म 2 – पर्यावरणीय मंजूरी के लिए आवेदन
- फॉर्म 3 – टीओआर के संदर्भ में संशोधन के लिए आवेदन
- फॉर्म 4 – पर्यावरण मंजूरी में संशोधन के लिए आवेदन
- फॉर्म 5 – संदर्भ की शर्तों (टीओआर) की वैधता का विस्तार
- फॉर्म 6 – पर्यावरणीय मंजूरी की वैधता का विस्तार
- फॉर्म 7 – पर्यावरणीय मंजूरी का हस्तांतरण
- फॉर्म 8 – संदर्भ की शर्तों (टीओआर) का हस्तांतरण

ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट की तैयारी

परियोजना प्रस्तावक को पर्यावरणीय मंजूरी प्राप्त करने के लिए एक विस्तृत पर्यावरणीय प्रभाव आकलन/पर्यावरण प्रबंधन योजना (ईआईए/ईएमपी) तैयार करने की आवश्यकता है। पर्यावरणीय मंजूरी के अनुसार, विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति/राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यांकन समिति पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आवश्यक शर्तों को निर्धारित करती है।

ईआईए अधिसूचना, 2006 तहत निर्धारित समय सीमा

पर्यावरण मंजूरी प्रक्रिया के तहत विभिन्न गतिविधियों के लिए ईआईए अधिसूचना, 2006 के तहत समय रेखाएं निर्धारित की गई हैं। फलस्वरूप, टीओआर को पूर्ण आवेदन की स्वीकृति के तीस दिनों के भीतर परियोजना प्रस्तावक को अवगत कराया जाना है। इसके बाद, जारी किए गए टीओआर के अनुसार, परियोजना प्रस्तावक को टीओआर में उल्लिखित शर्तों का पालन करना आवश्यक है जिसमें अन्य बातों के साथ–साथ शामिल हैं: (i) एक सत्र (तीन महीने) के लिए बेस–लाइन डेटा का संग्रह, (ii) जनपरामर्श आयोजित करना, (iii) ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट और अन्य अध्ययन आदि की तैयारी, और उसके बाद अंतिम ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट सार्वजनिक परामर्श के बाद और सभी संबंधित दस्तावेजों के साथ मंत्रालय को प्रस्तुत करें।

सार्वजनिक परामर्श के बाद अंतिम ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट प्राप्त होने पर, परियोजना को पारदर्शी तरीके से साठ दिनों के भीतर ईएसी/एसईएसी द्वारा मूल्यांकन किया जाना है। इसके बाद, ईएसी/एसईएसी उपयुक्त सिफारिशें करता है और मंत्रालय/एसईआईएए पर्यावरणीय मंजूरी के संबंध में उचित निर्णय लेता है। ईआईए अधिसूचना, 2006 के तहत प्रावधानों के अनुसार, इस निर्णय को ईएसी/एसईएसी की सिफारिशों की प्राप्ति के पैंतालीस दिनों के भीतर प्रस्तावक को सूचित किया जाना है। प्राधिकरण को पूर्ण ईआईए/ईएमपी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद पर्यावरणीय मंजूरी देने के लिए एक सौ पांच दिनों की आवश्यकता होती है।

पर्यावरणीय निगरानी और अनुपालन क्रियाविधि

पर्यावरणीय मंजूरी परियोजना के भीतर और आसपास प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने और शामिल करने के लिए कई विशिष्ट और सामान्य परिस्थितियों को निर्धारित करने के लिए दी गई है। मंत्रालय बेंगलूरु, भुवनेश्वर, भोपाल, शिलाँग, लखनऊ, चंडीगढ़, चेन्नई, देहरादून, नागपुर और रांची में स्थित अपने दस क्षेत्रीय कार्यालयों के माध्यम से, विभिन्न क्षेत्रों की परियोजनाओं में विभिन्न परियोजनाओं की पर्यावरणीय मंजूरी में निर्धारित शर्तों की निगरानी करता है। हाल ही में, मंत्रालय ने और अधिक एकीकृत क्षेत्रीय कार्यालयों को अधिसूचित किया है, जो जयपुर, गांधी नगर, विजयवाड़ा, रायपुर, हैदराबाद, शिमला, कोलकाता, गुवाहाटी, और जम्मू में स्थित हैं, ताकि मंत्रालय के शासनादेशों से संबंधित परिणामों को बेहतर तरीके से प्राप्त किया जा सके समय पर और प्रभावी तरीके से।

डिफॉल्टर परियोजना के प्रस्तावक के खिलाफ समय पर कार्रवाई सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी कदम के लिए निर्धारित शर्तों के अनुपालन के बारे में निगरानी तंत्र भी निर्धारित किया गया है। ईआईए अधिसूचना, 2006 के

तहत, परियोजना प्रस्तावक के लिए पर्यावरण मंजूरी की निर्धारित शर्तों के संबंध में अर्ध–वार्षिक अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करना अनिवार्य है और ऐसी सभी अनुपालन रिपोर्ट सार्वजनिक दस्तावेज होंगी और इस तरह की अनुपालन रिपोर्ट संबंधित नियामक प्राधिकरण की वेबसाइट पर भी प्रदर्शित की जाएगी।

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड़, नई दिल्ली-110003